लेखक की अन्य रचनाएँ

लोक-साहित्य

हिन्दी १ धरती गाती है २ धीरे बहो गंगा ३ बेला फूले आधी रात ४ बाजत आवे ढोल ५ चित्रों में लोरियाँ।

पंजाबी १ गिद्धा २ दीवा बले सारी रात।

उर्दू १ मैं हूँ खाना बदोश २ गाये जा हिन्दुस्तान।

अंग्रेजी Meet My People

कविता

हिन्दी बंदनवार।

पंजाबी १ धरती दीयाँ वाजाँ २ मुढ़का ते कणक ३ बुड्ढी नहीं धरती ४ गड्डियाँ वाले।

कहानियाँ

हिन्दी १ चट्टान से पूछ लो २ चाय का रंग ३ नये धान से पहले ४ सड़क नहीं बन्दूक।

पंजाबी १ कुंग पोश २ सोना गाची ३ देवता डिग पया।

उर्दू १ नये देवता २ और बाँसुरी बजती रही।

उपन्यास

हिन्दी १ रथ के पहिये २ कठपुतली ३ ब्रह्मपुत्र।

निबन्ध

हिन्दी १ एक युग एक प्रतीक २ रेखाएं बोल उठीं ३ क्या गोरी क्या साँवरी।

रेखाचित्र

हिन्दी कला के हस्ताक्षर।

आत्मकथा

हिन्दी चाँद सूरज के बीरन।

दूध-गाछ

देवेन्द्र सत्यार्थी



राजकमल प्रकाशन
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

अपने उस महान् गीत के नाम
जो भारतीय संगीत के 'रंगीले रसिया' की चौखट पर
सर पटक कर रह गया !

अवसर मिला। हर बार शास्त्रीय संगीत के माध्यम से परम शान्ति का आनन्द लाभ हुआ। कभी आत्मा की ज्योति दृष्टिगोचर होती तो कभी वेदना के सात पाताल में उतर जाता जहाँ आध्यात्मिक तत्त्वकी अनुभूति होने दर न लगती।

कुछ मुड़कर मन में चाह उठती कि संगीत मन्दाकिनी के प्रवाह के साथ-साथ चल पड़ूँ, और इस चित्रपट पर एक कथा गढ़ता चला जाऊँ। इसमें सकोच रहता था यही कि शास्त्रीय संगीत में मात्र निष्ठा रखकर ही क्से कथा-शिल्प का निर्वाह कर पाऊँगा जिसका आधार तत्त्व शास्त्रीय संगीत हो।

ऐसे लोगों की बातें भी सुनने को मिलतीं जिनकी शास्त्रीय संगीत में तनिक भी निष्ठा नहीं थी। ऐसे लोग या देख का रेडियो की सुई घुमाकर झट दूसरा स्टेशन ढूँढने लगते थे जहाँ से हल्का फुलका संगीत आ रहा हो।

२

सन् १९६२ में जब मैं लाहौर में था सर्वप्रथम रेडियो खरीदकर लाया तो लगा कि मौज हो गई। घर बैठ शास्त्रीय का संगीत सुनने का इससे अच्छा उपाय दूसरा न था।

एक रात जब मैं दत्तचित्त होकर मियाँ के मल्हार समाचार बियाविन की नाट्य सिम्फ़नी सुन रहा था सहसा मैंने देखा कि रेडियो बन्द हो गया।

यह पता चलने दर न लगी कि मेरी पत्नी ने हाथ बढ़ाकर रेडियो का स्विच बन्द कर दिया था।

श्रीमतीजी का यह तर्क था जो चीज समझ में नहीं आती उसे सुनने से क्या लाभ? यह सिद्ध करना आसान न था कि मैं इसे समझने की क्षमता रखता हूँ।

मुझे याद है, बिथोविन के सम्बन्ध में मैंने श्रीमतीजी से बहुत-कुछ कह डाला और फिर बलपूर्वक कहा, यह थी 'नाइन्थ सिम्फोनी'—बिथोविन की अमर रागिनी।

मैंने बताया कि बिथोविन ने अपनी अन्तिम वसीयत में ये शब्द लिखे थे :

जो कोई भी मुसीबत का मारा भाग्यहीन व्यक्ति हो, उसे यह जानकर धैर्य रखना चाहिए कि मैं उस जैसा ही अभागा और विपत्ति में सहायता करने वाला उसका प्रिय बन्धु और सखा हूँ।

मैंने यह भी बताया, बिथोविन सत्तावन वर्ष की आयु में ही चल बसा था, जब रोग उसके रोम-रोम में घर कर गया था। सिर के रूखे घने बाल सफेद हो गए थे। माथे पर गहरी झुर्रियों ने जाल बुन डाला था। चेहरे का यह हाल था कि ऊपर का मोटा होंठ नीचे के होंठ को दाबे रखता था। बेढंगी-सी ठोडी और गालों की उभरी हुई हड्डियों ने नाक-नक्शा बुरी तरह बिगाड़ डाला था। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि बिथोविन की आँखों की अद्भुत चमक भी दब गई हो।

मैं देख रहा था, श्रीमती जी को मेरी बातों में तनिक भी रस नहीं आ रहा। मैंने कथा को आगे बढ़ाया, बिथोविन जीवन भर विवाह न कर सका। निपट एकाकी, कानों से बहरा।

श्रीमतीजी ने व्यंग्य का बाण छोड़ा, पत्नी होती भी तो वह कौन-सा उसे प्रेम कर सकता था? कलाकारों को तो कला ही प्रिय होती है न!

यह बात नहीं! मैं कथा को बढ़ाते चला, २६ मार्च १८२७ के दिन बिथोविन की मृत्यु हुई। पर २४ मार्च को उसने अपने दो साथियों से कहा था—तालियाँ बजाओ! शीघ्र ही इस दुःखान्त नाटक का पटाक्षेप होने जा रहा है।'

श्रीमतीजी ने कहा, 'मृत्यु तो रुकती नहीं। कलाकार का लिहाज भी कब करती है मृत्यु।

अवसर मिला। हर बार शास्त्रीय संगीत के माध्यम से परम शान्ति का आनन्द लाभ हुआ। कभी आशा की ज्योति दृष्टिगोचर होती तो कभी वेदना के सात पाताल में उतर जाता जहाँ आध्यात्मिक तत्त्व की अनुभूति होते देर न लगती।

मुड़ मुड़कर मन में चाह उठती कि संगीत मन्दाकिनी के प्रवाह के साथ-साथ चल पड़ूँ और इस चित्रपट पर एक कथा बहता चला जाऊँ। इसमें संकोच रहा तो यही कि शास्त्रीय संगीत में मात्र निष्ठा रखकर ही कैसे कथा-शिल्प का निर्वाह कर पाऊँगा जिसका आधार तत्त्व शास्त्रीय संगीत हो।

ऐसे लोगों की बातें भी सुनने को मिलतीं जिनकी शास्त्रीय संगीत में तनिक भी निष्ठा नहीं थी। ऐसे लोग भी देखे जो रेडियो की सुई घुमाकर झट दूसरा स्टेशन ढूँढ़ने लगते थे जहाँ से हल्का फुल्का संगीत आ रहा हो।

२

सन १९४२ में जब मैं लाहौर में था सर्वप्रथम रेडियो खरीदकर लाया तो लगा कि मौज हो गई। घर बैठे दस-देस का संगीत सुनने का इससे अच्छा उपाय दूसरा न था।

एक रात जब मैं दत्तचित्त होकर विश्व के महान् संगीतकार बिथोविन की नाइन्थ सिम्फोनी सुन रहा था सहसा मैंने देखा कि रेडियो बन्द हो गया।

यह पता चलते देर न लगी कि मेरी पत्नी ने हाथ बढ़ाकर रेडियो का स्विच बन्द कर दिया था।

श्रीमतीजी का यह तर्क था जो आज समझ में नहीं आता उसे सुनने से क्या लाभ? यह सिद्ध करना कठिन था कि मैं इसे समझने की क्षमता रखता हूँ।

मुझे याद है बियाविन के सम्बन्ध में मैंने श्रीमतीजी से बहुत-कुछ कह डाला और फिर बलपूर्वक कहा 'यह थी नाइन्थ सिम्फोनी'—बियाविन की अमर रागिनी।

मैंने बताया कि बियोविन ने अपनी अन्तिम वसीयत में ये शब्द लिखे थे

जो कोई भी मुसीबत का मारा भाग्यहीन व्यक्ति हो उसे यह सोचकर धैर्य रखना चाहिए कि मैं उस जैसा ही अभागा और विपत्ति में सहायता करने वाला उसका प्रिय बंधु और सखा हूँ।

मैंने यह भी बताया बियोविन सत्तावन वर्ष की आयु में ही चल बसा था जब रोग उसके रोम रोम में घर कर गया था। सिर के रूखे घने बाल सफेद हो गए थे। माथे पर गहरी झुर्रियों ने जाल बुन डाला था। चेहरे का यह हाल था कि ऊपर का मोटा होंठ नीचे के होंठ को ढाँप रखता था। लम्बी-सी ठोडी और गालों की उभरी हुई हड्डियों ने नाक-नक्शा बुरी तरह बिगाड़ डाला था। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि बियोविन की आँखों की अद्भुत चमक भी दब गई हो।

मैं देख रहा था श्रीमती जी को मेरी बातों में तनिक भी रस नहीं आ रहा। मैंने कथा को आगे बढ़ाया बियोविन जीवन भर विवाह न कर सका। निर्धन एकाकी कानों से बहरा।

श्रीमतीजी ने व्यंग्य का बाण छोड़ा पत्नी होती भी तो वह कौन सा उसे प्रेम कर सकता था? कलाकारों को तो कला ही प्रिय होती है न!

यह बात नहीं। मैं कथा को वहाँ से चला २६ मार्च १८२७ के दिन बियाविन की मृत्यु हुई। पर २४ मार्च को उसने अपने दो साथियों से कहा था—'तालियाँ बजाओ। शीघ्र ही इस दुःखान्त नाटक का पटाक्षेप होने जा रहा है।

श्रीमतीजी ने कहा, मृत्यु तो रुकना नहीं। कलाकार का लिहाज भी करे पर मरती है मृत्यु।

मैंने कहा — "बिथोविन की माँ उसके बाल्यकाल में ही चल बसी थी। पिता को घर की चिन्ता नहीं रहती थी। आइमा ने सदा बिथोविन से घृणा ही की। अब यह तो बिथोविन का दोष न था कि वह देखने में असुन्दर था। छोटा और स्थूल शरीर तो प्रकृति की देन था। जिस रोग ने बेचारे बिथोविन की श्रवण शक्ति छीन ली उसने २६ वर्ष की आयु में ही धावा बोल दिया था। उसका व्यवहार रूखा और अशिष्ट था। इसका एक कारण यही था कि अपनी प्रतिभा और रचना शक्ति का पूर्ण ज्ञान था और आलोचकों के मारे उसकी सदा नाक में दम रहता था जो उसके संगीत को नीरस और निरर्थक बताना ही धर्म मान बैठे थे। आज दूसरी बात है। संसार के महान संगीतकारों में बिथोविन का नाम लिया जाता है। वियना में जहाँ बिथोविन की मृत्यु हुई थी उसे समाधि देने के लिए बीस हज़ार लोगों का जमघट हो गया था। उसकी जीवनी में यह प्रसंग भी आता है कि मृत्यु के पश्चात उसकी खुली हुई आँखें एक अपरिचित व्यक्ति ने बन्द कर दी थीं।

यह कहानी श्रीमतीजी को उतनी नीरस नहीं लग रही है मैं देख रहा था। मैंने बताया — "आज से पन्द्रह वर्ष पहले की बात कहता हूँ। २६ मार्च १९२७ को यहाँ लाहौर में भी यूरोप और एशिया के अनेक नगरों के समान ही बिथोविन की मृत्यु शताब्दी मनाई गई थी और उस समय बिथोविन की यह नाइन्थ सिम्फनी भी बजाई गई थी जिसे तुमने आज रेडियो का स्विच दबाकर बन्द कर दिया।"

श्रीमतीजी बोलीं — "अपराधिनी को क्षमा किया जाय। मैं यह कथा तो नहीं जानती थी।"

मैंने बलपूर्वक कहा — "संगीत का तो यही जादू है। देशी संगीत हो चाहे विदेशी उसमें देश और जाति के भेद नहीं रहते।"

उस दिन के बाद मुझे कई बार लगा जैसे बिथोविन से मेरा मानसिक परिचय और भी घनिष्ठ हो गया।

'दूध-गाछ' की रचना करते समय जब कलम से अनुगमन कर

क्या के नयनाभिराम सागर तट पर मुझे स्वयम्भू का कल्पना चित्र बनाया था उसमें विमोचिन की रूप रेखा का कितना हाथ रहा यह क्या कहूँ ?

३

दूध-गाछ' नाम का भी एक इतिहास है। सन्थाली भाषा में 'तोमा' दूध को कहते हैं और गाछ के लिए 'दारे' शब्द चलता है। 'तोमा दारे' का सन्थाली प्रयोग ही दूध-गाछ की मूल प्रेरणा है। सन्थाली भाषा में तोमा-दारे माँ का प्रतीक है। इस सन्थाली प्रतीक को केरल की कलामयी धरती पर स्थापित करने की जिम्मेदारी मेरी है। माता देवी की अति पुरातन प्रतिमा मोहेनजोदड़ो से प्राप्त सिन्धु सभ्यता के अवशेषों में विशिष्ट स्थान रखती है। उसके बाद की पुरातत्व सामग्री में मातादेवी कभी पद्माक्षी बनकर सामने आती हैं कभी किसी अन्य नाम ही रूप में। 'दूध-गाछ' में मातादेवी अथवा पद्माक्षी की मूल प्रेरणा को आधार बनाते हुए कलाकार की सृजन शक्ति को प्रतीक बनाया गया है।

केरल के साथ मेरा परिचय अठारह वर्ष पुराना है। दो वर्ष पूर्व दोबारा केरल जाने की आवश्यकता हुई, क्योंकि प्रथम परिचय बहुत मधुर लगा।

'दूध-गाछ' की कहानी केरल और बम्बई के बीच घूमती है। इस में प्रश्न उठाया गया है कि शास्त्रीय संगीत का बहुजन हिताय उपयोग में लाने की दिशा में हम क्या कर रहे हैं ?

मैंने इसे महाकाव्य मानकर लिखा है भले ही मेरा माध्यम पद्य नहीं गद्य है। कथा के पीछे गहरा पड़ता जाता है आधार चित्र जो कला का दर्पण है। करुणा तथा उत्कण्ठा के स्वर विविध व्यापक और तीव्र हुए बिना नहीं मानते। जीवन की आन्तरिक परतों तथा मनःस्थितियों में कहाँ कितना समझौता चल रहा है ! परम्परा का दमन नैतिकता

की माँग, संगीत में गुरु-गौरव की प्रतिष्ठा, बहुजन हिताय की पुकार, संगीतकार कला और परम्परा पर दृष्टि रखे या सेठ का स्वामी मानकर कला को रसातल में जाने दे? ऐसे-ऐसे अनेक प्रश्न जहाँ-तहाँ उभरते हैं।

८

पद्य के बारे में मेरी ऐसी धारणा है कि उसकी चरम सीमा वहाँ है जहाँ वह गद्य के समीप पहुँच जाता है। पद्य गद्य के समीप जाने पर सार्थक बनता है तो यह भी कह सकते हैं कि गद्य भी पद्य के समीप जाने पर ही सार्थक बनता है। उपन्यास गद्य में लिखा हुआ महाकाव्य है, मैं इस स्वीकृति का पक्षधर रहा हूँ। मुझे गद्य रचना तो अभीष्ट था ही। फिर भी इसे पद्य के समीप ले जाने का मोह बराबर बना रहा। गद्य पग-पग पर पद्य से जा टकराया, शायद कहीं-कहीं यह स्थिति दिखाई दे। इस मोह से बचने का यत्न करता भी तो कैसे, जब मन में यह बात बैठ गई हो कि मैं उपन्यास नहीं महाकाव्य लिख रहा हूँ।

निष्ठा में सबकी ऐसा काम नहीं है, यह मानकर चला हूँ। पर नारी का स्थान भी नहीं मिला, यह कैसे कहूँ?

'दूब-गाछ' की अपनी दुनिया है। मानवीय मूल्यों पर मेरी दृष्टि रही है, फिर भी पाठकों को इससे सन्तोष मिलेगा, नहीं जानता।

९

शायद आप कहें, 'दूब-गाछ' तो अधूरा है।

शायद आप कहें, बात नहीं बनी।

शायद आप कहें, यह कहाँ का उपन्यास है?

तब मैं विनम्र भाव से यही कहूँगा, इसे एक बार फिर पढ़िए और अब की बार इसे 'महाकाव्य' मानकर पढ़िए, परखिए।

हो सकता है, दोबारा पढ़ जाने पर भी आपकी यह धारणा बनी रहे कि 'दूब-गाछ' नासमझ की रचना है। तब मैं कहूँगा—

आइए हम मिलकर इस युग के महान् चित्रकार पाब्लो पिकासो की इस विचारधारा पर मनन करें

कला साक्षात् मनुष्य है—उसकी ही आत्मा है—

विश्व की कोई मशीन कलाकार को उत्पन्न नहीं कर सकती।

एक चित्र समाप्त हो सकता है परन्तु एक महान् चित्र सदा असमाप्त होता है। एक चित्रकार अपने एक चित्र में अपने को समाप्त कर देता है परन्तु दस वर्ष के पश्चात् कोई अन्य कलाकार नई सम्भावनाएं देखकर नया चित्र बना सकता है। एक महान् चित्र में सदा एक प्रकार की अपूर्णता रहती है।

जहाँ कलाकार समाप्त करता है दर्शक वहीं से प्रारम्भ करता है।[1]

चित्र देखकर जो काम दर्शक को करना होता है पुस्तक पढ़कर वही काम पाठक को करना होता है।

काव्यात्मक सत्य का अंचल थामे बिना उपन्यासकार ऐतिहासिक चेतना की किसी मंजिल पर नहीं पहुँच पाता। कवि-कर्म अथवा कथा-शिल्प पर मारिआक (Mauriac) की बात ठीक उतरती है 'हम कभी वह पुस्तक नहीं लिख पाते जिसकी हम इच्छा करते हैं कृति हमें वही प्राप्त होती है जिसके हम योग्य होते हैं।'

'दूध-गाछ' को आप एक उपन्यास ही मानें तो मुझे आपत्ति नहीं होगी। इसमें यदि आपको जहाँ-तहाँ मधुर-से चित्र नज़र आएं और आपकी कल्पना अथवा सूझ-बूझ उन्हें थाम ले सके तो मेरा अहोभाग्य।

प्राचीन भारतीय परम्परा के अनुसार जब दोहद के अवसर पर कोई सुन्दरी अशोक वृक्ष के मूल पर पदाघात करती थी तो उसकी डाली डाली लाल-लाल फूलों से लद जाती थी। पाठक का सौन्दर्य-बोध 'दूध

---

१ पाब्लो पिकासो 'कला का मूल्य', 'साहित्य परिचय' [सरस्वती प्रेस इलाहाबाद] दिसम्बर १९५५ से उद्धृत।

गाछ में नूतन सम्भावना और उपलब्धि के फूल खिलायेगा ऐसा मेरा विश्वास है।

सुपुत्री कविता वसुमती का योग-दान निरंतर उपलब्ध रहा जिसके सहारे यह दूध-गाछ पनप सका।

सर्वश्री राजेन्द्रसिंह बेदी बलराज साहनी रामचन्द्र शर्मा महारथी क्षेमचन्द्र सुमन युगजीत नवलपुरी ठाकुर पुँछी और मलयालम कथा शिल्पी श्यामलालयम् का आभारी हूँ जिनके मूल्यवान सुझावों से 'दूध गाछ' में प्राण प्रतिष्ठा हो सकी।

'कल्पना' —देवेन्द्र सत्यार्थी
५-सी/४६ रोहतक रोड नई दिल्ली
१५ मई १९५८

দুধ-গাছ

माँ ही नहीं, कलाकार भी दुख
गाता है। अनुभूति के लिए
चिरन्तन सत्य को भी प्रसव
वेदना तो सहनी ही पड़ती है।
पुरानी सूक्ति है हर समय
हर जगह उपस्थित नहीं रह
सकते थे भगवान् इसीलिए
उन्होंने माताएँ बनाईं। माँ ही
महान् है। शिशु हो चाहे
कलाकृति, दोनों को ही प्यार
दुलार चाहिए। कलाकार को
माँ बनना ही पड़ता है।



दो परछाइयाँ



एक

“भीतर जाकर रेल-बाबू से पूछो, गाडी आने में कितनी देर है।”

एक पचास-वर्षीय विशालकाय पुरुष ने घुटे सिर पर मुट्ठी भर सानी और दो बित्ता लम्बी शिखा को झटका देते हुए कहा। “अभी पूछ कर आता हूँ गुरुदेव!” कहते हुए एक युवक लम्बे घुँघराले बालों में हाथ से कंघी करता स्टेशन घर की ओर चल दिया।

वयोवृद्ध पुरुष विचारधारा में खो गया।

यह है वरकला—त्रिवेन्द्रम् से तीस मील उत्तर और काइलोन से चौदह मील दक्षिण। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक उत्तर भारत से आने वाले यात्रियों के लिए एर्णाकुलम् से काइलोन तक जल-मार्ग ही सुगम था। अब तो रेल का युग है। तिन्नावेली से काइलोन तक पाँच सुरंगों में से होकर गुजरती है रेलगाडी। एक सुरंग दो हज़ार आठ सौ फुट लम्बी है। पाषाण की कठोर विराट दीवार में रास्ता पा लेना कम जोखिम का काम नहीं था। पीछे काइलोन से त्रिवेन्द्रम् तक भी रेल मार्ग बन गया। मलयाचल अथवा मलयगिरि के नयनाभिराम दृश्य देखने और मन्द-सुरभित मलयानिल का आनन्द लेने यात्री वरकला धाम पहुँचते हैं।

जनार्दन स्वामी के मन्दिर के कारण वरकला का एक नाम जनार्दनपुरम् है। वरकला धाम को उत्तर भारत के यात्री ‘दक्षिण काशी’ भी कहते हैं। त्रिवेन्द्रम् में पद्मनाभ के मन्दिर का माहात्म्य है। नारकोइल

और चिदम्बरम् के मन्दिर भी दर्शनीय हैं। मदुरा के मीनाक्षी मन्दिर का सहस्र-स्तम्भ-मण्डप और कुम्भकोणम् के रामस्वामी मन्दिर की कला अद्वितीय है। दक्षिण में कन्याकुमारी की यात्रा तो और भी आवश्यक है। कन्याकुमारी में धरती के अन्तिम छोर पर हम भारत माता के चरणों की कल्पना करते हैं। पूर्व सागर, पश्चिम सागर और हिन्द सागर का पावन संगम! सागर से सूर्य उदय होता है और इसी में लय हो जाता है।

भारत माता के चरण-प्रान्त में दक्षिणाभिमुख यात्री अपने सम्मुख दक्षिण ध्रुव तक सागर के अनन्त विस्तार की कल्पना में खो जाता है; पीछे की दिशा में उत्तर ध्रुव तक विपुला विजयश्री वसुन्धरा का अखण्ड राज्य उसकी कल्पना को छू-छू जाता है।

कलकत्ता याद बिना शान्ति नहीं। वैसे भी हमारा कलकत्ता दर्शनीय है।

युवक पता लाया गाड़ी छः घण्टा लेट है। धूप के कुहासे में दूर की पहाड़ियाँ खो गई थीं। थोड़ी दूर पर खड़े व्यक्ति की छाया चित्र-से मगन थे।

'बुद्ध पर हो गई गुरुदेव! बढ़ते हुए गंज सिर वाला एक प्रौढ़ आयु का व्यक्ति पास आकर युवक के पुष्पगुच्छ वाला पर प्यार से हाथ फेरने लगा; कहा, शान्ति! मौज हो जायगी अब तो गाविन्दम आ रहा है।

बाल्य-काल के मित्र किसे प्रिय नहीं होते ?" वयोवृद्ध पुरुष ने कहा, "गाड़ी छः घण्टा लेट हो गयी। भगवान् से प्रार्थना करो, गाविन्दम कुशल से सकुशल उतरे। और फिर कुहासे में खुले सूर्य की ओर हाथ उठाकर बोला, सूर्य भगवान्! नित निज दूर से यात्रा यहाँ देवस्थान को आते हैं। आज तो गाविन्दम हो देखने का दिन आया। मैं उस दिन से दिशा ढूँढ़ता—माँ दुर्गा का भव, शिव-पार्वती का भव, आशीष भाव!

और वहाँ आज भी न आया गाविन्दम ? गंज सिर वाला व्यक्ति हँस पड़ा।

'ऐसा मत बोलो !' युवक चुप न रह सका।

इतने में स्टेशन के विश्राम घर की ओर से भिखारी-बालकों का गीत सुनाई देने लगा

अम्मायुम इल्लो पिकल्ला
अच्छनुम इल्लो पिकल्ला
उण्णानुम उडुक्कानुम वल्लतुमिल्ला
[न माता है,
न पिता है,
न अन्न है, न वस्त्र !]
महुन्नु जीवनालम
मौनमाय तोन्निडुन्नु
मन्मनो मुरली तन मधुरगानम
[बुझ-बुझ जाती है जीवन बाती
मौन हो चला,
मन मुरली का मधुर गान !]
जीविता चाप कलिल
पिल्लुकल तकर्न्नता
क्षीरत्तिल कणिक कल चितरिप्पोयिडुम
[जीवन की यह टूटी मटकी
और दूध की बूँदें छिटकीं
इधर उधर वे बिखर गई ।]
एड्ड्ट क्षीर तरु ?
एड्ड्ट क्षीर तरु ?
मझ्डोट्टु पोकुवान कारणिक्कवालुम
[कहाँ अरे वह दूध-गाछ ?
कहाँ अरे वह दूध-गाछ ?
मुझ वहाँ जान दो, मार्ग दिखाओ !]

पास म किसी की आवाज आई, यह रहे संगीताचार्य रम्पदम् और उनका शिष्य नारायन जो मूर्तिकार का पुत्र होकर भी गुरुदेव स संगीत सीख रहा है।

वयोवृद्ध व्यक्ति न प्रशंसा-सूचक दृष्टि से उधर देखा जिधर से यह आवाज आ रही थी पर बात करने वाले व्यक्ति शायद गाड़ी म एक घण्टा लेट होने की सूचना पाकर पास के किसी रेस्तराँ म कॉफी पीने चले गये थ। मैं हूँ संगीताचार्य रम्पदम्! अब मुझे जानते हैं। मेरे साथ मेरे शिष्य को भी पहचानने लगे हैं। यह सोचकर रम्पदम् की आँखें चमक उठीं।

गंज सिर वाला व्यक्ति था बरसना का नया डाक्टरबाबू देशमुख। उसकी मातृभाषा थी मराठी। वह बोला क्या यह बात ठीक है गुरुदेव कि सर्वाधिक सम्मान म ही संस्कृत प्रधान है?

हाँ म सिर हिलाते समय रम्पदम् की मोटी-लम्बी शिखा मौन मग्न अपनी जगह जमी रही पर जब मन म आवेग आया तो झूमने सिर पर शिखा भी नाच उठी।

गदगद हो देख भाता है रम्पदम् मुस्कराये और झूम झूमकर उच्च स्वर म गायन करने लगे

महेन्द्रो मलय सह्य शुक्तिमान ऋक्षपर्वत।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वता ॥

हमारे मन तो कुछ नहीं पड़ा मगर देशमुख जैसे अभाव म मुस्करा पड़ा।

रम्पदम् न समझाया कि मार्कण्डेय पुराण म आया है यह श्लोक जिसम भारत पर्वत की गिनती सात कुल-पर्वतों म करने का उल्लेख है। इसमें पाठ-भाषा संस्कृत है पर हर भाषा म वह एक विशेष पर्वत का नाम हो गया। नारायन म समझाने तक सभी पर्वत मिलकर मलय पर्वत का रूप देते हैं। महानदी गोदावरी और वरुणगंगा के बीच की पूर्वी पर्वत शृंखला का यही भाग किसी समय महेन्द्रगिरि के नाम से

प्रसिद्ध था और उसमें अब भी उस नाम का एक पर्वत है। महेन्द्रगिरि से मलय होते हुए हम सह्याद्रि-श्रेणी की ओर घूम जाते हैं। चौथे पर्वत शुक्तिमान् की भले ही पूरी पहचान नहीं हो पाई, पर इसे गोलकुण्डा का पठार समझना चाहिए क्योंकि इन सात पर्वतों के नाम परिक्रमा के क्रम में आये हैं। सह्याद्रि के उत्तरी छोर से पूर्व दिशा में मिलता हुआ ऋक्ष पर्वत है। उसके पूर्वी छोर से उत्तर में हैं विन्ध्य और पारियात्र।" रुद्रपदम् मेघ-गम्भीर स्वर में बोले, "ये सातों पर्वत हुए हमारे देश के भीतर के कुल-पर्वत। हिमालय और अन्य मर्यादा-पर्वतों से ये भिन्न हैं। कुलगिरि और मर्यादागिरि के विवेचन के लिए देखिए 'श्रीमद्भागवत'। यह सब देव भाषा का प्रसाद है।"

"संस्कृत देवताओं की भाषा है तो क्या प्राकृत चोरों की?" देशमुख हँस पड़ा, "गुरुदेव, ये मेरे शब्द नहीं। पन्द्रहवीं शताब्दी में मराठी सन्त कवि एकनाथ ने ऐसा ही प्रश्न किया था।"

रुद्रपदम् ने देशमुख का स्वभाव समझ लिया था। दिन भर तो देशमुख को डाक घर के काम से अवकाश न मिलता, पर साँझ-सवेरे भेंट हो जाती तो वह रुद्रपदम् को छेड़ने से न चूकता।

हाथ की घड़ी में समय देखते हुए देशमुख हँस पड़ा, "सात पर्वतों की परिक्रमा में तो आपने सात मिनट ले लिए, और वे बेचारे भिखारी बालक गला फाड़-फाड़कर गाते रहे। आपको तो भला क्या रस आया होगा, गुरुदेव!"

शरशरन ने अपनी जेब से एक कागज निकालकर दिखाते हुए कहा, "यह गीत मुझे अच्छा लगा, मैंने उसे उतार लिया।"

"यह तो तुमने बहुत अच्छा किया, शरण!" देशमुख उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरता रहा।

रुद्रपदम् बोले, "यह सदा याद रखो, वत्स, ब्रह्मा से भरत मुनि ने सीखी संगीत विद्या और उन्होंने आगे यह विद्या हमें दी।"

"शास्त्रीय संगीत देवताओं से आया, तो क्या लोक-संगीत चोरों

से ?' दत्तमुख ठठाकर हँस दिया।

रंगप्पा बोले, 'यह मैंने कब कहा ?'

बालचन्द्र दूध-गाछ वाला गीत गुनगुनाने लगा।

'शाबाश !' दत्तमुख ने बालक की पीठ पर थपकी देते हुए कहा, 'गीत की धुन तुमने ठीक पकड़ ली। शास्त्रीय संगीत में मेरी निष्ठा नहीं। मैं तो कहता हूँ कि शास्त्रीय संगीत से हमारे डाक-घर की मुहर ही अच्छी है। हम तो प्रतिदिन इस पर नई तिथि डाल देते हैं।'

रंगप्पा ने मस्तक पर त्योरी न आने दी। मधु-गम्भीर स्वर में बोले, 'हमारी संगीत विद्या मानव जितनी ही प्राचीन है। यह भी कहा गया है—ब्रह्मा ही संगीत के स्रष्टा कहे हैं, पर उनके पुण्य-सम्पर्क से संसार को परिचित कराने का श्रेय महादेव को है। एक स्थल पर यह उल्लेख भी आया है—संगीत के आदि-स्रष्टा स्वयं महादेव ही थे। उत्तर भारतीय परम्परा के अनुसार महादेव के संरक्षण में हैं छः राग—भैरव, मालकौंस, हिण्डोल, दीपक, मेघ और श्री। आरम्भ में यही छः राग थे और तीन रागिनियाँ थीं—टोडी, असावरी और रामकली। फिर तो हमारे पुरखों के हाथों में अनेक राग-रागिनियों के रूप निखरे। दक्षिण में संगीत-विद्या का प्रसार हुआ। कर्णाटकी संगीत का उल्लेख स्वयं भरत मुनि ने अपने 'नाट्य-शास्त्र' में किया है।' और फिर उन्होंने बालचन्द्र की ओर देखकर कहा, 'जो विद्या तुम सीख रहे हो, उसका माहात्म्य भी तुम्हें साथ-साथ समझना चाहिए। हमारे परिवार में बीस पीढ़ियों से संगीत-साधना चली आती है। गोविन्दन इस साधना को बीच से छोड़कर भाग गया। वह जहाँ से आरम्भ करेगा, तुम उससे कहीं आगे हो। बम्बई में उसने पाँच बरस व्यर्थ ही गँवा दिए होंगे। आप तो गए, मैं इसे समझा चुका। और तुम भी समझ लो यह बात। पुरानी सूक्ति है—मनुष्य को यह मानकर काम करना चाहिए कि मृत्यु ने उसके सिर के बाल पकड़ रखे हैं।'

'बात पते की कही ?' दत्तमुख हँस पड़ा। 'कुरुमुळकु (काली मिर्च)

तो मरल की ही उपज है। फिर इस खाते समय मी-सी क्यो ?

तुम्हारा व्यग्य अब मैं सह सकता हूँ। रुद्रपदम् मुस्कराये 'अब मैं इसे दोसे म डाल गए मसाले से अधिक नही समझता।

'छोटा-सा वरकला पाँच-छ मील के घेरे म फला पड़ा है गुरुदेव !

अच्छा तो यही से पान खाना ! वरकला म जो भी एक बार आ गया यही का हो रहा। बीस पीढ़ियों से हमारा परिवार यहाँ आ बसा। कहाँ कुम्भकोणम् और कहाँ वरकला ! घर म अब भी हम तमिल ही बोलते है पर उस पर कहीं-कहीं मलयालम की छाप लग जाती है।

गाविन्दन के नाम का ही लो गुरुदेव ! यह भी तो केरलीय परम्परा में है। तमिलनाड की परम्परा पालत तो गोविन्दम् होता। और देखिए गाविन्दन लौटकर आ रहा है। पिता का यह अधिकार नही कि पुत्र को अपने ही रास्ते पर चलाये। शम्बधरन मूर्तिकार का पुत्र होकर सगीताचाय बनने जा रहा है तो गाविन्दन भी चाहे तो मूर्तिकार बन सकता है।

कुहासा और भी सघन हो गया था। रुद्रपदम् कहना चाहते थे कि यह पूस तो बहुत भला है अपने साथ कुहासे की गठरियाँ बाँधकर लाता है जब चाहता है गठरी खोलकर कुहासा बिखेर देता है।

गाड़ी आने म अब अधिक देर न थी। बहुत स यात्री जमा हो गए थे जो त्रिवेन्द्रम् की ओर जा रहे थे।

रुद्रपदम् बोल देखा शम्ब ! मैं तो एक दिन न बीज रहूँगा न फूल। हाँ मैं खाद बन जाऊँगा। तब मैं कुछ उगा सकूँगा। यही गुरु-शिष्य परम्परा है। धीरे धीरे गुरु लुप्त होकर खाद बन जाता है। और वह बात सदा याद रखो शम्ब ! यही कि मृत्यु ने तुम्हारे सिर के बाल पका दिए हैं और मरने से पहले तुम्हें अपनी साधना का प्रबन्ध पूर्ण कर लेना है।

अभी स मृत्यु की बात इसके कान में क्या डालने लगे गुरुदेव !

देशमुख बोल उठा। अभी तो बाल बच्चा है कोमल फूल है। बस बहुत समझदार है। भिखारी बालक का दूध-गाछ वाला गीत कागज़ पर उतारकर तो इसने सुरुचि दिखाई।

'इसका भविष्य उज्ज्वल है' रुद्रपदम् मुस्कराये 'दक्ष शास्त्र पहला गुरु है माता दूसरा गुरु पिता तीसरा गुरु आचार्य!'

यह सब तो गोविन्दन को समझाना।' देशमुख मुस्कराता हुआ बोला 'जो पहले ही समझदार है उसे क्या समझा रहे हैं? पर एक बात है। गोविन्दन बम्बई में पाँच बरस बिताकर घर आ रहा है। बम्बई भी बहुत-कुछ सिखाती है। मेरी तो जन्म भूमि है बम्बई। मैं बम्बई छाप का चमत्कार जानता हूँ।

रुद्रपदम् बोले 'गोविन्दन को यह समझाने में तो तुम मेरी सहायता कर सकते हो देशमुख बाबू कि जब बीस पीढ़ियों से हमारे परिवार में संगीत-साधना चली आ रही है तो उसे इक्कीसवीं पीढ़ी में भी अवश्य चलना चाहिए!

पहले वह आये तो सही' देशमुख ने चुटकी ली 'क्या खबर इस बार फिर वह चकमा दे जाय!'

गाड़ी के पहियों की घरघराहट गूँज रही थी।

गाड़ी प्लेटफार्म पर रुकी। कुहासे में गाड़ी से उतरते यात्रियों को पहचान सकना सहज न था।

रुद्रपदम् बोले 'वह इस गाड़ी में न उतरा तो मुझसे कहीं अधिक गोविन्दन की माँ को ही दुख होगा!'

इतने में एक युवक आकर रुद्रपदम् के चरणों पर झुक गया।

'तुम आ गए बेटा!' रुद्रपदम् ने गोविन्दन को छाती से लगा लिया।

फिर गोविन्दन ने शंख का गान सुनाया।

रुद्रपदम् बोले 'इनके भी चरण छुओ बेटा! यह हैं हमारे नये डाक्टर बाबू श्री देशमुख!'

गोविन्दन ने झट देवमुख के चरण छू लिये।

तुम्हारी निगा कहाँ गई गोविन्दन? देवमुख चुप न रह सका।

वह बम्बई में रह गई गोविन्दन हँस दिया मेरी निगा बोला मैं बम्बई में रहूँगी।

मुण्डु (वेष्टी) के स्थान पर गोविन्दन ने पैंट पहन रखी थी। उसके सिर पर नई तराश के घुँघराले बाल दिखाई दे रहे थे। उसका यह रूप देखकर रूपदम् के मन पर चोट लगी पर वे कुछ न बोले।

देवमुख बोला मैं तुम्हारे परिवार की यश-गाथा सुन चुका हूँ गोविन्दन! तुम्हारे दादा थे कल्याण सुन्दरम् जो बहुत बड़े संगीताचार्य थे लेकिन तब उनकी धाक थी। तुम्हारे परदादा थे अनन्तनायनम् जिन्होंने दिग्विजय प्राप्त की थी और उत्तर भारत से उन्हें वर्ष में तीन बार निमन्त्रण आता था। बीस पीढ़ियों से तुम्हारे परिवार में संगीत साधना चली आती है।

मैं तो इसे इसी की इच्छा पर छोड़ता हूँ। रूपदम् मुस्कराये 'यह चाहे तो मूर्तिकार बने चाहे कोई और काम सीखे। पढ़ना चाहे पढ़े। बस अपनी माँ की आँखों से ओझल न हो। और फिर वह हुलास में झूम उठे और हाथ उठाकर बोले मेरे गोविन्दन को सुमति दो भगवान्! यह परिवार के दम को आगे बढ़ाए। मातृ देवो भव पितृ देवो भव आचार्य देवो भव।

देवमुख ने गोविन्दन की पीठ पर थपकी देते हुए कहा 'गोविन्दन तो पहले से समझदार होकर आया होगा। बम्बई किसी को व्यर्थ हो अपने पास नहीं रखती। बम्बई बहुत-कुछ सिखाकर वापस भेजती है। और फिर उसने आत्मविभोर रूपदम् की आँखों में झाँककर कहा हम अपनी फीस अवश्य लेंगे गुरुदेव। कहो तो गोविन्दन के कान में वह मन्त्र फूँक दें कि यह बम्बई जाने का नाम न ले और कहो तो दूसरा ही मन्त्र फूँक दें कि यह करकला में तीन दिन भी न काटे और फिर बम्बई का टिकट कटा ले। कहिये गुरुदेव! क्या इच्छा

है? ग्रौर फिर उसने गोविन्दन की ग्रोर देखकर व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा मातृ देवो भव पितृ देवो भव आचार्य देवो भव! देखो गोविन्दन! तुम्हारी माँ हैं श्रीमती अन्नपूर्णा रंगपन्नम् जिनसे तुम शीघ्र ही मिलोगे पिता हैं गुरुस्वामी रंगपन्नम् जो तुम्हारे गुरु न बन सके। ग्रौर तुम्हारे आचार्य हैं डाकबाबू दासमुख जो तुम्हें अपने जैसा ही बाबू बना सकता है!

लाल ग्रौर गोविन्दन एक साथ हँस पड़े ग्रौर गठरियाँ डाल कर कुहासे की सघन चादर में लुकते छिपते प्लेटफार्म से बाहर निकल गए।



दो

माँ ही नहीं, कलाकार भी दूध-साध्य है। अनुभूति के लिए चिरन्तन सत्य की भी प्रसव-वेदना तो सहनी ही पड़ती है। पुरानी सूक्ति है, हर समय, हर जगह उपस्थित नहीं रह सकते थे भगवान्, इसीलिए उन्होंने माताएँ बनाईं। माँ ही महान् है। शिशु हो चाहे कला-कृति, दोनों को ही प्यार-दुलार चाहिए। कलाकार को माँ बनना ही पड़ता है। इसी भाव भूमि पर वरकला के संगीताचार्य रम्पन्म् के पैर टिके हैं।

बहुत दूर से उठती है सागर की बड़ी लहर, जो माँ है, उससे छोटी लहर भाई और उससे भी छोटी लहर परम सुन्दरी बहन। तीनों लहरें एक-दूसरे का निरन्तर पीछा कर रही हैं। रम्पन्म् सब जानते हैं, सब समझते हैं। सागर की लहरों का यह क्रम कहीं पुरानी कथा का स्मरण करा जाता है।

परशुराम ने आवेश में आकर सागर में अपना परशु फेंक दिया था। जितनी दूर परशु गिरा, वहीं तक केरल की धरती निकल आई। केरल की जन्म-कथा पर लोग भले ही विश्वास न करें, यह तो सभी मानते हैं कि वरकला की धरती सागर की देन है। अन्नपूर्णा स्नेहमयी स्वर्ण-वसना वरकला की गेरुआ धरती!

वरकला का एक-न-एक बालक सागर-तट पर रेत के घरौंदे बनाते समय सागर-संगीत का कुछ-न-कुछ पाठ पाता आया है और बड़ा होकर संगीत-मार्ग पर चल पड़ता है। इसी प्रक्रिया द्वारा रम्पन्म् संगीताचार्य बन

इसी ने उनके गुरु कल्याण सुन्दरम् को संगीताचार्य बनाया और इसी ने कल्याण सुन्दरम् के गुरु अनन्तनारायनम् को संगीत की दीक्षा दी थी।

रुद्रपदम् के घुटे सिर पर मुट्ठी भर मोटी और दो बित्ता लम्बी शिखा बात करते समय हिलती-डोलती रहती है। ऊँची-लम्बी-नुकीली नाक एक बार देखकर भुलाई नहीं जा सकती। ऊँचा भरा शरीर छः फुट से निकलता हुआ। चलते हैं तो मानो धरती उनके नीचे दबी जा रही हो। मेघ-गम्भीर स्वर मानो चराचर की अनुभूति से अनुप्राणित। कमर में मुण्डु। कन्धा पर बड़े अनौपचारिक ढंग से डाला हुआ पटका। कुर्ता पहनने का ध्यान तो उसी समय आता है जब सभा में जाना हो।

कला में कोई ऐसा प्रसंग नहीं जिसमें रुद्रपदम् रस न ले सकते हों अथवा जिस पर वे एक मेधावी के समान कुछ बोल न सकते हों। निर्भयता उनकी अभिरुचि है परम्परा और अनुभूति का सन्तुलन उनकी आस्था और कला में चिरन्तन सत्य का मूल्याङ्कन उनका महा-व्रत।

जनार्दन स्वामी के मन्दिर के दक्षिण में है ब्राह्मण-पाड़ा जहाँ रुद्रपदम् का पुश्तैनी घर है पर जब से त्रिवांकुर-नरेश ने रुद्रपदम् के संगीत पर मुग्ध होकर मन्दिर के उत्तर में वरकला की पहाड़ी पर स्थित अपने प्रासाद को संगीत विद्यालय में परिणत कर दिया है और उन्हें वहाँ का आचार्य बनाकर वहाँ उनके रहने की भी व्यवस्था कर दी है रुद्रपदम् ने अपना घर किराये पर उठा रखा है।

जनार्दन स्वामी के मन्दिर और चक्रतीर्थ-सरोवर के बीच होता हुआ रास्ता सागर-तट तक गया है। यह है पाप-नाशम्। यहाँ स्नान करके सब पाप कट जाते हैं। मन्दिर से पाप-नाशम् को जाने वाले रास्ते पर दाएँ हाथ सागर-तट से लगा है धरती का धानी आँचल। इसे देखकर ही कवि ने धरती को सागर-मेखला कहा होगा।

मन्दिर के पूर्व-द्वार के दोनों ओर चला गया है मन्दिर-बाज़ार। यहाँ की दुकानें यात्रियों का मुँह देखती हैं।

मन्दिर-बाज़ार से एक रास्ता पूर्व में धरती के धानी आँचल के साथ

घूमता घामता वरकला रेलवे स्टेशन को जा छूता है।

जहाँ मन्दिर बाजार उत्तर में समाप्त होता है, चक्रतीर्थ सरोवर के उत्तर-पूर्वी कोने से बल खाता मार्ग संगीत विद्यालय तक पहुँचता है, जहाँ वाटिका की चारदीवारी पर कुहनियाँ टेके स्वयम्भू जब चाहें सागर का दर्शन-लाभ कर सकते हैं।

मन्दिर के दक्षिण में, जहाँ बाजार पीछे रह जाता है, मार्ग चक्कर काटता राजकीय विद्यालय के सामने से होकर गगन चौक में पहुँचता है। वहाँ खड़े होकर पश्चिम की ओर देखें तो सागर के साथ-साथ सघन वृक्षावली दीखती है। ध्यान से देखें तो सागर की सुरमई रेखा भी झलक दिखा जाती है। गगन चौक में खड़े होकर, हर प्रकार के [illegible] के लिए अपने कान बन्द करके स्वयम्भू दूर से आते सागर का जय घोष सुनने लगते हैं, जैसे वह अपने शक्तिशाली संगीत के लिए एक सच्चे कलाकार के समान उस क्षण का आह्वान कर रहे हों, जब स्वर-शक्ति अपने प्रभाव से एक नूतन इतिहास लिपिबद्ध कर सकेगा—उस युग का इतिहास जब धरती ने सागर में से बाहर आना आरम्भ किया।

गगन चौक से एक रास्ता रेलवे स्टेशन को जाता है। इस रास्ते पर चौक से आगे तक बड़ी दुकानें और रेस्तराँ हैं। इनमें नव-युग की चमक दमक है, क्योंकि इन पर बाहर से आये यात्रियों के अतिरिक्त वरकला के दानी-मानी परिवारों का वरद-हस्त रहता है।

जिन यात्रियों को वापस जाने की जल्दी होती है, वे गगन चौक के किसी रेस्तराँ से काफी पीकर और इडली-डोसा खाकर झट गाड़ी का समय पूछते हैं और स्टेशन की ओर चल देते हैं, पर जो बहुत जल्दी में नहीं होते वे गगन चौक से सीधे दक्षिण में रेलवे लाइन के उस पार शिवगिरि मठ की यात्रा को चल पड़ते हैं, जहाँ ईळवा जाति के गुरु नारायण स्वामी की समाधि है।

गगन चौक से एक रास्ता वरकला के पवित्र आँचल के शास्त्र-वन को जाता है। स्वयम्भू प्रथम यात्री को यह सलाह देते हैं कि यह

नारायण स्वामी की समाधि से लौटकर इस काजू-वन के सौंदर्य का आनन्द भी अवश्य लें।

किसी-किसी यात्री को तो रम्पम्म् अपने साथ न जाकर वरकला का काजू-वन दिखाते हैं। यहीं से होकर विलाक्कोर सागर-तट पर पहुँचते हैं। यहाँ वरकला का मछुआ-टोला है। विलाक्कोर पहुँचकर लगता है जैसे संसार का सबसे बड़ा मचान मछली मारता हो। एक नाव सागर के भीतर जा रही है। एक नाव अभी अभी आई है। बड़ी-बड़ी मछलियाँ उतारी जा रही हैं। दूर तक मछलियाँ सूखने के लिए फैला रखी हैं। न्यूनतम वेश भूषा अर्थात् एक लंगोटी प्रत्येक संघर्ष से जूझ सकने वाली बलिष्ठ काया और विशेष रूप से उनकी बातचीत से जिसमें ज्वार का सा अनन्त वेग होता है सचमुच ऐसा लगता है कि ये मछुए सच्चे सागर पुत्र हैं।

विलाक्कोर में मछुआ के लिए कभी सागर मन्थन नहीं हुआ। उनके लिए सागर से न कभी अमृत निकला न विष। सागर में निकलती हैं मछलियाँ जो वरकला के पाँच हजार प्राणियों में से इन दो हजार मछुओं का जीवन हैं।

इन सागर-पुत्रों को सागर-संगीत प्रिय है।

रम्पम्म् यात्रियों को यह बताने में नहीं सकुचाते कि विलाक्कोर का वातावरण इन सूख रही मछलियों की हीक से भरा रहता है तो क्या चाँदनी रात में इन सागर-पुत्रों की धुन सुनने वे इधर आ निकलते हैं।

सागर-पुत्रों के मुखिया हैं मुकुन्दन मुत्तु जिन्हें हर कोई मुत्तु बावा कहता है।

एन्तु वर्तमानम् मुत्तु अच्छन्? [क्या समाचार मुत्तु बावा?] रम्पम्म् के मुख से यह अभिवादन सुनते ही मुत्तु बावा खिलखिलाकर हँस पड़ते हैं। मुत्तु बावा ने भी कई भाषाओं के कुछ वाक्य स्मरण कर रखे हैं। रम्पदम् के साथ वाला यात्री आन्ध्र देश का हो तो मुत्तु बावा उसी की भाषा में पूछते हैं 'एमण्डी एमी समाचारम्? [क्या जी क्या

समाचार ?] यात्री तमिल भाषी होतो मुत्तु वावा पूछते हैं एन्नय्या एन्न समाचारम् ? [क्या जी क्या समाचार ?] यात्री कन्नड भाषी हो तो मा मुत्तु वावा को कुछ कठिनाई नहीं होती एनु समाचार ? [क्या समाचार ?] और उत्तर भारत के यात्रियों की आँखों में मानो सागर गम्भीर दृष्टि से झाँकते हुए क्या समाचार ? अथवा क्या खबर ? वायु में उछालते हैं।

और रूपन्मू यात्री की उपस्थिति का सूचन हुए-से वरकला के वर्णन में विभोर हो जाते हैं

'माँ का ममतामयी गोद-सी फैली है वरकला की गेरुआ धरती।

नारियल-गाछ माँ के आँचल पर हरी फुँदकियाँ बन हैं सागर की लहरें अपने क्षण-क्षण चुम्बन में उस पर नीली गाढ़ छोड़ जाती हैं।

मुझे वरकला प्रिय है क्योंकि लालिमा हरीतिमा और नीलिमा के बीच से झाँक रहा है मगर अपनी युग-युग की परम्परा में गेरुआ सुनहरा मन्दिर ध्वज।

ये चारों रंग धरती पर बिखरकर एक नूतन रंग को जन्म देते हैं जिसके सम्मुख मानव अनायास नतमस्तक हो जाता है।

मैं उस दिन की बात सोचता हूँ जब यह गरिक-चरणा धरती माता अगाध-अपार सागर के भीतर से सद्यःस्नाता के समान निकल आई होगी। यह सागर यह धरती और यह जनार्दन स्वामी का मन्दिर युग-युग से अपनी गाथा सुनाते आ रहे हैं।

सागर की ओर से चलती है पछुवा जिसके सुहावने झकोरे वरकला को निहाल कर जाते हैं। प्रत्येक ऋतु-उत्सव और व्रत-भजन में सम्मिलित होती है पछुवा लगता है पछुवा के स्पर्श-मात्र से वरकला की गेरुआ मिट्टी नाच उठी।

सागर अपना शान्ति भाषा में कहता है—यह सब धरती कभी मेरे अन्तराल में था। मेरा मन भी ऐसा ही कुछ कहता है।

सागर के साथ-साथ ऊँचे पत्थर रक्षाम क्यार माइ तीन मील

तक चले गए हैं। लगता है ऐरावतसहित अनेक हाथी निभय हो एक पाँत म आ खडे हैं।

सागर के भीतर तक विशेष रूप से पाप-नाशा पर लाल नुकीली चट्टानें घुस आई हैं मानो हाथियों के बच्चे खेल-खेल म सूँड म लाल समुद्री घास भरकर बिखर गए हैं। यह कल्पना मुझे बचपन म बडी प्रिय लगती थी यद्यपि आज मुझे इस पर हसी आती है।

वरकला के सागर-तट का यह दृश्य मेरे मन म बीते युगो की घण्टियाँ बजाता आया है। ऊँचे पथरील कगारो पर खडे हैं गगन चुम्बी नारियल-गाछ। केरल अर्थात् नारियल-गाछ का देश जिसकी सत्यता को सिद्ध करते हैं वरकला के नारियल-गाछ।

धातु मिश्रित पथरीली गेरुआ मिट्टी सागर का खारा जल मिलने से लाल नुकीली चट्टानो का रूप लेने लगती है। कभी सागर इन चट्टानो को लील लेता है, पर नई चट्टानें भी बनती-उभरती रहती हैं। नाचती इठलाती लहरें दिन रात इन चट्टानो का पूजन अर्चन करती हैं।

चिलाक्कोर के समीप से आरम्भ होती है वरकला की नहर जो सागर-जल को आगे एक सुविस्तृत झील से जा मिलाती है।

इस नहर के निमित्त वरकला की पहाडियो को काट काटकर दो सुरगें बनानी पडी।

चिलाक्कोर के समीपवर्ती काजू-वन म पहले हम उस सुरग तक पहुँचते हैं जो मील भर लम्बी है।

दूसरी सुरग का मुह भी इसी काजू-वन म ही खुलता है। यह कोई डेढ मील लम्बी होगी।

दूसरी सुरग का दूसरा मुह शिवगिरि मठ के रास्ते म खुलता है। उस पर त्रिवाकुर राज्य का राज्य चिह्न शख खुदा है। शख के नीचे बडे-बडे अको में लिखा है—१८८ । उसी वर्ष यह सुरग बनी होगा।

१८८ के बाद म यह सम्भव हो सका कि त्रिवेन्द्रम् से माल ढोने वाली नाव सागर के साथ-साथ तीव्र गति से चलकर वरकला पहुच और

फिर पक्की इटा से बने किनारा वाली दस फुट चौड़ी नहर में रास्त आगे वाम्नी झील से होकर कारवान जा सके। उससे आग तो अनाकुलम तक सुविस्तृत जल-माग पर बड़े-बड़े स्टीमर चलते हैं।

'धन्य थे व हाथ जिन्होंने वरकला की यह नहर तयार की। धन्य था वह परिश्रम जिसके फलस्वरूप ये लम्बी सुरंगें खोदी गइ।

यात्री देखता है कि यह प्रशस्त मस्तक वाला सगीताचाय वरकला की समूची विशेषताओं का प्रतीक है।

"न मुझे अपनी उच्च सगीत विद्या पर इतना घमण्ड है कि मैं सागर-पुत्रों की धुन को हीन समझने की भूल करूँ। न मैंने अपने व्यक्तित्व को छोटे-से घेरे म ही बन्द रखने का प्रयत्न किया है। रुद्रपदम् मुस्कराकर यात्री की ओर देखते हैं जसे व कह रहे हों हम बाहर स आने वाले यात्रियों के आभारी हैं।

जस पवनों के झकोरे हम निहाल करते हैं वस ही आप लोग बाहर से आकर दर्शन देते हैं तो पाँच मील के घेरे म बसा हुआ वरकला मानो पाँच सौ मील के घेरे म फल जाता है। कल का दिन ठहरें तो हमारे सगीत विद्यालय म भी पधारें।

'यह आपकी विशाल हृदयता और उदारता है गुरुदेव! यात्री कृतज्ञता जताता है हमें तो आज ही चलना है।

और रुद्रपदम् मुत्तु बाबा की ओर देखकर पूछते हैं

एन्तु वर्तमानम्? [एक बात पूछूँ?] मुत्तु बाबा की आँखों में मानो कोई ज्वाला भभक उठती है, उस समय तो हम अछूत न थे जब जनार्दन स्वामी के मन्दिर को सागर लील गया था और हम इन्हीं हाथों स देवमूर्ति को ढूँढ लाये थे। फिर दोबारा मन्दिर बना तो हमारे लिए मन्दिर बन्द कर दिया गया।

'यह ही अच्छा है मुत्तु बाबा! रुद्रपदम् मानो समस्त द्विज समाज की ओर से कहते हैं वह दिन दूर नहीं जब मनुष्य जाति भेद की मिथ्या बात को साँप की केंचुली के समान उतार फेंकेगा।



तीन

मूर्तिकार दामोदरन की दुकान मंदिर बाजार में थी जहाँ रत्नपद्मम् का अड्डा था। अब तो देशमुख भी यहाँ की गोष्ठी में रस लेने लगा था।

देशमुख का विचार था कि दामोदरन ऊपरी मन से ही सबकी हाँ में-हाँ मिलाये जाता है अपनी बात नहीं कहता। यहाँ बैठकर वह दामोदरन की आँखों में झाँकता तो उसे लगता कि यहाँ तो युग-युग की लम्बी दृष्टि की छाप है पर संकोच भी कम नहीं। उसे इस भक्ति भावना से चिढ़-सी थी जिसमें उपासक देव-मूर्ति के सम्मुख दृष्टि-दृष्टि की टेर लगाता नहीं अघाता। प्रश्न-मुखर दृष्टि से वह दामोदरन की आँखों में झाँकता मानो वह उसके व्यक्तित्व के दीये में नूतन बाती सजा रहा हो।

दोपहर का समय था। आज दामोदरन अकेला था। मूर्ति की घिसाई करते-करते बोला 'कहो देशमुख बाबू कन्याकुमारी की यात्रा कर आए?'

'मुझे तो कन्याकुमारी के मंदिर में कोई विशेषता दिखाई नहीं दी।' देशमुख ने नाक-भौं सिकोड़कर कहा 'नाम बड़े और दर्शन थोड़े!'

इतने में रत्नपद्मम् भी आ गए। बोले 'भरत कहाँ गया?'

'गोविन्दन के साथ घूम रहा होगा दादा!' दामोदरन ने हँसकर कहा 'तुम जानो तुम्हारा दास तुम्हारा गोविन्दन।'

'और हमारी फीस गुरुदेव!' देशमुख पास से मुस्कराया।

फीस भी मिल जायगी रुद्रपदम् मुस्कराये पर योग्यता भी तो सिद्ध कीजिये। अभी तो तुम्हारे गोविन्दन के प्राण बम्बई की सड़कों पर ही घुमड़ रहे हैं। जाने कब रास्ते पर आयेगा मेरा गोविन्दन !

स्नान को गये होंगे दामोदरन सोचकर बोला 'मैं भी दुकान बढ़ाता हूँ। देशमुख बाबू का भा ले चलते हैं। अरे दूर-दूर के यात्री आते हैं पाप-नाशा पर सागर-स्नान को फिर हम वरकला में रहकर भी क्या इससे वंचित रह जायें ?

वे स्नान के लिए ही गये होंगे देशमुख हँस पड़ा। मन्दिर में जाकर मूर्ति के सामने हाथ बाँधे खड़े रहने से सागर-स्नान करना फिर भी अच्छा है।

पाप-नाशा भी बुरा नहीं दामोदरन मुस्कराया पर कन्या कुमारी की दूसरी ही बात है।

सागर-स्नान हमारी संस्कृति का अंग है रुद्रपदम् मुस्कराये, 'अब दुकान बढ़ाओ। धंधा तो कभी समाप्त नहीं होता। आज सागर में बातें की जायें संस्कृति का मनन भी।

यह संस्कृति क्या बला है गुरुदेव ? देशमुख अपनी बात पर स्वयं हँस पड़ा।

'ओम् तत्सत् ! रुद्रपदम् आँखें चढ़ाकर बोले 'पराधीनता जो न कराये वही ठीक।

देशमुख बाबू को कन्याकुमारी का मन्दिर अच्छा नहीं लगा दादा ! दामोदरन भी चुप न रह सका।

केवल कन्याकुमारी ही गये या रास्ते में कुछ और भी देखा ? रुद्रपदम् की लम्बी-लम्बी शिखा नाच उठी।

'त्रिवेन्द्रम् से आगे वह सरोवर भी देखा जिसके साथ गौतम और अहल्या के आश्रम की बात जोड़कर दक्षिण वालों ने अपनी बुद्धि का परिचय दिया है।

'ठीक तो है, दादा ! दामोदरन ने मानो रुद्रपदम् को आर में कहा

यहीं तो गौतम का आश्रम था। तुमने देखा होगा वहाँ मेंढक नाम को भी नहीं। दादा समझा सकते हैं कि यह सब इन्द्र के शाप के कारण हुआ।

रुद्रपद्म् वाले दक्षिण की यही मान्यता है कि इधर ही था गौतम आश्रम। यहीं इन्द्र ने अहल्या को छला था। मेंढक कोलाहल कर रहे थे। इससे पूर्व कि उसे गौतम का शाप लगे उसने मेंढकों को ही शाप दे डाला कि वहाँ उनका वंश-नाश हो जाय।

'सचाई तो कुछ और ही है गुरुदेव! दशमुख ने गम्भीर होकर कहा 'उस सरोवर के जल में गंधक है। इस कारण मेंढक नहीं जीते।

यह नास्तिकता यहाँ नहीं चलेगी देशमुख बाबू! रुद्रपद्म् ने त्योरी चढ़ाई।

पर भौगोलिक पचड़े को भी तो सुलझाइए। दशमुख चुप न रहा 'भगवान् राम ने जनकपुर जाते समय मार्ग में अहल्या-उद्धार किया था ऐसी ही जनश्रुति है। श्री राम के चरण छूते ही शिला अहल्या होकर जी उठी थी। वहीं तो गौतम आश्रम रहा होगा फिर वह इतनी दूर दक्षिण में कैसे सरक आया?

रुद्रपदम् ने प्रसंग टालकर कहा चिदम्बरम् का मन्दिर भी देखा?

चिदम्बरम् का मन्दिर तो दर्शनीय है। दामोदरन बीच में ही बोल पड़ा वहीं तो इन्द्र शाप-मुक्त हो पाये थे। दादा विस्तार से बता सकते हैं कि किस प्रकार गौतम के शाप से इन्द्र सहस्राक्ष या सहस्र-योनि हुए। चिदम्बरम् में प्रायश्चित करके वह देवताओं को मुँह दिखाने योग्य हुए।

रुद्रपदम् बोले चिदम्बरम् का मन्दिर तो अति भव्य है।

दैवयोग से उस दिन इस मन्दिर का वार्षिकोत्सव था। दशमुख भी चुप न रह सका लकड़ी के तीस पहियों वाले डेढ़ सौ फुट ऊँचे रथ पर इन्द्र की मूर्ति विराजमान थी। इन्द्र के शाप-मुक्त होने के उपलक्ष्य में उनकी शोभा-यात्रा निकल रही थी। सहस्रों यात्री इन्द्र के रथ को हाथों

से खींच रहे थे। मैं अकेला होता तो वहीं रम जाता। मैं एक मित्र की कार में था जो उसी दिन कन्याकुमारी पहुँचकर सूर्यास्त का दृश्य देखना चाहता था।'

'चिदम्बरम् के मन्दिर में वे खम्भे नहीं देखे? पत्थर के टुकड़े जोड़-जोड़कर ऐसे बनाये गए हैं कि उन पर चोट करने से संगीत के सातों स्वर गूँज उठते हैं।' रुद्रपदम् बोले, 'कभी फिर जाओ तो वे खम्भे अवश्य देखना।'

'कभी साथ ले चलिए। धृष्टता क्षमा हो! वास्तव में चिदम्बरम् का मन्दिर देखने के बाद कन्याकुमारी का मन्दिर तो बौना-सा लगता है।'

'ओम् तत्सत्! मन्दिर सभी पवित्र हैं, महान् हैं—ऊँचे हों तो, भले नीचे हों तो! मन्दिर के सम्बन्ध में ऐसा कहना अशुभ है।' रुद्रपदम् मुस्कराये, 'तुमने रेत के टीलों पर बैठकर सूर्यास्त का दृश्य देखा होगा। चिदम्बरम् के मन्दिर से शिव ने ढेर चावल कन्याकुमारी से विवाह करने के उपलक्ष्य में भिजवाये थे। विवाह न हो सका। कोई विघ्न पड़ गया। शिव के शाप से चावल के ढेर रेत के टीलों में परिणत हो गए।'

'ये सब तो कपोल-कल्पित कथाएँ हैं, गुरुदेव!' दशमुख हँस पड़ा, 'सारा दक्षिण मन्दिरों और देव-कथाओं के नीचे कराह रहा है। गोविन्दन से भी मेरी बातें हुई हैं।'

दुकान बन्द करके वे पाप-नाशम् पहुँचे। दशमुख और गोविन्दन ने उनका अभिवादन किया और फिर से लहरों के साथ झूमने लगे।

रुद्रपदम् ने सागर-जल से आचमन किया और सूर्य की ओर हाथ उठाकर प्रार्थना की, "मेरे गोविन्दन को विवेक दो, भगवान्! उसकी बुद्धि में यह बात आ जाय कि संगीत से ही देश का उद्धार होगा।'

दामोदरन बोला, "मूर्तियाँ बनाते समय मूर्तिकार के श्वास चुक जाते हैं।

'संगीताचार्य का भी क्या ठीक है?' रुद्रपदम् मुस्कराये, 'कौन जाने किस राग-रागिनी का गले में आए साँस छोड़ दें।

फिर तो नाम शेष रह जाता है। और दादा नाम का भी क्या भरोसा है?

'यह तो ठीक है। जो कलाकार है वह भी विदा लेता है। जो कलाकार नहीं है वह भी चल देता है। फिर कला का भी क्या गर्व किया जाय?'

देशमुख जाकर गोविन्दन और शाखधरन के साथ हँसने-खेलने और झाग के छींटे उड़ाने लगा।

'अन्न-जल की बात है दादा!' दामोदरन ने सहानुभूति जताई, अब गोविन्दन यहीं रहेगा। वह पिता का अब और नहीं सतायेगा।

'सबसे अधिक चिन्ता तो इसकी माँ को रहती थी।' रुद्रपदम् ने सूर्य की ओर हाथ उठाकर कहा 'अबसहा नारी का दुःख तुमसे छिपा तो नहीं भगवान्! यह हमारी कुलदेवी युग-युग से वेदना का भार ढोती आ रही है। उसके पुत्र उसे छोड़-छाड़कर भागते रहे।' और फिर सागर की ओर हाथ फैलाकर बोले 'हे वरुणदेव, हमारा गोविन्दन आज्ञाकारी बने! पहले माँ की बात सुने, फिर पिता की। माँ ही प्रथम गुरु है। उसी से ज्ञान आरम्भ होता है।'

थापी हुई बुद्धि तीन दिन भी नहीं टिकती और भीतर की बुद्धि तीन युग तक काम आती है दादा! मैं शाख से कहूँगा यह बात गोविन्दन के कान में डाल दे।' बात करते-करते दामोदरन हँस पड़ा 'देशमुख ठीक कहता है, बम्बई नगर में रुपया कमाकर घर पहुँचते-पहुँचते जेब में कवड़ी भी नहीं बचती। पर गोविन्दन कुछ तो लाया ही होगा कमाकर?'

'कमाई की न पूछो। कभी नाव सागर पर तो कभी सागर नाव पर! अपना करकसा ही भला है।'

'बम्बई भी बुरी नहीं होगी दादा!' दामोदरन ने आवेश में कहा 'देशमुख कहता है मरते-मरते भी उसका मुख बम्बई की ओर ही रहेगा! परदेस में न माँ होती है न सहोदर भाई!'

राजा माने तो रानी! अपना करकसा ही भला। बम्बई की तो

वह बात हागी—मुरगिन ने विधवा के चरण छुए तो बोली, कि तू भी मुभ-सी हो जा। जो स्वय घर से भागकर वहाँ पहुँचते हांगे, व दूसरे का भी क्या अच्छी राय देंगे ? जय जनादनस्वामी ! मेरा गोविन्दन लौट आया !

'घर-घर नारियल-गाछ छत्र झुलाता है ! वरक्ला की क्या बात है दान ! कोइ राह चलता यात्री भी क्यों न आ जाय कच्चे नारियल का रस तो उसे पिलाकर ही छोड़ते हैं। वहा भी है ढोल की आवाज एक कोस तक जाती है तो आतिथ्य की भावना सौ कोस !

देवगुरु ने पास आकर पूछा क्या ज्ञान-गोष्ठी चल रही है ? मैं सब सुन रहा था। बम्बई म छाप निकाल बिना क्या वरक्ला का गुण गान सम्भव नहीं ?

गोविन्दन और रामचरन का मन अभी स्नान से भरा नहा था। वे देर तक लहरा से जूझते रहे। आज धूप ने कुहास की गठरियाँ नहीं खोली थी। धूप म तितलियाँ जैसे भरतनाट्यम् के पश्चात् कथकली नाचने लगी थीं।

स्नान के पश्चात् व लौट पडे तो दूर से एक कन्या आती दिखाई दी। पास स गुजरते हुए वह बोली 'मूर्ति बनाना तो छोड़ा ही या शास्त्र क्या अब वीणा म भी मन नहीं रमता ?

यह कौन कन्या है ? रूपदम् ने पूछ लिया।

'यह नीलू है गुरुदेव ! राम मुस्कराया माधवन नम्पूतिरिप्पाड की कन्या !

अच्छा तो य लोग आ गए ? त्रिवन्द्रम के कालेज में प्रिंसिपल थे न नम्पूतिरिप्पाड ! पाँच बरस पहले ही पेंशन पाकर प्रिंसिपल महोदय घर आकर रहेंगे यह तो हम तीन महीने से सुन रहे थे। रुद्रपत्न्य् गद्गद स्वर म बोले 'माधवन ने बगाली कन्या स विवाह किया था—मलयाली और आय रक्त का सगम। यह हुई नीलू ! क्या यह ठीक है कि नीलू न एम० ए० किया है ? वह चाहे तो सगीत विद्यालय म आ

सकती है।

देशमुख ने हँसकर कहा 'आपका वश चले गुरुदेव तो सारे वर कला को अपने संगीत विद्यालय में समेट लें! इतना स्थान भी है?'

रुद्रपदम् प्रसन्न कल्लकर बोले प्रागैतिहासिक युग में चिर-काल तक केरल के नाग-वंशियों के साथ आर्यों का संघर्ष हुआ था। नाग-वंशी तो कुलदेवी को ही कुल-माता मानते थे। माँ से ही उनका परिवार चलता था जैसा आज भी केरल की अनेक जातियों में चलता है। आर्यों ने यहाँ पिता की पद प्रतिष्ठा कराई। बहुत सी बातों में केरल के नाग वंशियों के सम्मुख आर्यों की पराजय हुई। शिव को नागवंशी अपना महादेव मानते थे। आर्यों ने उसे अपना देवता मान लिया। केरल की प्रधान जाति है नायर। मलयालम के नागर शब्द का अपभ्रंश है नायर। नागर का अर्थ है गले में नाग डालने वाला'। केरल की कुछ जातियों की स्त्रियाँ आज भी नाग-फन जैसा जूड़ा बाँधती हैं। केरल के मन्दिरों में नागस्वरम् बजाते हैं। नागस्वरम् के नाम में भी नाग-पूजा का भाव निहित है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि आर्यों के वंशज हैं हमारे नम्पूतिरिब्राह्मण जो आज केरल में नाग-पूजा के महापुरोहित कहे जा सकते हैं।

देशमुख ने हँसकर कहा यह सब अनुसंधान तो बहुत बड़ा पचड़ा है गुरुदेव! और देखिए आपकी सुनाई हुई यह कहानी तो मेरे मन नहीं लगती। यह कैसे हो सकता है कि जब एक नम्पूतिरि त्रिवेन्द्रम् के लिए घर से चला तो नागू-कुण्डा का नागराज मनुष्य के रूप में उसके साथ हो लिया और फिर इस बात पर तो हँसी आए बिना नहीं रहती कि रास्ते में उस नम्पूतिरि ने नागराज से कहा कि आप यहीं ठहरिए मैं महाराज से मिल आऊँ फिर हम इकट्ठे घर चलेंगे। और इससे भी अधिक हँसी आती यह बात है कि वह नम्पूतिरि दूसरे ही रास्ते लौट गया और नागराज के उपलक्ष्य में वहीं एक नागू बन गया। बताइए इन कपोल-कल्पित कथाओं से जनता को कब तक बुद्धू बनाया जाएगा?



चार

'हे कुल-लक्ष्मी! हे तुलसी! कच्चे नारियल का भोग स्वीकार करो। गोविन्द को सुमति दो। वह पिता की आज्ञा में रहे। ददिहाल और ननिहाल में उसका मान बढ़े। मानो इन्द्र स्थिर-वाक् रहे। बारहों मास शुद्ध संस्कार रहे। प्रति पल ब्रह्म-योग में लीन रहे।' अन्नपूर्णा तुलसी वेदी पर घी का दीप संजोकर प्रार्थना कर रही थी।

'कोई वरदान छूट न जाए माँ!' तुलसी-वेदी के पीछे से गोविन्द हँस पड़ा।

'अरे तुम पीछे छिपे खड़े थे! यह तो शुभ हुआ।' अन्नपूर्णा गोविन्द के सिर पर प्यार से हाथ फेरने लगी, 'पोथी न जाने हाथी दौड़ या हथिनी। संगीत सीखो और पिता को प्रसन्न करो। संगीत तो तुम्हारे रक्त में है। बम्बई भागकर तुमने पन्सेरी में पाँच सेर की भूल की था। सिर पर पिता का हाथ रहे। अभी कुछ नहीं बिगड़ा।'

'पर तुम्हीं तो कहा करती थीं माँ कि मेरे पैर में चक्कर है। चलते-चलते मैं बम्बई पहुँच गया। इसमें तो पैर के चक्कर का ही चमत्कार था।'

'पैर का चक्कर ही तुम्हें लौटा लाया बेटा!'

'यात्रा से मनुष्य बनता है माँ!'

'पाँच बरस यात्रा में बिता दिए। उन पाँच बरसों को तो हाथी भी नहीं पहुँच सकते। पिता की छाया में बैठो, कभी तो आस पूजेगी।'

जो सीखता है उसी की विद्या है। भावना से विद्या फलती है। और विद्या भी तो वह काम है कि बात छोगे पयकली सम्बो! अब फिर बम्बई न भाग जाना। नाम तो पहले ही बहुत आगे निकल गया।

दास से मैं क्या ईर्ष्या करूँ माँ?

'बिना ऋतु गाछ नहीं फलते बेटा! विद्या सीखने की यही आयु है। बम्बई में कौनसे लड्डू बटते हैं? समय-समय की रागिनियाँ हैं। जो समय को नहीं देखता वही भूल है। मैं तो यही कहूँगी बेटा! घर में रह और माँ का आशीर्वाद ले—बढ़-बढ़ रे चन्दन-गाछ!

लय पर पग उठते हैं माँ! बम्बई में भी मैंने अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाया। मैंने कुछ खोया नहीं। पहले तो पिताजी सामने में बात ही नहीं करने देते थे माँ! बस यही कहते—ब्रह्मा ने भाग बद बाँधता है!

मौन सर्वार्थसाधनम्! यह मानकर देखा बेटा! फिर तुम दम्भाग—दाग और पायसम् (खीर) से भरा! बरकना में ही रहा यहाँ तो सात वार नौ त्योहार का योग रहता है।

बम्बई ने भी मेरा कुछ बिगाड़ा नहीं माँ! सूखे शस्त्र तो झटपट सजन हैं। सारी शाम तो चार पैसे कमा सकने की है। बम्बई जो रह सो सवा बीस। और बम्बई भी यही कहती है—साड़ी लगे चमचम विद्या आब धमधम! सोने को जंग नहीं लगता। परिश्रमी के लिए बम्बई में सोने का सूर्य उगता है।

सौ बरस पर शताब्दी होती है बेटा! पिता की छाया तो सौभाग्य से मिलती है।

जहाँ सौ वहाँ सवा सौ। मन तो यही कहता है फिर बम्बई चलो। मैं फिल्मों में धुनें बना सकता हूँ। संगीत मेरे रक्त में है। संगीत निर्देशक बनूँ यही मेरी इच्छा है।

संगीताचार्य क्या कहा?

''इस काम में उतने पैसे नहीं पिताजी की दूसरी बात है माँ!

त्रिवाकुर-नरेश उनके सरम्भक हैं। पर मैं तो इन दान अथवा भिक्षा से प्रवित्र नहीं मानता। ऐसा युग आने वाला है जब ये राजे-महाराजे नहीं रहेंगे। और मैं पूछता हूँ शास्त्रीय संगीत को हमारे देश में कितने लोग समझ सकते हैं?

'हाथी के पर में सबका पर, बेटा! हमारे त्रिवाकुर-नरेश चिरजीव हों—गुणियों के सरम्भक। यह सच है कि उनके राज में हाथी हाथी से ही तुलते हैं लेकिन पासंग में गधे भी तुल जाते हैं। उनके राज में हाथी तुलते हैं और गधे पासंग में तुलते हैं।'

'बम्बई' में तो चमत्कार को ही नमस्कार है।

इतने में रुद्रपम् आ गए। बोले, "सर्वसहा मातृमूर्ति को सत्त प्रणाम करो बेटा गोविन्दन! स्वयंसमर्पिता। मन की समिधा-सी। सदा श्रद्धामयी। मन्त्र करुणावती।'

वाटिका की चारदीवारी से चाँदनी रात में सागर का ज्वार बहुत भला लग रहा था।

अन्नपूर्णा बोली 'हे जनार्दन स्वामी, मेरे गोविन्दन को तुम्हीं बुलाकर लाए। हे महात्मन् श्री महाबलि, आपने अपनी धरती वामन को दे डाली थी। प्रतिवर्ष एक दिन के लिए तुम अपनी प्रजा को देखने आते हो जब हम ओणम् मनाते हैं। मेरा गोविन्दन घर लौट आया। मेरे लिए हर दिन ओणम् बन गया। फिर वह आँगन के समीप नागमूर्ति के सम्मुख खड़ी होकर बोली हे नागराज तुम्हारे वरदान से ही गोविन्दन का जन्म हुआ था! तुम तो सात पाताल के वासी हो नाग देवता! पर धरती की सब सुध-बुध रखते हो। बम्बई तुमसे कौन दूर है! तुम मेरे गोविन्दन का बुरा नाथ। तुम कितने कृपालु हो नागराज!

रुद्रपम् की कल्पना में इक्कीस वर्ष पहले की घटना घूम गई। अन्नपूर्णा ने जनार्दनस्वामी के मन्दिर के समीप छतनार पीपल के नीचे निष्ठापूर्वक पाषाण की नागमूर्ति रखकर 'नाग प्रतिष्ठा' की थी।

तुम केवल पाँच महीने के थे गोविन्दन जब हमने मन्नरशाला काव्‌ की यात्रा की थी।

गोविन्दन जानता था, प्रत्येक नम्बूतिरि घर में पाताल-कोठरी रहती है जहाँ नाग-मूर्ति को भोग लगाते हैं और घर के समीप रहता है काव्‌ अथवा नाग-कुञ्ज जिसे पुराने वन का अवशेष ही समझा जाता है। सचमुच केरल में हजारों काव्‌ थे। इन सभी काव्‌ओं में मन्नरशाला काव्‌ की महिमा सर्वाधिक थी।

स्वर्णकार को अपनी स्वर्ण-माला देकर तुम्हारी माँ ने नाग-मूर्ति बनवाई थी बेटा!

नाग-पूजा तो सनातन रीति है! अन्नपूर्णा मुस्कराई, नाग-पूजा में केरल का मन रमता है। नम्बूतिरि ब्राह्मणों के इल्लम्‌ (घर) की पाताल-कोठरी में नाग मूर्तियों के साथ-साथ जीवित सर्प भी रहते हैं। इल्लम्‌ के उत्तर-पश्चिम में रहता है काव्‌। केरल के पन्द्रह हजार काव्‌ओं में एक भी मन्नरशाला काव्‌ को नहीं पहुँचता। वहीं वार्षिक नलवम्‌ उत्सव पर हम तुम्हें लेकर गये थे गोविन्दन!

मन की बहँगी पर मनुष्य परम्परा का भार ढोता आ रहा है गोविन्दन बेटा! मन्नरशाला काव्‌ की कथा तो तुम जानते ही होगे।

मन्नरशाला के नम्बूतिरि इल्लम्‌ का एक ब्राह्मण वेट्टिकोट्टु इल्लम्‌ की एक नम्बूतिरि कन्या को वधू बनाकर लाया। अन्नपूर्णा कहती चली गई 'उसके माता पिता उसे कन्यादान में एक नाग-मूर्ति ही दे पाए। ससुराल में आकर वह इस मूर्ति की पूजा करने लगी। ससुराल का सौभाग्य बढ़ता गया। वह गर्भवती हुई। उसने एक साथ एक बालक और एक नाग को जन्म दिया। घर की पाताल-कोठरी में जहाँ जीवित सर्प भी रहते थे इस नाग शिशु का पालन-पोषण होने लगा। यहीं से मन्नरशाला काव्‌ का इतिहास चलता है। और हम नम्बूतिरि इल्लम्‌ में पधारकर आज तक अपने नाम के साथ उस नम्बूतिरि माँ और नाग का नाम जोड़कर गर्व अनुभव करते हैं।

गोविन्दन एक बार सात वर्ष की आयु में भी मन्नरशाला के नवकम् उत्सव में सम्मिलित हुआ था। चित्रकुडम् (शिला पीठिका) पर अनेक नाग-मूर्तियों के बीच नागराज और नाग-यक्षी की मूर्तियां स्थापित थीं। वे दिन उसकी आँखों में घूम गए। जैसे चौदह वर्ष पहले का समय अभी कल की बात हो। जैसे गोरस में गुंधे आटे का भोग लगाया जा रहा हो। इस भोग का श्रुति-मधुर नाम था नूरुम् पलम् जिसे सदा इल्लम् की बूढ़ी माँ ही बनाती थी। जैसे बूढ़ी माँ कावु में नागराज और नाग यक्षी की पूजा से पूर्व उन्हें स्नान करा रही हो। शिवरात्रि के दिन सहस्रों भक्तों की भीड़। उसी तरह विधिवत् पाँच पूजाएँ की जा रही हैं। सवेरे की पूजा में फल और दूध का भोग दोपहर को वल्ला नवेद्यम् (पकाया हुआ चावल) फिर मलार (भुना हुआ अन्न) तत्पश्चात् विशेष नवेद्यम् रखा गया जिसमें केसर कच्चे नारियल का दूध कला तथा घी सम्मिलित था। जैसे इल्लम् की बूढ़ी माँ बता रही हो—बचा हुआ नवेद्यम् किसी नदी अथवा सरोवर में गिरा आने की प्रथा है। नव कम् के उपलक्ष्य में सभी नाग-मूर्तियों को उठाकर शोभा-यात्रा निकालने का दृश्य उसकी आँखों में घूम गया जैसे पुरातन परम्परा के अनुसार बूढ़ी माँ ने उठा रखी हो। फिर उसके चिन्तन में वह दृश्य घूम गया—वह अभी पाँच महीने का शिशु है और माँ की बाँहों से उचक उचक जाता है जैसे उसकी माँ स्वर्ण निर्मित नाग-मूर्ति भेंट कर रही हो। सभी स्त्रियाँ अपनी अपनी भेंट लाई हैं—केसर कालीमिर्च रेशम आभूषण केले तेल और घी। पुल्लुवन जाति के लोग—जिनका धन्धा है गाँव-गाँव घूमकर घर घर सर्प-गीत गा-गाकर प्रसन्नता का प्रसार। उनके तन्त्र-वाद्य पर तुम्ब की जगह मिट्टी का घट लगा है।

अन्नपूर्णा ने भोजन परोस दिया। पिता-पुत्र बड़े प्रेम से भोजन पाते रहे। सागर-ज्वार की हुंग रागिनी उनकी कल्पना पर थाप लगा रही थी।

भोजन के पश्चात् वे चारदीवारी पर कुहनियाँ टेक खड़े थे। इतने

से देशमुख की आवाज सुनाई दी 'कहिए, गुरुस्व घर पर हैं न!'

'आइये आइये!' रूपदम् और गोविन्दन एक साथ बोल उठे। और अगले ही क्षण देशमुख भी आकर खड़ा हो गया।

मैं तो यही कहने आया हूँ गुरुस्व! कि गोविन्दन को बम्बई जाने से न रोकें। देशमुख ने हँसकर कहा बम्बई में गोविन्दन ने पाँच बरस बिताये। मेरा मतलब है इसने वहाँ पाँच बरस से बीज बोये धीरे धीरे वे बीज उगेंगे फल लायेंगे। फिल्मों के म्यूजिक डाइरेक्टर को स्वयं गाना नहीं पड़ता बस धुनें बनानी पड़ती हैं। और संगीत तो गोविन्दन के रक्त में है।

रूपदम् ने कहा 'देशमुख बाबू मैंने तुम्हारी फीस नहीं दी इसलिए यह दूसरा मन्त्र इसके कान में डाल रहे हो!



पाँच

मंदिर के सामने खड़ा गोविन्द सोच रहा था—यहाँ तो कुछ भी नहीं बदला। ये लोग ऐसे ही खड़े रहेंगे, मस्त देख रहेंगे, फूल चढ़ाते रहेंगे। जब से ये पापों का प्रायश्चित्त करते रहे हैं! जैसे यह जन-समूह एक ही व्यक्ति हो—सहस्रबाहु सहस्रपाद! जैसे इसकी मुखाकृति ही बदलती रही हो, हाथ-पैर बदल-बदल रहे हों। सिर पर परम्परा का भार, चतुर्दिक देव-कथाओं का घेरा। जैसे यह मन्दिर इस सहस्रबाहु सहस्रपाद भक्त-समूह के सिर पर बना हो।

मैं इनका साथ दूँ, यह नहीं होगा। स्वप्न में वर माँगते महा पयदे—देहि-देहि! शत सहस्र देहि! सहस्र कोटि देहि! युग-युग की लम्बी दृष्टि से देख रहे हैं। सागर-सी ज्वलन्त मुस्कान। द्रुत और विलम्बित आरती। इस भक्ति का मूल्य कितना! पाप-नाश दूर नहीं। एक लहर आती है, फिर दूसरी, फिर तीसरी; दोनों लहरें फेन छोड़ चली जाती हैं। दिन में सूर्य—प्रकाश का शक्ति-स्रोत और ऋतु-क्रम का प्रवर्तक, रात को चन्द्रमा—स्नेह प्रणता। इन्हें इस बात की क्या चिन्ता कि अहल्या भूमि इन्द्र के पाप से शान्त की शिला बनी थी, अब किसी राम की बाट जोह रही है। इन्द्रियभोगी इन्द्र सहस्र-योनि बनकर भी कभी का शाप-मुक्त हो चुका है। भद्र-जन का रूप धरकर आया वामन। बोला—श्रीमान् महाबलि, त्रिपाद भूमि देकर दानवीरता दिखाइए। और तृतीय पाद में ले ली समस्त बेचारे भूमि! वामन का राज है। महाबलि पाताल

में निर्वासित हैं। यह तो बच्चे की आँखें पाछन वाली बात है कि प्राणम् के तीन बरस में एक बार महाबलि को अपनी भूमि में आने की पूरी छूट है।

गोविन्दन की कल्पना में बम्बई घूम गई जहाँ वह पाँच बरस बिता आया था। वहाँ कितनी भाग-दौड़ थी! छोटे पथ बड़े पथ आने वालों के साक्षी जाने वालों के सखा। दिन के पहियों की घरघराहट रात की स्वप्न रागिनी। सुमन-यौवन भारती। फिल्मों की चुलबुलिया रंग-स्थली। समाचार-पत्रों की चित्र विचित्र ऋतु क्रम-सी सूचनाएँ और टिप्पणियाँ। सहस्रपाद छन्द सहस्राक्षु रूपक सहस्राक्षर उपमाएँ सहस्र-बुद्धि भाव सहस्र रश्मि अलंकार सहस्र जिह्वा रस सहस्र-बाहु लक्षण। फिल्मी गीत, जिनका समाँ ही कुछ निराला है। टनन्-टनन् ट्राम। फिल्म के चित्रपट पर रंग बिरंगे सरगम। स्वयंसिद्ध नृत्य नयनतारा और अपराजिता के फूल। सपनों में दाने चुगते कबूतर। आइए श्री गोविन्दन संगीत निर्देशक! बम्बई आपका स्वागत करती है। हम आपका जुलूस निकालेंगे। आइए संगीताचार्य रुद्रपन्नम् के सपूत! आइए म्यूज़िक डाइरेक्टर महोदय! परम्परा का भार उतारिए। नई प्रतिभा का साथ दीजिए। यह है मिस गौरी—बम्बई की सुविख्यात प्ले-बैक गायिका। यह है मिस सन्ध्या। यह है मिस उषा। यह है नयनतारा। यह है अपराजिता! उसने चौंककर इधर उधर देखा। मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़कर वह भीतर प्रांगण में आ गया था। यह है वरकला। वरकला का जनार्दन स्वामी का मन्दिर। यह बम्बई नहीं। यह बम्बई का फिल्म स्टुडियो नहीं।

दास और नीलू ने मन्दिर के प्रांगण में प्रवेश किया।

देवता पर दो फूल भी न चढ़ाओगे? नीलू हँस पड़ी, हम साथ क्यों नहीं लाये दादा?

मन्दिर के भीतर गर्भ-गृह में जाने के लिए वे मुख-मण्डप से होकर गुजरे। देव प्रतिमा के सम्मुख घी के दीप जल रहे थे। उन्होंने प्रतिमा

पर फूल चढ़ाये भेंट-पूजा की तीर्थ-पुरोहित से प्रसाद लिया।

प्रांगण में आकर उन्होंने मुँह मीठा किया।

मुख मण्डप के छज्जे पर बाहर की ओर बाएँ हाथ सरस्वती की मूर्ति थी दाएँ हाथ लक्ष्मी की। गोविन्दन के लिए इसमें कुछ भी नया न था। सरस्वती और लक्ष्मी को इन्हीं मुद्राओं में वह बचपन से ही देखता आया था।

मुख-मण्डप से थोड़ा हटकर प्रांगण में एक ओर था ब्रह्मा-मण्डप। ब्रह्मा ने यहीं खड़े होकर भगवान् जनार्दनस्वामी से भिक्षा माँगी थी। पहले लक्ष्मी और सरस्वती ने ही बाहर दर्शन देकर ब्रह्मा को सन्तुष्ट किया था। मुख-मण्डप पर उनकी मुद्राएं आज भी उसी युग की याद दिलाती हैं।

नीलू बोली ब्रह्मा को यह गर्व था कि वही अखिल विश्व के स्रष्टा हैं।

'इसी अहं से मुक्त होने के लिए तो ब्रह्मा को यहाँ खड़े होकर कहना पड़ा था— भिक्षां देहि ! इसीलिए गुरुदेव कहते हैं कि कलाकार को घमण्ड से बचना चाहिए।

दासवरन ने सगर्व गम्भीर स्वर में कहा ब्रह्मा को वरकला में यज्ञ भी रचाना पड़ा था। उसी से तो वरकला की मिट्टी गरमा हो गई। पर डाक्टबाबू दसगुरु इन कथाओं पर हँसते हैं। गुरुदेव नहीं हँसते। उनकी मान्यता है कि वरकला के काजुवन में झबरनिया जल के स्रोत भी ब्रह्मा के यज्ञ से ही फूट निकले थे।'

नीलू ने भाँप लिया कि गोविन्दन का मन उखड़ा-उखड़ा-सा है। उसने कॉलेज की बातें छेड़ दीं। 'कॉलेज की सुगन्ध अभी बन्द रखो नीलू!" दास ने गम्भीर होकर कहा 'इस समय हम मन्दिर में बैठे हैं। हमारे अपने देव-कथाओं में ही विचरना चाहिए। भविष्य की कल्पना गढ़ने में जनार्दनस्वामी के मन्दिर की कथा तो अवश्य सुनिए।

'सुनेंगे" नीलू मुस्कराई। उसने वेणी में नीला फूल खोंस

रखा था।

'कल्पना के प्रवेश-द्वार पर मैं इस कथा को बन्दनवार से सदा सजाऊँगा।' शर्मा ने भूमिका बाँधी।

सौ बार सुनी हुई कथा में तुम कुछ नया तो डाल नहीं सकोगे। गोविन्दन मुस्कराया। 'कथा छोड़ो नीलू से गीत सुना जाय—कोई नीलवर्ण गीत!'

'नील वर्ण गीत!' नीलू हँस पड़ी 'गीत का भी रंग होता है?'

उसकी वेणी का नीला फूल महक झकोर गोविन्दन को छू गया।

'फूल नहीं गीत की लय पास आनी चाहिए!' माथे पर अजीब सा भाव लाकर गोविन्दन तना तना-सा रहा।

'यह तो ठीक ही है!' शर्मा हँसकर बोला 'ब्रह्म-मण्डप में कथा और गीत का ही मेल है। आज जो यात्री दर्शन करने आये हैं इनमें बम्बई के भी हैं एक-दो परिवार! मैं तो बम्बई जाने की बात नहीं सोचता। बम्बई स्वयं द्वारका को दर्शन देने चली आ रही है। अच्छा तो अब कथा सुनिए।'

'कथा मैं सुनाऊँगी।' नीलू गम्भीर मुद्रा बनाकर उठ गई

'एक था राजा। उसे अपनी देह की दो परछाइयाँ दीखने लगीं। कभी वह सोचता सेवा भाव से जीवन बिताना चाहिए। कभी वह त्याग और सेवा के मार्ग से भूल वासना और विलास में डूब जाता। और यह बात छिपी न रहती कि एक भाग विरक्ति की ओर जाता है तो दूसरा आसक्ति की ओर। देह की दो परछाइयाँ मन की दुविधा की प्रतीक हैं।

राजा को सपने में भविष्यवाणी हुई। वह यात्रा पर चल पड़ा। पूर्व सागर के साथ-साथ चलता हुआ वह कन्याकुमारी पहुँचा। फिर पश्चिम सागर के साथ-साथ चलता हुआ द्वारका धाम पहुँच गया। यहाँ उस सागर-तट पर पड़ी भगवान् की मूर्ति के दर्शन हुए। एक ही परछाई रह गई। राजा ने मन्दिर बनवाया जिसे सागर ले गया। फिर दोबारा मन्दिर बनाया गया थोड़ा हटकर। और अब इस मन्दिर में देव-दर्शन को

दूर-दूर के यात्री आते हैं।

गोविन्दन हँस पड़ा "और भी कोई कथा होगी तो नीलू से ही सुनेंगे। शाम तो इकड़े का वस है। आज का युग चाहता है कि संक्षेप में ही बात की जाय।

मैं समझ गई" नीलू ने गम्भीर-सा मुँह बनाकर कहा "गोविन्दन को पक्के गाने वाला ढंग अरुचिकर है। और यह भी ठीक है कि हमारे मस्तिष्क पर परम्परा का इतना भार नहीं होना चाहिए।

कभी यह कथा कभी वह कथा! कथाओं का भी कहाँ अन्त! गोविन्दन बोला, "वरवला को इन घिसी पिटाई कथाओं से बचाओ— उसर युग की इन पक्की तानों से।

'मेरे लिए तो शास्त्रीय संगीत ही सबसे बड़ी प्रेरणा है। शारदघरन चुप न रह सका "यही मेरा रास्ता है—एक ही रास्ता। इसलिए मैं अपनी एक ही परछाई देखता हूँ।

मैं तो सपने गढ़ती हूँ! नीलू हँस पड़ी "इसलिए मैं तो एक नहीं दो नहीं एक साथ हजार-हजार नित-नई परछाइयाँ देखती हूँ। दादा मुझे कोई उपाय बताओ। कथाओं से नहीं मरी तो इन परछाइयों से ही रक्षा करो। मेरा एक मन तो कहता है कि वह काय के लिए बड़ा स्थान चाहिए। वरवला तो क्या मुझे तो त्रिवेन्द्रम् भी छोटा लगता है। नृत्य कला में मेरा मन रमता है। देखें मेरे सपने मुझे कहाँ उड़ा ले जायें।

तब तो तुम भी बम्बई पहुँचकर रहोगी नीलू! शारदघरन ने गम्भीर स्वर में कहा "मुझे सपनों का रोग नहीं। मुझे फिल्म के बसुरे आलापों का भी रोना नहीं। मेरा मन उखड़ा-उखड़ा नहीं। यह ठीक है कि हमारे घर में बीस पीढ़ियों से संगीत नहीं चला आ रहा। संगीत मेरे रक्त में नहीं। पर लगता है सृष्टि की रग रग से रागिनी उमड़ रही है।

वाह-वाह! नीलू हँस पड़ी "मैं तो समझी थी कि नाद का ध्वनि मन्द्र ही होती है!"

नीलू की आँखों की लौ पद्मा के मन्दिर वाले दीपक के सदृश कभी

युभती-सी लगती कभी फिर जल जाती। फिर वह कॉलेज की अधखिली कनियां-सी बातें ले बैठी, जिनमें तितलियाँ उड़ रही थीं धूप का कुहासा पहाड़ियों और सागर प्रान्त को ढाँप रहा था कुन्तल लहर-लहर उड़ उड़ जाते थे स्नेह और कुतूहल की गलबहियाँ अधरतिया का पूनम चन्दा जुगनुओं की झिलमिल पाँतें, बिखर बिखर जाती-सी नृत्य की पुकार स्नेह की टेर। और इन सब बातों पर फिर बरकला की गेरुआ मिट्टी की छाप लग जाती। मिट्टी की मूर्तियां का फिर कोई देव-स्पर्श छू जाती। इनमें कुछ भी तो गोपनीय नहीं था। आगे जाने अथवा पीछे हटने की सब साध भुलाकर जैसे नीलू एक ही भवर में घुमड़ रही हो। सम्भलकर बोली अतीत सूखे पत्तों के सदृश भड़कर गिर भी तो नहीं सकता।

गोविन्दन ने एक ही उत्तर दिया बम्बई दूर नहीं!

नीलू बोली अभी कुछ दिन गुरुदेव से संगीत का अभ्यास करूँगी। फिर अपने पंख चुन चुन छोड़ दूंगी। कहीं भी उड़ा ले जायेंगे मेरे सपने! मुझे कई-कई परछाइयों की परवाह नहीं। मैं सपने बुनती हूँ।

'या सपने तुम्हें बुनते हैं। गोविन्दन हँसा और फिर उसने गम्भीर स्वर में कहा पिछले पाँच बरस मैंने बम्बई में बिताये। बहुत देखा बहुत सीखा। बहुत कष्ट सहे। सुख भी दूर नहीं। बम्बई दूर नहीं—मेरे सपनों की बम्बई जो मुझे म्यूजिक डाइरेक्टर मानेगी।

कैसा है फिल्मों का संसार दादा? नीलू पूछे बिना न रह सकी 'क्या मुझे भी वहाँ काम मिल सकता है?

क्या नहीं? पर इसके लिए बहुत साहसी और ढीठ बनना पड़ता है।

यह मैं बन लूँगी।

तो काम भी मिल जायगा। जो लोग फिल्म-जगत् में आज महान् समझे जाते हैं जिनके नाम की आज धाक है उन्हें शुरू-शुरू में फिल्म स्टूडियो में घुसने का रास्ता नहीं सूझता था। जीवन उन्हें धता बताने पर तुला हुआ था। फिर वे घुस ही गए। संघर्ष चला, जिसे बम्बई की

भाषा म कहूंगे कठकी । मैंने भी संघर्ष किया है। मेरा कठकी का युग चल रहा है।

मेरे पिताजी कहते हैं हमारे भीतर जो बीज है जो सत्य है उसे पहचानो उसी का विकास करो।

और जो हमारे भीतर झूठ का बीज हो ? झूठ का भी बीज होता है। बम्बई में बम्बी के युग से गुजरते समय झूठ का बीज भी उगाना पड़ता था।

यही तो मेरे पिताजी भी कहते हैं। नाटक म सभी पात्र होते हैं—अच्छे भी बुरे भी।

कोई-कोई पात्र तो जीवन भर झूठ का झण्डा उठाये रहता है, और एक बार तो सत्यवान को भी कहना पड़ता है—अच्छा तो आओ, झूठ के साँप मुझे डस लो।

शालधरन चुप न रह सका सत्यवान को तो मरकर भी जीवन दान मिल गया था!

नीलू की आँखें दान की ओर घूम गईं वह सब तो सावित्री के कारण हुआ! यम-सावित्री के प्रश्नोत्तर तो प्रसिद्ध हैं। सावित्री की निष्ठा रंग लाई सत्यवान वापस मिल गया!

शालधरन बोला इससे हम क्या सिद्ध करना चाहते हैं ?

नीलू मुस्कराई हीरा तो स्वयं उठकर बाजार में नहीं जाता मनुष्य जाता है। हीरे और मनुष्य में बस यही अन्तर है।'

तो क्या तुम्हारे लिए भी बम्बई दूर नहीं रही ? शालधरन झुँझलाया 'तब तो तुम सपने नहीं बुन रहीं सपने तुम्हें बुन रहे हैं जैसे गोविन्दन के सपने उसे फिर बम्बई खींच रहे हैं।'

गोविन्दन ने ब्रह्मा-मण्डप की महराब से गर्भ-गृह के सामने वाले मुख मण्डप के छज्जे पर दोनों ओर लक्ष्मी और सरस्वती की मूर्तियों पर फिर नजर गड़ाई। वह बोला कलाकारों में किसी को भी अपनी रचना पर घमण्ड नहीं। किसी को भी ब्रह्मा के सदृश 'मिथ्या दृष्टि' कहकर

प्रायश्चित्त नहीं करना पड़ता। सब परम्परा की कठपुतलियाँ हैं। किसी की भी अपनी कोई रचना नहीं। मैंने कठपुतली बनने से इन्कार किया। मैं बम्बई भाग गया। कलकत्ता मेरी जन्मभूमि है, बम्बई कर्मभूमि! और इसलिए बम्बई में सच-झूठ का अपना दर्शन है। पाप-पुण्य के देवासुर संग्राम के लिए बम्बई का फिल्म-जगत् प्रसिद्ध है। यहाँ कई बार अमृत मन्थन हुआ। दीवाला निकलने पर भी सेठ बनने का सपना देखते रहना—यह है बम्बई। गिरकर भी यही मानकर चलना कि अभी पीठ नहीं लगी। बम्बई की भाषा में दो शब्द परम आवश्यक हैं—'चालू' और 'खलास'! बस यही कोशिश रहती है कि खेल चालू रहे, खलास न हो जाय।

नीलू ने दोनों हाथों से वेणी में नीले फूल को फिर से खोंसते हुए कहा, 'मेरे पिताजी कहते हैं, जब रंगमंच पर झूठ का झंडा उठाने वाला पात्र अपनी जीवन-लीला समाप्त करता है—इसी को बम्बई की भाषा में कहेंगे—जब उसकी जीवन-लीला खलास होने लगती है, तो वह जाते-जाते सच को चुनौती दे जाता है—बेटा, तुम्हें भी कुछ करके दिखाना होगा।'

'इसके लिए तो जन्मभूमि छोड़कर बम्बई जाना पड़ता है!' गोविन्दन हँस पड़ा, 'दूर बाजार में जाना पड़ता है। अपना मूल्य सिद्ध करना होता है। कन्या का विवाह होता है तो वह नैहर का घर छोड़कर ससुराल जाती है। यही हाल कलाकार का है।'

शरच्चन्द्र ने गम्भीर होकर कहा, 'इसी को गुरुदेव की भाषा में यों कहेंगे—कलाकार को भी माँ बनना पड़ता है!'

नीलू की वेणी पर नीला फूल मुस्करा रहा था। उसकी आँखों में दूर के सपने लहरा रहे थे। सँभलकर बोली, 'दोपहर का सूर्य सिर पर आ गया! माँ राह देख रही होगी।' और फिर हँस पड़ी, 'बम्बई जाऊँगी तो वहाँ कौनसी माँ रास्ता देखेगी?'

'मैं तो यही साधना करूँगा!' शरच्चन्द्र ने दृढ़ घोष-स्वर में कहा,

यहीं अपने बरक्सा म जहाँ तपस्या करके दस प्रजापति शापमुक्त हुए थे।'

हम तो किसीने नाप नही दिया ! गोबिन्दन हँस पड़ा 'हमारे शापमुक्त होने का तो प्रश्न ही नही उठता।

नीलू बोली प्रजापतियों के शापमुक्त होने की कथा मेरे पिताजी को बहुत प्रिय है। जब वे कॉलेज मे प्रिंसिपल थे तो विद्यार्थियों के सम्मुख बरक्सा की प्रशसा के पुल बाँधते समय यह कथा भी अवश्य ले बैठते थे।

हम भी सुनेंगे वह कथा नीलू ! तुम सुनाओ सक्षप म।' गोबिन्दन मुस्कराया देव-कथा की बाँसुरी बजाओ, नीलू ! कथा कहने का भी एक ढग होना है वह तुम्हें ही आता है।

नीलू दोनों हाथों मे वेणी को ठीक करने लगी। गोबिन्दन ने नीले फूल को सँभालते हुए कहा फूल न गिर जाय।

नीलू मुस्कराई जसे नीला फूल भी मुस्करा उठा।

'अब फिर नहीं हाती ! शखधरन म उठना चाहा।

अरे बठो अभी। नीलू की देव-कथा इस गोष्ठी की अन्तिम वस्तु होगी। और देखो नीलू ! पूरा चमत्कार दिखाओ। यह कथा कुछ-कुछ भूल चुका हूँ। पाँच बरस बरक्सा से बाहर जो रहा। तुम्हारे मुँह स सुन लूँगा एक बार तो फिर नहीं भूलूँगा। कथा की महकती आत्मा शब्दों म खिल उठे। शब्दा म अमिय रसधार बहा दो। यह न हो—शब्द आय शब्द गय। शब्दों म अर्थ की लय जगा दो। नीलू तुम्हारी क्या बात है !'

यह विरुदावली है अथवा मसका पालिश ? नीलू न हँसी दबाते हुए कहा अम्बई की सभ्यता का असली रंग है मसका पालिश, जो चालू और ग्लास से याद नहीं पहले आता है। अब छोड़ो। मेरे पिताजी कहा करते हैं यह देव-कथा गम्भीर है मनोहर है गरजती-गूँजती मातृनिद्रा सागर-लहर नहीं यह गम्भीर है साम-गान सी क्योंकि इसम

साम-गान का उल्लेख आता है। और वे कहते हैं

'वे कुछ भी कहते हों' दाखधरन भुँभलाया 'तुम कथा सुनाओ और फिर उठने की बात करो।'

नीलू कथा कहने लगी—

'एक बार वीणा पर साम-गान की धुन बजाते नारद विष्णु-लोक पहुँचे। भगवान उनके वीणावादन पर मुग्ध हो गए।

नारद वहाँ से चले तो भगवान् भी पीछे-पीछे हो लिए। इसे कहते हैं संगीत का चमत्कार।

ब्रह्मलोक में पहुँचकर नारद साम-गान की वही धुन ब्रह्मा के सम्मुख खड़े होकर बजाने लगे। सहसा ब्रह्मा ने नारद के पीछे खड़े विष्णु को देख लिया। ब्रह्मा ने साष्टांग प्रणाम किया।

विष्णु झट लुप्त हो गए। प्रणाम के पश्चात् ब्रह्मा उठे तो प्रजापति एक साथ अट्टहास कर उठे। उन्होंने यही समझा कि आज ब्रह्मा ने नारद को ही साष्टांग प्रणाम किया है।

ब्रह्मा ने प्रजापतियों को शाप दिया—मर्त्यलोक में पहुँचकर जन्म मरण चक्र में फँसकर कष्ट भोगो।

प्रजापतियों को दुखी देखकर नारद बोले—मैं एक स्थान बताता हूँ जहाँ जाकर तपस्या करने से तुम शापमुक्त हो सकोगे।

नारद ने अपना वल्कल नीचे फेंक दिया जो एक नारियल-गाछ पर आ लटका। वरकला की गेरुआ धरती पर ही था वह नारियल गाछ। वल्कल का ही अपभ्रंश है वरकला।'

'अपना तो वरकला ही ठीक है।' दाख मुस्कराया 'यही अपनी जन्मभूमि यही कर्मभूमि।'

गोविन्दन हँसकर बोला, 'वरकला का एक अर्थ श्यामलता के बीच से झाँकता दूज का चाँद भी तो है। वर' और 'कला'। 'वर' हुआ 'वार' अर्थात् पूर्ण अथवा क्याअल 'वार' ही घिसकर 'वर' बन गया। 'कला' अर्थात् दूज का चाँद। इस प्रकार वरकला का यही अर्थ हुआ।

'भरपूर दूज का चाँद' अथवा 'श्यामलता के बीच से झाँकता दूज का चाँद'। नीलू हँस पड़ी 'मेरे पिताजी तो वरकला का यह अर्थ कभी स्वीकार नहीं करेंगे। मुझे अच्छा लगा दादा।'

गलधरन उठकर खड़ा हो गया।

नीलू ने गोविन्दन को हाथ से पकड़कर उठाते हुए कहा 'तुम्हारा अर्थ मुझे अच्छा लगा। इस पर यम्बइया बुद्धि की छाप है। अब यह छाप मेरे सपनों पर लगेगी। मेरे सपनों की श्यामलता के बीच से झाँकता दूज का चाँद मुझे वरकला से अलग करके नहीं रह सकता। क्यों दादा ठीक है न? मेरी जन्मभूमि है वरकला कर्मभूमि का अभी कुछ ठीक नहीं।'



७:

दामोन्दरन को सब स्मरण था जस यह कल की बात हो। वर्षा के दिन मेघ मृदंग बजा रहे थे वह मेघल आकाश जैसे बराबर उसकी स्मृति म देश-काल की कजरारी-कटीली चितवन-छाप लगा रहा हो। एसी ही भीनी गन्ध उठ रही थी उस दिन भी! पछुवा की बाँसुरी बज रही थी आज ही के समान। झर झर झरते जल का सम्मोहन कोर-कोर वर्षा रागिनी! कई बार वर्षा-ऋतु आई और चली गई। उस दिन की स्मृति मन म रमी रही मीनाक्षी मन्दिर के सहस्र-स्तम्भ-मण्डप सी। दास पीतल की मातृ-मूर्ति की घिसाई कर रहा था जब रुद्रपदम् आज ही के समान बाहर स भीगकर दुकान में आ घटे थे आज ही के समान।

'वस्त्र बदल लो दादा!

मैं भीग गया चिन्ता नहीं। वर्षा अपना काम करे हम अपना। दो रागों के बीच का विराम समझो। चिन्ता नहीं।

वस्त्र तो बदल ही लो।

वर्षा म भीगना ही तो बरखा की महिमा है। आज मेरा जन्म दिवस है। बावनवाँ लग गया आज!

दामोदरन न 'मुण्डु (धोती) निकालकर दिया और एक नया पटका भी वस्त्र बदल लो भीतर जाकर। फिर बात करेंगे।

रुद्रपदम् को कमर म सूखा मुण्डु पहनते देर न लगी। सूखा पटका

कन्धों पर डाल लिया।

मूसलाधार पानी पड़ रहा था। बीच-बीच में बिजली चमक जाती। वरकला में दो बार वर्षा ऋतु आती थी—एक बार पश्चिमी मानसून की लाई हुई, दूसरी बार पूर्वी सागर की। धान की फ़सल भी इसी हिसाब से दो बार कटती थी। पश्चिमी मानसून आने पर ही वर्षा का ठाठ बँधता था। कुछ दिनों के विराम के बाद दूसरी वर्षा तो मानो वैसे ही मन रखने को आती हो। तब पानी कहाँ झरता ऐसा मूसलाधार कहाँ ?

वर्षा के सब अपराध क्षमा ! रुद्रपन्म् मुस्कराए, 'और सुनो। आज का ही तो दिन था। छः वर्ष पहले। स्मरण करो भला !

मुझे सब स्मरण है दादा ! कैसे भूल सकता हूँ ? वर्षा की आँखों में मधुर सपने तैर रहे थे। मेघों के मृदंगवादन ने वर्षा राग में नये तार जोड़ दिए थे।

पछुवा के झकोरे। झर झर झरता जल। बिजली की खिलखिलाती हँसी। पापनाशम् की ओर से उमड़ता सागर का द्रुत-गर्जन। झर झर झरता जल जैसे कोई अन्तकथा कह रहा हो। अनगिन मेघों का झकझोर बरसता जैसे कोई मेघ-मल्हार छन-छन छलक रहा हो।

दामोदरन हँसकर बोला, आज ही के दिन छः वर्ष पूर्व तुमने मुझसे एक मूर्ति ली थी दादा ! उसका मान कब चुकाओगे ?

'वह पीतल की मूर्ति तो नहीं !" रुद्रपन्म् मुस्कराए, वह तो हाड़ माँस की मूर्ति है। वह मूर्ति संगीत सीख रही है। उस मूर्ति से एक दिन मुझे गुरुदक्षिणा मिलेगा।

जिस दिन वह मूर्ति संगीत में पारंगत हो गई हम तुम्हें हाथी पर चढ़ाएँगे दादा !

संगीत-विद्या तो बहुत लम्बी दौड़ है। जब दोनों मूक बोलने लगें तब समझो सरस्वती का वरदान मिला।

गुरु की कृपा हो तो सरस्वती का वरदान कौन दूर है ?

वर्षा के नये राग में दूर से उठता सागर-संगीत खो गया। वर्षा की जल धारा में आर-पार देखना सहज न था मानो वरुण वर्षा की इच्छा पर ही जी रहा हो। कोर-कोर पहुँच रहा था वर्षा-जल। वृक्ष प्रसन्न थे, बालक युवक वृद्ध—सभी खिल उठे।

उस दिन भी ठीक ऐसी ही वर्षा हो रही थी दादा! छः वर्ष पूर्व।

आँख झपकते में बीत गए ये सब बरस। समय की गरिमा सागर-सी विशाल है। समय आकृति देता चलता है माथे पर झुर्रियाँ लाता है गाछ के तन पर आयु के चिह्न छोड़ जाता है।

'वर्षा के समान ही समय भी तो दिन रात बरसता है दादा! एक पीढ़ी जा चुकी होती है एक पीढ़ी आ रही होती है और एक पीढ़ी—जैसे हमारी पीढ़ी है—जाना नहीं चाहती टिकी रहना चाहती है जमकर। पर एक दिन जाना ही होगा दादा! ऋतुक्रम के समान हम फिर लौट-लौटकर आते हैं—यह बात तो तुमने ही कही थी अभी उस दिन!

"सो तो ठीक है। ऋतु आयु है गाछ है जीवन! जो पत्तियाँ झर जाती हैं खाद बन जाती हैं। नई पत्तियों में स्वाद की लालसा आकांक्षा हरियाती-लहराती है मुन्‍ना! यही जीवन है। हमारे पुरखे हममें हरियाते-लहराते हैं।

जल-थल एक था। बूँदों की चितवन में कोई प्रश्न नहीं था। धरती की जिज्ञासा प्रतिपल भीनी गंध का आँचल थाम रही थी। हर क्षण दूध की फेन-सरिस मुस्कान सुमन सौरभ का अभिवादन कर रही थी। वरुणा में वर्षा ऋतु का यही रंग था। वर्षा है नवजात वर्तमान। वर्षा का चिर-सत्य प्रश्न नहीं पूछता। बरसती बूँदों की परछाइयाँ गले मिल रही थीं। धरती की गरुवा मिट्टी मजरा चली थी। नये रंग का आँजन आँजे बाँकी-नटोली गंध चितवन। काँपती धरोनियों की विरमता-सा अभिवादन आया मुखर हो उठी थी।

'इसी तरह हुआ करेगी वर्षा जब हम नहीं होंगे।

दामोदरन मूर्ति की घिसाई करता रहा।

हम तो रहेंगे। अरे आने वाली पीढ़ियों में हम ही तो होंगे। इसी तरह कुहनी टेके लेटे-लेटे माँ धरती गाछ-छौना को दूध पिलायगी। यह सघन आकाश तो हम जन्म-जन्म देखने आये हैं। इसी जन्म में देखा होता तो क्या इतना प्रिय लगता?

'ऋतु में ऋतु बाहें डालता है। पीढ़ी में पीढ़ी—यह भी तुम्हारी ही सूक्ति है दादा! हाथी की ईख से मारो! हड्डियाँ खाद बनती हैं—नये-नये राग रागिनियों की खाद। खाद बनना ही महिमा है। नई पीढ़ी में पहली पीढ़ी के सपने ही खिलते हैं। नई पीढ़ी की साँस में पहली पीढ़ी की साँस चलती है।

छपाछप नहा रही थी धरती। वर्षा थमने का नाम ही न लेती थी। सोंधी गन्ध सावधान स्नेहमयी दृष्टि से वरकला का मगन रागिनी में डूब रही थी। मन के सात पाताल में कहीं भय न था। वर्षा नतकी के पद में नाचती थी। ताल समीप आ गया था। वर्षा का अपना छन्द था जिसमें मघा के बन्द ढील पड रहे थे। जल ही प्यार का सार था जल ही विस्तार। बीज-शिशु को धरती का दूध चाहिए। माँ धरती को वर्षा का वरदान! हड्डियों की खाद वर्षा का आह्वान करती आई थी—अमिय रसधार का आह्वान। वर्षा की आँखों में हड्डियों की खाद मुस्कराती थी नये-नये राग जोड़ती थी।

आज के दिन ही तुमने मेरे बालक को शिष्य बनाया था दादा!

अब तो गोविन्दन भी आ गया। पाँच बरस से बाहर राम था।

पिता-पुत्र में मेल बढ़ गया तो बाल्यकाल के मित्र क्यों नहीं चहकेंगे! गोविन्दन संगीत में मन लगा रहा है न?

संगीत तो उसके रक्त में है। उसकी पकड़ भी टानी नहीं।

फिर क्या चिन्ता बात की है?

'यही रट लगाये रहता है—शास्त्रीय संगीत नहीं चलेगा!

अभी बच्चा ही तो है। उम्र समझ आ जायगी। जो गुरुजन है

शिष्यों की भाली आलोचना से क्यों खीझें ? जिज्ञासा का उत्तर क्रोध नहीं। जिज्ञासा तो मीमांसा चाहती है। सब ठीक हो जायगा दादा ! एक बात पूछूं ? याद है कैसे शख को मुझसे माँगा था ? मैं तो समझ ही नहीं सका था जब तुमने आकर कहा—मैं एक मूर्ति माँगू तो दोगे ? मैंने उत्तर दिया—उठा लो दादा ! पूछने की क्या बात है ? मैं अपने हाथ से मूर्ति का मोल तो नहीं लूंगा। मैंने सोचा था तुम मातृ-मूर्ति ही मांगोगे। तुम्हारे मन में तो दूसरी ही मूर्ति की चाह थी। तुम मुस्कराये। दादा तुम्हारी वह मुस्कान मुझे आज भी याद है।

हाँ याद आ गया मुझे भी ! मैंने कहा था—मैं तो जगदानन्द स्वामी के आशीर्वाद से अभिसिक्त हाड मांस की मूर्ति लूंगा।

तब तो तुम्हें सब याद है भाई ! हमारा दादा बहुत अच्छा है। सब याद रखता है। हाँ तो तुम्हारी आँखों में जिज्ञासा देखकर मैंने कहा था—तुम शख को लेना चाहते हो ले लो !

मुझे तुम्हारे वे शब्द कभी नहीं भूल सकते। अपना शख मुझे देते हुए तुमने उसके कान में ये शब्द डाल दिये—शख ! आज से तुम मेरे नहीं दादा के पुत्र हो ! यह तो तुमने ठीक ही कहा था। शास्त्र भी यही कहता है—मातृ देवो भव पितृ देवो भव आचार्य देवो भव।

मेरा शख तो भाग्यशाली है दादा ! उसे तुम्हारे जैसा गुरु मिला। और देवो दादा गोविन्दन से तो वह इस जन्म में होड नहीं ले सकता। बीस पीढ़ियों से जिसके रक्त में संगीत हो उससे भला कोई क्या लाकर होड़ लेगा ?

सो तो ठीक है। सुना है बम्बई में फिल्मों के कुछ म्यूजिक डाइरेक्टर गोविन्दन की सूझ-बूझ की प्रशंसा करते नहीं थकते।

फिल्मी गायन तो बुरी नहीं दादा ! बहुत पैसे मिलते हैं। पैसे के बिना तो गाड़ी नहीं चलती। पैसे ही गाड़ी के बैल हैं।

'पर फिल्मों में संगीत की जो दुर्गति हो रही है, उसे कैसे क्षमा किया जाय ? एक राग की टाँग तोड़कर दूसरे में लगा दी। एक रागिनी की

उंगलियाँ दूसरों में डाल दीं। इसे तुम साधना कहोगे? यह तो साधना का विद्रूप ही हुआ। राग को तो उस रास्ते में कोई स्नेह हो ही नहीं सकता। गोविन्दन को उसका चस्का लग गया। कभी कहता है कच्चे दूध की तरह कच्चा गाना भी तो हो सकता है। कभी कहता है राग संगीत के साथ-साथ दीपक राग भी हर युग में जीवित रहा है। कभी पूछता है शास्त्रीय राग संगीत में बदलना और मधुरों का सागर-संगीत किस तरह शास्त्र विरुद्ध हुआ? मैं तो उसके इन प्रश्नों के कारण चकित हुआ हूँ। हम यहाँ आये पाँच मास से ऊपर हो रहे हैं पर उसका मन बम्बई में है।

वह फिल्मों में सफल हो सके तो क्या बुरा है दादा?

मैं तो चाहता हूँ वह राग के साथ-साथ चले। गोविन्दन में बहुत आग है। फिर भी गोविन्दन परिश्रम करे तो एक ही जनम में राग के साथ हो सकता है। राग की एक विशेषता यह है कि षड्ज और पंचम उसके कंठ में समान लाघव से उसका साथ देते हैं। गोविन्दन का कण्ठ इतना अच्छा नहीं। ताल पर मुक्त गत है।

'बात तो तब है दादा कि जैसे त्रिवेन्द्रम् के संगीत-सम्मेलन में प्रसिद्ध संगीताचार्य फैयाज खाँ ने हमारे राग की कला पर रीझकर उसे गले से लगा लिया था वैसे ही फैयाज खाँ का पट्टशिष्य कल को हमारे राग की कला पर रीझ जाय। एक बात पूछूँ दादा! क्या फैयाज खाँ भी दीपक 'राग'[1] पक्षी की आयु एक सहस्र वर्ष की मानते हैं? क्या वे भी मानते हैं कि दीपक राग की चोंच में सात छेद होते हैं जिनसे शास्त्रीय संगीत के सात स्वर निकले? राजबाबू दासगुप्त तो इन बातों पर हँसते हैं। कहते हैं यह तो बहुत कही गई है कि आयु पूरी होने पर दीपक राग जंगल से घास-फूस इकट्ठी करके दीपक राग गाता हुआ उसके चतुर्दिक नाचता है और राग से चिता में आग लगाकर जल मरता है और फिर राख के ढेर से दोबारा जी उठता है।

१ ककनूस।

'देशमुख बाबू तो दादा-पुत्र हैं। दीप-ज्वाल की कथा में है एक प्रतीक। उसे समझने के लिए बुद्धि चाहिए। यही हड्डियों की खाद वाली बात है। कला कभी मरती नहीं। नई पीढ़ी में पुरानी पीढ़ियों की कला फिर फिर जी उठती है।

'देशमुख बाबू तो इस बात पर भी हँसते हैं दादा कि षड्ज मयूर के स्वर से निकला और ऋषभ पपीहे के स्वर से। कहते हैं गान्धार बकरी के स्वर से निकला है तो एक दिन संगीत तो बकरी चर जायगी। मध्यम्, पंचम्, धैवत और निषाद क्रमशः कलंग कोयल घोड़े और हाथी के स्वरों से निकले इस स्थापना पर देशमुख बाबू हंस हँसकर लोट पोट हो जाते हैं। कहते हैं यही बात है तो इन पशु-पक्षियों को एक जगह बन्द करके इनसे क्यों नहीं कहते कि मिलकर राग रागिनियों का आरकेस्ट्रा छेड़ें।

देशमुख तो नास्तिक हैं। उनकी बात छोड़ो।

दामोदरन ने प्रसंग बदलकर कहा 'जो भी यात्री आता है देवता की मूर्ति ही मांगता है। मातृ मूर्ति उतनी नहीं बिकती।

पर तुम्हारी कला तो मातृ-मूर्ति में ही शिखर पर पहुँच रही है।

सो तो ठीक है दादा! गोविन्दन बता रहा था कि पाँच बरस पहले जब वह बम्बई गया तो मेरी एक मातृ-मूर्ति वह साथ लेता गया था और फिल्मों की किसी अभिनेत्री को उसने वह मूर्ति उसके जन्मदिन पर भेंट की थी और उसे वह मूर्ति आज तक पसन्द है। पर दास की माँ मुझ पर हंसती है। देशमुख बाबू भी हँसते हैं। एक मन कहता है वही माल बनाओ जिसकी खपत है एक मन कहता है मातृ-मूर्ति में अपनी कला को चरम सीमा दो। यही मेरे मन की दुविधा है।

यह कहो कि तुम्हें भी दो परछाइयाँ दीखती हैं। रुद्रपन्म् हंस पड़े।

मातृ-मूर्ति में समय भी अधिक लगता है। देवताओं की मूर्तियाँ ढालने के लिए तो ठप्पे बना रखे हैं। मातृ-मूर्ति के लिए हर बार मोम

म नई ही मूर्ति बनाकर इसका ठप्पा बनाता हू। दो-चार मूर्तियाँ ढाल लीं और ठप्पा तोड दिया !

रुद्रपन्म् मुस्कराय और दामोदरन के हाथ से मातृ-मूर्ति लेकर ध्यान स न्खन लग। मेघ-गम्भीर स्वर म बाले 'पुत्र का कपोल अपन कपोल स चिपकाय खडी है माँ। इस मुद्रा में आदि-शक्ति दूध-गाछ ही तो है !'

वर्षा का जलतरग पहल क समान ही बज रहा था जसे मेघल आकाश की मेघ रागिनी भी इसी टेक पर झूम उठी—इस मुद्रा म आदि नक्ति दूध-गाछ ही है !



भात

कल है ओणम्—श्रावण मास के श्रावण नक्षत्र का योग। इसी दिन महाबलि सात पाताल से अपनी प्रजा का सुख-दुख पूछने आते हैं। श्रावण से हुआ थी ओणम् फिर तिर ओणम्। तिर भी सूखे पत्ते की तरह झड़ गया। रह गया ओणम्—केरल का मुख्य त्योहार। ओणम्—मलयालम में सर्वाधिक श्रुतिमधुर शब्द। महाबलि आते थे इसी दिन। घर घर महाबलि की मूर्ति बनती थी। महाबलि के राज्य में सब सुखी थे—न कोई चोर-उचक्का था न याचक। तभी तो उस सम्राट को इतना कष्ट हुआ जो महाबलि का अतिथि होकर रहा। यहीं उस बेचारे का वह नियम टूट गया। वह दान करके ही भोजन करता था पर यहाँ कौन था जो उसका दान स्वीकार करता? सुख-समृद्धि का सपना देखने वरकला में भी गम्भा मिट्टी की मूर्ति बनती थी घर घर। अन्नपूर्णा ने भी बनाई महाबलि की मूर्ति। पर जब गोविन्दन ने माँ के सामने बैठकर कहा मैं तो कल ही बम्बई जा रहा हूँ! तो माँ को लगा कि ओणम् के दिन महाबलि की कच्ची मिट्टी की मूर्ति उसके आँसुओं से भीग जायगी।

तो क्या इस वर्ष का ओणम् मेरे लिए आँसू ला रहा है?

मैं तो कल ही जा रहा हूँ माँ!

कल तो महाबलि चरण डालेंगे घर घर। भला कोई ओणम् के दिन भी घर से जाता है! महाबलि सा महादानी थे केरा! उन्होंने वामन

को अपनी धरती लेकर दान की महिमा प्रतिष्ठित की थी।

मुझे तो दान की इस महिमा पर हँसी आती है माँ! गोविन्दन चुप न रह सका और यह भी कल्पना-मात्र है कि दानी को अपने दान का फल प्राप्त करने के लिए फिर से जन्म धारण करना पड़ता है। बम्बई में एक सज्जन कह रहे थे—सब गल्पशीलता बकवास है। वामन और महाबलि की कथा का वह दूसरा ही अर्थ बता रहे थे।

मैं भी सुनूँ!

वे कह रहे थे असल बात यह है कि आर्यों ने दक्षिण में जाकर अपनी धौंस जमाई और इसे ठीक सिद्ध करने के लिए वामन और महाबलि की कहानी गढ़ ली। न केवल यह कथा गढ़ ली बल्कि दक्षिण वालों को भी इस पर विश्वास दिला दिया। इससे तो दक्षिण वालों की मूर्खता ही सिद्ध होती है।

यह तुम कहाँ बोल रहे गोविन्दन! यह तो बम्बई बोल रही है। छि छि! यह अनर्गल प्रलाप तुम्हें अच्छा लगता है! मैं वारी जाऊँ। एक संगीताचार्य के पुत्र के मुख से ये बातें कैसे शोभा दे सकती हैं?

वह महोदय तो यह कह रहे थे माँ कि यह कथा भी आर्यों की विजय गाथा का ही प्रचारात्मक रूप है कि परशुराम ने गोकर्ण के स्थल पर खड़े होकर सागर में अपना परशु फेंका और वह कन्याकुमारी के समीप जा गिरा और गोकर्ण से कन्याकुमारी तक सागर में से केरल की धरती निकल आई!

'हरि ओम्!' अन्नपूर्णा ने गोविन्दन के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, मेरे पुत्र होकर तुम इतने नास्तिक कैसे बन गए? बम्बई में यही सब बातें सीखनी हों तो बम्बई जाने का विचार ही छोड़ दो!

'तुम ही तो कहा करती हो माँ कि सुनो सबकी और करो अपने मन की।

सो तो मैं अब भी कहती हूँ!

'बम्बई में तो मैं अगस्त्य की कथा पर विचार करते हुए इसी

निष्कर्ष पर पहुँचा कि आर्यों द्वारा दक्षिण विजय का यह एक और चम त्कारपूर्ण प्रचार है। तुम्हारा मन मानता है माँ कि अगस्त्य को विन्ध्य पर्वत ने दण्डवत् प्रणाम किया था और अगस्त्य ने उसे आज्ञा दी थी कि जब तक मैं लौटकर न आऊँ तुम इसी प्रकार लेटे रहना?

कथा तो कथा है। इससे अच्छी शिक्षा ही लेनी चाहिए बेटा!

तुम्हारा मन मानता है माँ कि अगस्त्य ने सागर-जल से आचमन करके सम्पूर्ण सागर का सुखा डाला था और पीछे वरुण देव की विनीत प्रार्थना पर ही ऋषि ने फिर से सागर का जल लौटा दिया था?

तर्क हर जगह तो नहीं चलता बेटा!

'यह कहना कि दक्षिण भारत में आकर अगस्त्य ने तमिल भाषा का सर्वप्रथम व्याकरण तैयार किया मुझे तो इसमें भी आर्यों के पुरा तन प्रचार-साधनों की ही गन्ध मिलती है। आश्चर्य तो यह है कि दक्षिण वाले मज़े से इन वार्ताओं पर विश्वास किये बैठे हैं।

माँ ने बेटे के सामने त्योरी चढ़ाना तो उचित न समझा। मिसरी और इलायची देते हुए बोली 'हर दिन ओणम् हो मैं वारी जाऊँ! क्या तुम तीन दिन भी नहीं रुक सकते? अपने पिता और दादा को श्रिवेन्द्रम् से लौट आने दो फिर चले जाना। मैं तुम्हें रोकूँ भी नहीं। मैं तो उलटी तुम्हारे पिता से भी तुम्हारे ही पक्ष की बात कहूँगी।

माँ सामने बैठी थी मातृ मूर्ति के सदृश। अनेक अनुभवों ने उसके मुख पर रेखाएँ डाल दी थीं। उसके माथे पर समय ने हल चलाया था और उसकी रेखाएँ कनपटियों तक चली गई थीं। गोविन्दन को लगा माँ के दूध का मोल तो बड़े-बड़े ऋषिवर और युग-पुरुष भी नहीं चुका सके। माँ ने ही ये आँखें दी जिनसे मैं देख सकता हूँ। उसने मन ही मन कहा—स्नेहमयी माँ प्रणाम! पुण्य गर्भ-क्षेत्र! मेरी आदि-जन्मभूमि! तुम्हें शत-शत अभिवादन! जैसे उसने मूर्तिकार की दृष्टि से नहीं पुत्र की दृष्टि से ही माँ को देखा हो। मन में आया तीन दिन ही की तो बात है क्या न रुक जाऊँ? माँ को दुःख होगा। माँ ठीक सोचती है। ओणम्

क न्दिन तो मुझे नहा जाना चाहिए। चलकर नीलू से कहता हूँ वह भी मान जायगी। तीन न्दिन बाद ही सही। माँ को रुष्ट करना ठीक नहीं।

फिर बम्बई का जीवन उसकी आँखों में घूम गया। माँ के लिए बम्बई म इतना सम्मान भावना न थी। तभी तो झुँझलाकर काईन-कोई मित्र पूछ बठता— तुम धरती पर उगे थे या आकाश से गिरे थे? कितनी विचित्र बात था कि किसी का स्थान भी इधर-उधर हो जाय तो उसका कथा-बन्ल भाई उसके कधे से बाल साफ करते हुए यही कहता—'क्या वह तुम्हारी माँ क पास चला गया? यह बात तो बहुत बार सुनी गई–तुम्हारी माँ का सिर! यह उस समय कहा जाता था जब कोई किसी की बात समझ ही न रहा हो। मुँह चिढ़ाने की बात माँ तक पहुँचकर ही न्म लती थी। मसका लगाने म पसा आता है तो ठीक है। बस पसा आना चाहिए। सात रुपय मुफ्त हाथ लगें तो आदमी भिखारी के हाथ पर इकन्नी रखने मरता नहा।

'बरकला म तो एक पसा भी क्यों अधेला लकर ही भिखारी प्रसन्न हो जाता है माँ! बम्बई म चार पसे स कम म भिखारी के मुख से आशीर्वाद नहीं निकलता।

तुम तो दानशीलता पर हँस रह थे! माँ ने चुटकी ली 'क्या तुम भी कभी भिखारी क हाथ पर चार पस रखत हो?

बाहर अमलताम और आम के पत्तों म खेलती हवा के स्वर म सागर का जय-घोष मिल रहा था। गोविन्दन ने माँ की ओर दखकर कहा 'माँ तुम कितनी अच्छी हो! तुम्हारी गाली भी मेरे लिए आशीर्वाद है।

माँ मुस्कराइ 'नीलू भी नहा जायगी। मैं नीलू की माँ का समझा लूँगी। नीलू मान जायगी। तुम नीलू का साथ देने के लिए ही ओणम क न्दिन बम्बइ जाना चाहत थ? और दखा गोविन्दन एक बात सुन लो कान खोलकर। मनुष्य का आयु क अनुसार ही बुद्धिमान दाखना चाहिए, उसस अधिक नहा। यह पुरानी सूक्ति है, सुनहरे शब्दों में लिखने योग्य।"

माँ की आँखों में पुरानी स्मृतियाँ तैर रही थीं। उसने थककर गोविन्द की ओर देखा। बाँस और अमलतास के पत्ते मानो मदनवादन में एक-दूसरे से होड़ ले रहे थे। सागर का जय घोष उनके मस्तिष्क पर दस्तक दे रहा था। बीच-बीच में भींगुर अपना इकतारा छेड़ते रहे। पछुवा के झकोरों में दीवट पर दीये की लौ मानो बुझते-बुझते फिर बच जाती।

'माँ स्रष्टा है पुत्र रचना!' गोविन्द ने मातृ ऋण का अनुभव करते हुए कहा, 'माँ इसीलिए मुझे नरेन के पिता की बनाई मातृ मूर्ति इतनी अच्छी लगती है। मैं पहली बार बम्बई गया तो ऐसी एक मूर्ति ले गया था। वह मैंने बम्बई में इरा को भेंट की थी उसके जन्मदिन पर।'

'इरा कौन?'

'इरा एक फिल्म अभिनेत्री है माँ!' गोविन्द ने खिड़की में पड़ी मातृ-मूर्ति की ओर संकेत करते हुए कहा, 'यह भी उसी के लिए ले जा रहा हूँ।'

'ऐसी ही मूर्ति उसे पहले भी दे चुके हो। फिर इसमें क्या बात है?'

'यह कला-दृष्टि से पहले वाली मूर्ति से कहीं अच्छी है।'

'मुझे तो कोई अन्तर नहीं दीखता। एक ही ठप्पे की मूर्तियाँ अलग अलग कैसे हो सकती हैं?'

'एक ही ठप्पे वाली बात तो ठीक नहीं माँ! देव मूर्तियों के लिए नरेन के पिता ने ठप्पे बना रखे हैं। पर मातृ-मूर्ति के लिए वह पुराना ठप्पा तोड़कर नई मूर्ति ढालते हैं।'

'मुझे तो सभी एक-सी लगती हैं।' माँ कहती है बालक का कपोल अपने कपोल से चिपकाये।

जो स्वयं माँ है जीवित कला-मूर्ति है उसकी आँखों में पीतल की इस निर्जीव मातृ मूर्ति का क्या मूल्य हो सकता है? गोविन्द हर पत्र में इरा ने फरमाइश की थी कि नई मूर्ति लाना। वह माँ तो नहीं बनी

पर उसके भीतर माँ का हृदय मचल रहा है।

उसका विवाह तो हो गया होगा ?

नहीं माँ! उसका विवाह नहीं हुआ। विवाह कराने की बात उसके सामने है। माँ का स्नेह उसके भीतर उमड़ रहा है। तुमने ही तो एक बार बताया था माँ कि मातृ भावना का सम्बन्ध विवाह से उतना नहीं है जितना कन्या के हृदय से। इरा के भीतर जो मातृ भावना है उसी के कारण उसे यह मूर्ति इतनी अच्छी लगती है। उसकी माँ ने उसे बचपन से ही यह शिक्षा दी थी कि बड़ी होकर उसे गृहस्थी चलानी चाहिए। पर उसकी माँ मर गई और इरा पर घर का भार आ पड़ा।

ओह! किसी की माँ न मरे संसार में! अन्नपूर्णा ने ठण्डी साँस लेकर गोविन्दन की ओर देखा। और थोड़ा सँभलकर उसने भृकुटि का त्रिशूल बनाते हुए कहा, तुम मत पड़ना इरा के चक्कर में, क्योंकि बेटा! कहते-कहते वह रुक गई और सोचने लगी—इस बात में गोविन्दन कच्चा नहीं होगा। इस बात में वह अवश्य अपने पिता पर है। वह घटना उसकी कल्पना में घूम गई—गोविन्दन के जन्म से पहले इक्कीस वर्ष पहले जब उसका विवाह भी नहीं हुआ था। कुम्भकोणम् के रामस्वामी के मन्दिर में संगीत-सम्मेलन हुआ जिसमें गोविन्दन के पिता का भी गायन और वादन हुआ था। उस पर मुग्ध होकर अन्नपूर्णा ने स्वयंवरा के रूप में रुद्रपदम् को पति चुन लिया। वहाँ से चलकर रुद्रपदम् कन्याकुमारी पहुँचे। अन्नपूर्णा भी अगले दिन घर से भागकर कन्याकुमारी पहुँच गई। धर्मशाला में उसने फिर खड़े-खड़े रुद्रपदम् की वीणा-वादन सुना और साहसपूर्वक कह ही तो दिया, मुझे अपनी जीवन-संगिनी बना लीजिए! रुद्रपदम् ने इन्कार में सिर हिला दिया। अन्नपूर्णा ने कन्याकुमारी की चट्टान से सागर में कूदकर प्राणों की आहुति देने का निर्णय कर लिया। अपना निर्णय उसने रुद्रपदम् को भी बता दिया। रुद्रपदम् देर तक आत्महत्या को महापाप सिद्ध करने का यत्न करते रहे। अन्नपूर्णा कब माननेवाली थी! कब वह चट्टान से कूद गई, कैसे रुद्रपदम् ने ही

है कि वीणा-वादन द्वारा सहस्रबाहु भगवान् के बाहु उठाने या इन्य स्वरों द्वारा प्रकित कर डालूं । ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि झर झर जल बरस रहा है और हम यह आश्वासन दे रहे हैं कि अपने संघर्ष में मानव को भी सहस्रबाहु होना होगा एक-एक बाहु उठाकर अपने सिर पर सफलता का मुकुट रखना होगा। माँ तुम्हें अच्छी नहीं लगती पिताजी की लगनी ?

अच्छी क्यों नहीं लगती बेटा ?

और सुनो माँ ! यह शब्दचित्र भी बढ़िया है जिसमें हमारे प्रान्त के उस नृत्य का उल्लेख आया है जो नया धान कट जाने पर होता है। धान का ढेर एक विशेष आकृति लिये रहता है। पहले नये धान की पूजा होती है। फिर वयोवृद्ध स्त्रियाँ और पुरुष एक ओर बैठकर गाते हैं और सौभाग्यवती कुलवधुएं अपने आँचलों की ओट में नये धान की बालियाँ और घी के दीप लिये धान के उस ढेर के चतुर्दिक नाचती हैं। लगता है यह नृत्य कभी शेष नहीं होगा। सुनो माँ ! बम्बई जाते ही मैं नये धान के इस दीप-नृत्य की संयोजना पूरे पाँचसौ रुपये में बेचकर दिखाऊँगा।

आधे रुपये मुझे भेजना ।

बहुत अच्छा माँ ! कहो तो पाँचसौ के पाँचसौ ही भेज दूं।

पुरखों का यश बढ़ाओ गोविन्दन जैसे भी बढ़ा सकते हो। मैं तुम्हारे बम्बई जाने के विरुद्ध नहीं हूँ पर चिट्ठी में देर न किया करो। कमाओ-खाओ आशावादी रहो। परिश्रम से मुंह न मोड़ो। तुम्हारे लिए हर दिन ओणम् रहे ! और सुनो अब सो जाओ ! कल ओणम् है महाबलि आयेंगे। एक दिन के लिए ही सही। अच्छा अब सो जाओ।

दीया बुझाकर माँ-बेटा सोने का यत्न करने लगे। पहवा के भकारे सज हो गए थे।

सवेरे उठकर माँ के मुंह से पहला बोल यही निकला आज ओणम्

है। आज तो तुम बम्बई जाने का नाम न लेना।'

नीलू ने आकर कहा, मैं तो रुकूँगी नहीं। तुम भले ही रुक जाओ, गोविन्द !

तुम जा सकती हो ओणम् के दिन तो मैं क्या नहीं जा सकता हूँ ? उसने माँ को आवाज दी "माँ आओ हम फैसला करें।

फैसला यही है कि तुम आज बम्बई नहीं जा सकते।' माँ ने अधिकार जताया।

तुम कहोगी तो रुकना ही होगा।

पिता के आने से अगले दिन ही चले जाना।

महाबलि की मूर्ति के सामने खड़ी होकर माँ प्रार्थना करती रही। वह लौटकर आई तो गोविन्द उच्च स्वर से नीलू को आत्मकथा खोल कर सुनाने लगा—

हर दिन ओणम् हो ! अमृत से मंगल घट भरे ! सब प्रसन्न रहें ! हर संकट टले ! मंगल-ही-मंगल हो !

यही तो मैं भी कहती हूँ ! माँ बीच में बोल उठी मंगल ही मंगल हो ! हर दिन ओणम् हो !

'सुनो भी माँ ! गोविन्द फिर उच्च स्वर से पढ़कर सुनाने लगा—

जय महाबलि ! स्वागतम् श्रीमान् ! आइए, पधारिए ! गरुआ मिट्टी से बनी अपनी मूर्ति देखिए।

'बड़ों में बहन में रहें घर के सदस्य। मधुर वचन बोलें। यही सूक्ति अनापती है मेरी वीणा !

सबकी बाँहें तुम्हारे स्वागत में उठ रही हैं। बड़े घरा की कुल वधुएँ आँखें बिछा रही हैं। नागस्वरम् बज-बज उठता है। हेम-मुकुट पहन मुस्कराते महाबलि आये !

'जय विराट ! जय अखण्ड ! जय अद्भुत ! जय अक्षय ! बार-बार बज-बज उठती है मेरी वीणा।

'हम निज मह की बलि दे रहे हैं। हम वीतराग तो नहीं, पर हम तो रागी हैं।

हम दूध-गाछ हैं। बहुत क्या कहें ? शुद्ध कच्चे दूध के स्रोत ! हम हाँक दे रहे चिर अतीत को !

हम आगत के बीज ! हम कमनीय ! हम महात्यागी ! हम वल्लभ ! हम सदा सृजन में जुटे—सृजन के सौदागर।

हम नाल गगन को हाँक मारते हाथ उठाकर ! प्रणाम भरे हम स्वर के खवटिया !

हम अनागता वनिता को फिर फिर बुला रहे हैं।

"हम स्वर के मछुए—

मछली-जाल उठाये चले जा रहे हम स्वर के रसिया !

हम प्रवाह की याद ! महाकल्याण !

आइए, पधारिए, महाराज ! श्री महाबलि कीजिए सागर-स्नान !

स्वागतम् श्रीमान् ! पुण्य ओणम् के दिन हम करते हैं स्वर गान !

सुनते-सुनते माँ आत्मविभोर-सी बनी रही।

नीलू और गोविन्दन घूमने चले गए। वे प्रसन्न थे। इसी गदरी मिट्टी से उनका जन्म हुआ था। ओणम् उन्हें प्रिय था। महाबलि के आगमन पर फूल-चन्दन धूप अर्घ्य देने में वे भी सम्मिलित हुए। आज तो काम-काजी व्यक्ति भी विचर रहे थे। नीलू वारी नई-नई भंगिमाएँ लेकर आता है ओणम् शत्-शत् मोद मुखरा सहस्र-पथ गामिनी आता है ओणम् !'

तुम कविता भी कर सकती हो नीलू ! गोविन्दन मुस्कराया—ओणम् की नानाविध लीलाएँ मुझे भी कम प्रिय नहीं। मेरे मन में कोई शंका नहीं कोई जिज्ञासा नहीं। चिर चपल ओणम् को मेरा अभिवादन !

नीलू और गोविन्दन आधा दिन ओणम् का रसास्वादन करते रहे।

हम तो आज ही जा रहे हैं, माँ ! गोविन्दन घर आकर बोला।

'यह नहा होगा ।

सात मास तो रह लिया माँ ! तुम्हार मन नहीं भरा ?

यह तो असम्भव था कि अन्नपूर्णा गोविन्दन को स्टेशन तक पहुँचाने न जाती। रास्ते में बैलगाड़ी के धचके खाने पड़े जिनसे अन्नपूर्णा का घृणा थी। उसकी आँखों में आँसू थे।

'मुझे ता लगता है कल की बात है जब तुम दूध-पीने बालक थ।

माँ की मुत्मुना पर पुरानी स्मृति सजग हा उठी, जस उस पूरा पूरा स्मरण हो। दूध पीत पीते गोविन्दन दाँत मारता था। जोर स दूध खींचता था जस कोई उसका पीछा कर रहा हो। स्तनो क नीच खीच सी दौड़ जाती थी।

गाड़ी आई तो नालू का माँ बोली जाते ही पत्र लिखना !'

'अवश्य नीलू न मुसकर कहा मैं भूलूँगा नहीं !'

'योगम् तो आन के लिए भी शुभ है और जान क लिए भा !' नीलू के पिता ने व्यवस्था दी।

अन्नपूर्णा की आँखो से भर भर आँसू भर रहे थ बावरी मत हो बहन ! नालू का माँ न अपन आँचल स अन्नपूर्णा के आँसू पोंछ डाल।

माँ प्रणाम ! गोविन्दन ने डिब्बे से मुँह निकालकर कहा। और गाडी के घरघराते पहियों की लय पर भर भर माँ क आँसू भरत रहे।



आठ

सागर चक्रवाल पर अब सिंदूर और गुलाल उड़ रहा था। धारी धारी ऊदा-नीला और जाने क्या-क्या रंग उचक-उचककर अन्नपूर्णा को देख रहा था। सूरज गया तो ये रंग आये। आज कोई नई बात नहीं। ऐसा ही होता है, ऐसा ही होता आया है। सूरज उगता है, सूरज डूबता है। किरणों की दौड़ा-दौड़ी नित नित सागर में ही आकर हार मानती है। दिन भर तो किरणें सभी को 'यह कर! वह कर!' की सीख देती नहीं अघाती। इनकी टेर दिन में एक बार भी नहीं थमती। रात की अन्धी हथिनी है, टटोल-टटोलकर चलती है। इसके लिए सब बराबर है। चौक पूरो चाहे पूजा का, चन्दा थाप दो दीवार पर। दिन का अभिनय गया। अब यह सिन्दूर-गुलाल का खेल भी चुक जायगा। घर घर अन्धी हथिनी डोलेगी।

अन्नपूर्णा देख रही थी। सागर-तट पर ज्वार भाटा मस्त-मगन अभिनय किये जा रहा था। लहरों के मुँह में यही गीत है, गीत का वही मुखड़ा है। एक लहर आती है, फिर दूसरी, फिर तीसरी। एक दूसरी को पकड़ना चाहती है, पकड़ नहीं पाती। बड़ी लहर है माँ, उससे छोटी लहर भाई, उससे भी छोटी लहर परम सुन्दरी बहन। बहन के रूप पर भाई मुग्ध हो उठा। छि: छि:! बहन ने अच्छा किया, सागर में कूद गई। भाई भी कब मानने वाला था! बहन के पीछे कूद गया। दोनों की रक्षा के हित माँ भी कूद गई। बहन सागर की लहर बन

गई। माई भी लहर बन गया। माँ भी जानती थी यह चमत्कार वह भी लहर बन गई।

अन्नपूर्णा सोच रही थी। सब छलना है। रंग जगते हैं रंग बुझते हैं। सब खेल चुक जाता है। सूरज डूबता है तो अंधी हथिनी घूमने लगती है घर घर डगर डगर। पर ये लहरें कभी नहीं थकतीं। पहले सबसे बड़ी लहर उठती है जो माँ है उससे छोटी लहर, माई, और उससे भी छोटी लहर परम सुन्दरी बहन। यह तो मात्र कथा है। ऐसा नहीं हुआ होगा। परम सुन्दरी बहन लहर नहीं बन पाई होगी। लहर बनना सहज नहीं।

वह गोविन्दन के सम्बन्ध में सोचने लगी—जाकर पहुँच की चिट्ठी भी नहीं लिखा। नीलू की माँ को लालू की चिट्ठी आ गई। उसे किसी विद्यालय में नृत्य विद्या सिखाने का काम मिल गया। अच्छा है सब काम करें। सब अपना भार उठाएँ। वाटिका की चारदीवारी पर कुन्नियाँ टके उसने देखा—अब न गुलाल था न सिन्दूर, न ऊन-नील रंग की धारियाँ। सब एकाकार हो गया था—अन्धकार। अब न सबसे बड़ी लहर दीखती थी जो माँ थी न वह लहर जो भाई थी न परम सुन्दरी चन्न की मन्त्र प्रयोग द्वारा परिवर्तित मुखाकृति ही सबसे छोटी लहर के पीछे भोंकर निरखी जा सकती थी। लहरों के अभिनय का भी एक अन्त है जो कथा में डाल दिया गया। लहरों का अभिनय शेष नहीं होता। यह गिरस्ती निरा दायित्व का पहाड़ है। सब सुख-कल्पना निरी धूप-छाया है।

अन्नपूर्णा को यह बात अच्छी न लगी जब त्रिवेन्द्रम् से लौटने पर रप्पन्म् ने गोविन्दन के चले जाने का सारा दोष उसीके माथ थोप दिया। 'तुम्हीने उसे बिगाड़ा! वे कह रहे थे तुम्हारे लाड़-प्यार ने ही उसमें घर से भाग जाने का साहस भरा!' यह तो वे उल्टी बात कह रहे थे। मैंने कब चाहा गोविन्दन भाग जाय? मैंने कब उसे घर से भागने को उत्साहित किया? उसने जाकर चिट्ठी नहीं लिखा तो यह

भी क्या मेरा दाप है ? बाहर जाकर दुनिया भर की बातें करते हैं घर में आकर मितभाषी बन जाते हैं। क्या यह भी मेरा दोष है ? एक हा बात कहेंगे उसी म ढक रहेगा।

गगन पर चाँद उठा। चाँद मुस्कराया। यह दीवार पर थापा हुआ पूजा का चाँद न था। यह तो सचमुच का चाँद था। चाँद को देखकर तो सागर की लहरें भी चचल हो उठीं। भाई-बहन-माँ को पहचान तो इतनी दूर से कठिन थी पर अन्नपूर्णा यह सोचे बिना न रह सकी कि चाँद की किरणों ने उन तीनों लहरों के मुख उजाड़ दिए होंगे। हँसी ठिठोली मे कब पीछे रहीं चाँद की किरणें। अन्नपूर्णा को लगा चाँदनी उन गुदगुदा रही है। यह कसा अभिनय है ? कसा आग्रह है ? चतुर्दिक झिलमिल झिलमिल। वहाँ भी चाँद होगा जहाँ मेरा गोविन्दन गया। उसन जाकर चिट्ठी भी नहीं दी।

चाँद की ओर एकटक देखती अन्नपूर्णा कुहनियाँ टके खड़ी रही। गोविन्दन को भेजने वाली मैं कौन जब वह चाँद स पूछ रही था। काने काम ही सही बम्बई। पर चाँद तो वहाँ भी होगा—यही चाँद। नीलू को चाहिए था अपने सामने गोविन्दन को बिठाकर चिट्ठी लिखवाना। एकटक चाँद का देखते रहो मन कब ऊबता है। ऐसा ही है माँ का प्यार। बेटे की एकटक याद अब तो नहीं आती। अच्छी हथिना के सिर पर चाँद मुस्करा रहा है। लहरों के गीत का वही स्वर गूँज रहा है। कोई उत्तर नहीं। भाई बहन को टेर रहा है माँ दम-घुटी का टेर रही है। सब मोह का राग है मोह का वशीकरण मन्त्र है। चाँदनी छिटकी है। लहरों के गीत म काजू मदिरा का नशा है। कभी लगता लहरें गला साफ कर रही हैं। अब जसे लहरें और भी उच्च स्वर म गा रही हों। स्वरों की सम्बोधन-टेर ऊची उठती गई टेर की जय पताका फहराती रही।

अन्नपूर्णा का याद आया भोजन से उठकर रङ्गपरम्‌ विद्यालय म चले गए थे। फिर विद्यालय स लौटकर अकेले बठे लिखते रहे। इतनी

आत्मकथा तो कभी शेष नहीं होगी। एक अध्याय लिखा, पसन्द न आया तो फाड़ डाला, फिर लिखा, शुद्ध-शुद्ध लिखा। विचित्र ही भाषा लिखते हैं। नारियल का छुलनार छिलने की उपमा किससे देंगे?—छाया के कान छिलाने से। कभी लिखेंगे—घृणा-अवहेलना का अपना सोता रहता है, जैसे मृदंग बजता है। कभी लिखेंगे—ज्वार-सी चढ़ती है घृणा, भाटे-सी उतरती है। कभी लिखेंगे—धन के सुगन्धित धुएँ के सदृश ऊपर ही-ऊपर चल जाते हैं आत्म-मर्यादा के कुण्डल! ये सब उपमाएँ हमें कहाँ पहुँचाती हैं! मेरे साथ बात करने की फुरसत नहीं। वीणा बजाने बैठेंगे तो भोजन की सुध-बुध नहीं रहती, जैसे यह मेरा ही काम हो कि उनकी भूख को अपनी भूख समझूँ। दामोदरन की दुकान पर बैठ गपशप कर रहे हैं तो संसार उसमें डूब जाता है, न घर की चिन्ता न मेरे स्वास्थ्य की परवाह, मैं बैठी बाट जोहती रहूँ।

कल्पना का हमारा प्रेम-सम्बन्ध ही हुआ था। मैं ही इन पर मरने लगी थी। मैं स्वयं इनके बन्धन से बंधी। इनके संगीत पर रीझकर घर से निकल पड़ी। कन्याकुमारी में चट्टान से छलांग लगाकर सागर में कूद पड़ी। सोचा था, मैं लहर बन जाऊँगी। वह परम सुन्दरी बहन लहर बन गई थी, तो मैं क्यों नहीं बन सकती? आत्मकथा में वे मुझ पर चोट छोड़ने से नहीं चूकते। एक जगह लिखते हैं—'कभी विवाह का योग टल गया होता, अथवा जीवन-संगिनी के रूप में मुझे परम सुन्दरी अन्नपूर्णा न मिली होती, तो कदाचित् मैं संगीत के प्रति अधिक सवन्न धान रह पाता।' यह बात तो वे मुझसे कई बार कह चुके हैं कि विवाहित जीवन के अनेक वर्ष कामिनी-काञ्चन भावना के ही वश बने रहे। कभी कहते हैं, वासना तो उबलती है, उस पर तो कला का दूध गाढ़ा नहीं जम सकता। कभी कहते हैं—अन्नपूर्णा, तुम तो मेनका के समान मेरा तप भंग करने आ निकली थीं। मैंने विवाह क्यों किया? अब मैं भी जली-भुनी सुना डालती हूँ। मैं साफ कह देती हूँ—'तब तो कामिनी के प्रणय-गान की भीड़ में ही तुम्हें आत्म-साथ मिलता था।

वे कहते हैं—सुख का तत्त्व ही जीवन की अंतिम उपलब्धि नहीं। इधर वे अपनी आत्मकथा में इस बात पर जोर देते हैं कि कला का सत्य है यातना। इसे ही वे कला-साधना की कसौटी मानते हैं। कहते हैं—यातना स्वयं रागिनी बन जाती है। कभी लिखते हैं—कोई भी सत्य स्वयंसिद्ध नहीं। भोग करके ही कसना होगा। दो परछाइयाँ भले चाहे चार। परछाइयाँ तो परछाइयाँ हैं। कला स्वयं अपना स्तर खोजती है जैसे गर्भाधान के पश्चात् प्रजनन तक नारी को एक कठिन परीक्षा में से निकलना पड़ता है। मैं इसका एक ही उत्तर देती हूँ—लक्ष्मी के बिना जनार्दन स्वामी भी सम्पूर्ण नहीं और शिव के साथ पार्वती आ जुड़ीं। रागों की भी तो पत्नियाँ हैं—रागिनियाँ! एक जगह लिखते हैं—अब मेरी दृष्टि में मेरी कला ही मेरा ध्येय है। घर की बातों में मेरा मन नहीं रमता! मैं सब समझती हूँ। मैं बात करती हूँ तो इनका ध्यान कहीं और रहता है। एक जगह लिखते हैं—अब तो कला के पाप-नाशी पर स्नान करके मेरी एक ही परछाईं रह गई, दुविधा जाती रही। संगीत में आत्म-तुष्टि ही मेरा ध्येय है।

अन्नपूर्णा का मन क्षुब्ध हो उठा। ध्येय है मेरे लिए इनकी विचित्र वीणा। मैं क्यों इसकी धूल झाड़ती रहूँ? घर बने या घर टूटे मेरी बला से। जब देखा इनका संगीत चल रहा है फिर संगीत विद्यालय में भी समय देना पड़ता है। फिर छुट्टी हुई तो लिखने लग या दामोदरन की दुकान पर अड्डा जमाने जा बैठे। घूमने निकल गए। घर की किसे चिन्ता है? घर के लिए मैं रह गई घर की दासी अन्नपूर्णा। कहने को देवी वास्तव में दासी। मैंने गोविन्दन को जन्म दिया यह भी मेरा दोष। गोविन्दन अपनी खुशी से बम्बई गया यह भी मेरा दोष। अब मेरा ठेंगा झाड़े विचित्र वीणा की धूल। मैं भोजन भी नहीं बनाऊँगी।

चारदीवारी से हटकर वह कमरे में आ लेटी। स्द्पद्म घर आये तो उन्होंने पूछा कुछ पकाया-बनाया नहीं? अन्नपूर्णा कुछ न बोली। स्द्पद्म ने उसे झकझोरा। अन्नपूर्णा ने मुँह फेर लिया।

रुद्रपदम् दीये के प्रकाश में बैठे लिखते रहे। फिर वे गैया बुझाकर बिना खाय पिये ही सो गए।

अन्नपूर्णा को नींद नहीं आ रही थी। वह विचारधारा में बह गई। दास को तो इन्होंने संगीताचार्य बना दिया। पर पराया बेटा पराया ही रहता है। उसे याद आया कि जब विलासकोर के मधुआटोला में रुद्रपदम् ने अपनी ओर से संगीत-शाला खोली तो सबसे बड़ी आपत्ति मुत्तू बाबा ने ही उठाई थी। उन्होंने कहा था 'जनार्दन स्वामी के मन्दिर में तो हम जा नहीं सकते फिर आपका शास्त्रीय संगीत हमारी झोपड़ियों में घुसने को क्या मचल उठा है? हमारे पास हमारा संगीत ही रहने दीजिए।' इसके उत्तर में रुद्रपदम् ने कहा था 'मन्दिरों के द्वार भी आप लोगों के लिए खुलकर रहेंगे। आज शास्त्रीय संगीत चलकर आपके द्वार पर आया है यह उसीकी पूर्व सूचना है।' इस पर मुत्तू बाबा हँस पड़े थे। पर अगले ही वर्ष जब सचमुच राज्याज्ञा से सब मन्दिर उनके लिए खोल दिये गए तो मुत्तू बाबा यही कहते फिरते थे कि रुद्रपदम् की भविष्यवाणी सच निकली। इस पर प्रसन्न होकर रुद्रपदम् ने एक और भविष्यवाणी की थी—'उनके बाद वरकला का संगीताचार्य कोई मछुआ युवक ही होगा। इस पर मुत्तू बाबा को सन्देह है। सन्देह तो शुभ भी है। यह नहीं होता कि एक ने जो बोल दिया वह अवश्य होकर रहे। यह तो संसार है। बरजोरी नहीं चलती। भाग्यरेखा तो अधार है। अपने बेटे का बेटा मन न रख सके, सारे संसार का ठेका ले रहे हैं। स्वस्ति-पुण्य अनाथ बैठ रहते हैं। यह सब तो बगुला भक्ति है। वह बार-बार करवट ले रही थी।

रुद्रपदम् कभी के सो गए थे। उनके खुर्राटे सुनाई दे रहे थे धौंकनी सी चल रही थी जैसे यह भी किसी रागिनी का विन्यास हो। अन्नपूर्णा चाहती थी कि पति को झकझोरकर जगाये और साफ-साफ कह दे—अब इस घर में मेरे लिए स्थान नहीं रहा मैं तो चली जाऊँगी मैं बम्बई जाऊँगी अपने गोविन्दन के पास। यह मेरा वचन है। मैंने उसे गोद में

जना है। वह मुझे जवाब तो नहीं दे देगा ! सोचते-सोचते मह सपने म खो गई। पुरखा की बीस पीढ़ियाँ एक स्वर स मह रही थी—संगीत की जय हो ! अन्नपूर्णा न वहाँ खड़े-खड़े काना म अँगुलियाँ डाल ली। वह कहना चाहती थी—संगीत बहुत बड़ी बकवास है। यहाँ रुद्रमदम् भी आ निकल। बोले—तुम कब आई अन्नपूर्णा ? एक पीढ़ी छलाँगता हुई आती है दूसरी पीढ़ी से आगे निकल जाती है जसे एक रागिनी दूसरी रागिनी से आगे निकल जाय। कहो तुम्हारा क्या विचार है ? 'अन्नपूर्णा बोली—ये सब तो आदश की बातें हैं। पहले यह बताओ तुमने मुझे नीबू की तरह कितना निचोड़ा ! मेरे लिए कॉफी बनाओ। मेरे लिए इडली-डोशा बनाओ। वडे बनाओ। पायसम् बनाओ मुह मीठा करने को ! और मेरे लिए वक्ष भी जनो। देखो तुम दूध-गाछ हो अन्नपूर्णा ! क्या तुम्हारा क्या विचार है ? 'मेरा क्या विचार होगा ? अन्नपूर्णा ने झुंझलाकर कहा तुम पूरे ठग हो। तुम्हारी ठग विद्या अब मुझ पर नहीं चल सकती। मुझ पर नहा चलगी यह उलटबाँसी। मुख म अमृत हृदय म विष। तुम्हारी यही रीति है। पर मैं कहे देती हूँ जो आग खाता है अगारे उगलता है। अरे-अर तुम तो रुष्ट हो गई अन्नपूर्णा ! सुनो एक राग सुनाता हू। अन्नपूर्णा राग सुनने लगी। प्रम और उत्कण्ठा का राग था। इसम आज की अनुभूति थी कल की भी युग-युग की।

यहीं मैं गोविन्दन भी आ निकला। बोला—मैं बम्बई तो नहीं गया था माँ ! तुमने समझ लिया मैं बम्बई भाग गया था ! वरकना को संगीत प्रिय है मुझ भी ! मैं पिता का आज्ञाकारी पुत्र हू। अगली पीढ़ी का संगीताचार्य क्या मसमुच कोई मद्रुआ युवक बनगा पिताजी ?

ऊपर स मुस्‌ बाबा आ निकल। छ फुट स ऊपर निकलत हुए, केवल एक लंगोट म अपनी नग्नता ढाँप मुस्‌ बाबा बोल 'कहा गुरुदेव सब ज मेगा हमारी अगली पीढ़ी का संगीताचार्य ? वचन दिया है तो पूरा कर दिखाओ। गोविन्दन बोला—यह नहा होगा। इस पीढ़ी का संगीताचार्य भी दास नहा मैं हूँ। और अगली पीढ़ी का संगीताचाय

होगा मेरा वर। मैं नीलू से विवाह करूँगा। नीलू दूध-गाछ बनगी। यह मुझ वर दगी। अरे मुत, बाबा क्या आप नहीं जानते कि बीस पीढ़ियों स हमारे परिवार म सगीत चला आ रहा है? निद्रा-पथ पर चलते-चलते अन्नपूर्णा दूर निकल गई।

उसकी आँख खुली तो रुद्रपदम् ओसारे में बैठ वीणा बजा रहे थे।

मन-ही-मन अन्नपूर्णा इस राग पर मुग्ध हो गई जसे पहले कभी यह राग सुनने को न मिला हो। वह सोचने लगी वीणा तभी वीणा है जब उस पर कलाकार का हाथ चले। नारी भी पुरुष के बिना सगीत विहीन है। वह उठी और ओसारे में रुद्रपदम् के पास जा बठी। रुद्रपदम् मुस्कराए और उन्होंने मानो सरस्वती का अभिवादन किया।

अन्नपूर्णा उनके चरणों पर झुक गई। 'यह क्या कर रही हो अन्नपूर्णा?' व आँखों म अश्रु लाकर बोले दोष तुम्हारा नहीं मेरा है।'

वीणा पर वाग्य के हाथ चलते रहे। एक बार भी उनके होठ न हिले मानो वीणा कह रही थी—अन्नपूर्णा तुम तो मेरी स्वर-साधना की देवी हो। अपनी आत्म-कथा में कदाचित् मैं यह भाव व्यक्त करने के लिए उपयुक्त भाषा नहीं पा सका।

एक ठाठ शेष हुआ तो रुद्रपदम् बोले 'भगवान् बुद्ध कह गए हैं—बहुत स बुद्ध मुझसे पहले आए बहुत से पीछे आयेंगे। मैं पुराने प्रकाश को फिर स फला रहा हूँ। उन्होंने दूसरा ठाठ आरम्भ किया। आँखों से आँसू भर रहे थ। सँभलकर बोले एक परम्परा का चलाता है शिष्य दूसरी को पुत्र।" और फिर उन्होंने ठंडी सांस ली, गोविन्दन जहाँ भी है प्रसन्न रहे। मैं उसे लिखूँगा कि यात्रा जीवन का बल देती है और [illegible] का मार्ग बनाता है स्वर! साथ ही मैं उसे यह भी लिखूँगा कि धन्धा वह है जिसे कलाकार चलाता है धन्धा तो उलटा कलाकार को गाड़ी का बैल बना डालता है।

"स्वर-पूर्ति क्या इतना ही धनाकर्षक है? अन्नपूर्णा चुप न रह सकी फिल्मों म उस सगीत स पैसा मिलेगा और वह हमें भी भेजेगा।

उस पन्ने को क्या हम फेंक देंगे ?

फेंक तो नहीं देंगे। रुद्रपदम् मुस्कराये 'पर उदर-पूर्ति के निमित्त ही कला का उपयोग शास्त्र में वर्जित है।'

वर्जित क्या है ? अन्नपूर्णा ने बात को आगे बढ़ाया हमारे अरक्कला को ही लो। यहाँ भी तो 'थाची थियेटर' बने कई बरस हो गए। नई-नई फिल्म आती हैं। उनमें जो संगीत रहता है वह क्या बिलकुल कला विहीन है ?

फिल्मों की धूम है ! फिल्मों का बोलबाला है ! रुद्रपदम् के स्वर में खीझ का अंश ही अधिक था गली-गली घर घर फिल्मी गीतों की धुनें ही सुनाई देने लगी हैं।

तो क्या बुरा है ? मछुए भी तो गाते हैं अपने गीत। किसान भी। आपका शास्त्रीय संगीत ही कैसे सर्वव्यापी बन सकता है ?

फिल्मी संगीत पर लट्टू हो रहा है अरक्कला। रुद्रपदम् ने नया तर्क प्रस्तुत किया दूध-गाछ की लोरी भूल रहा है अरक्कला ! और फिर उन्होंने ठण्डी सांस भरकर कहा थाची थियेटर न भी बना होता तो भी क्या अरक्कला में फिल्म-संगीत का प्रवेश रोका जा सकता था ? ग्रामोफोन रिकार्डों में आ गए ये गीत। इन रिकार्डों को रेडियो वाले भी बजाते हैं। दुकानों और रेस्तोराँ पर रेडियो तो बजता ही रहता है। रेडियो में हमारे देवता हम जो प्रसाद भेजते हैं, उसमें जहाँ शास्त्रीय संगीत होता है वहाँ फिल्मी गीतों के रिकार्ड भी बजाये जाते हैं। हे भगवान् ! तुम्हारी क्या इच्छा है ?

'भगवान् की कोई इच्छा नहीं। अन्नपूर्णा हँस पड़ी।

यह गोविन्दन की संगत का प्रभाव है। बम्बई की छाप वह यहाँ छोड़ गया। एक ये हमारे डाक्टर देशमुख हैं जो शास्त्रीय संगीत के पीछे लट्ठ लेकर पड़े हैं। भला हो बेचारे माधवन नम्पूतिरिप्पाड का। जनार्दन स्वामी के मन्दिर के वार्षिक नवरात्रम् उत्सव पर वे इस बार भारत के नामी गायकों और वादकों को बुलाने का प्रबन्ध कर रहे हैं !

इससे क्या फिल्मी गीत रुक जायेंगे ?' अन्नपूर्णा चुप न रह सकी।

"मधुआटोला में हमारी संगीत-पाठशाला भी तो चल रही है। अब तो मृत्यु बाबा को भी कुछ-कुछ विश्वास आने लगा है कि मधुआ में भी शास्त्रीय संगीत पनप सकता है। मैं कहे देता हूँ अन्नपूर्णा यह तो देवासुर-संग्राम है—फिल्मी संगीत और शास्त्रीय संगीत का संग्राम! देवता हमारे साथ हैं।

इस संग्राम में देवता ही हारेंगे यह मैं देख रही हूँ।' अन्नपूर्णा मुस्कराई। और पूर्व दिशा में उषा भी मुस्करा उठी मानो कंधे पर प्रकाश की बहंगी उठाये आ रहे थे सूर्य भगवान् किरणें चली आ रही थीं इस लालिमा के पीछे-पीछे।

उठकर कॉफ़ी बनाओ अन्नपूर्णा! रूपपदम् मुस्कराये।

'रात का उपवास तो स्वास्थ्य के लिए अच्छा ही रहा होगा न!' अन्नपूर्णा हँस पड़ी 'कॉफ़ी का मूल्य चुकाना होगा। गोविन्दन को चिट्ठी लिखवाऊँगी। होगी तुम्हारी ओर से लिखवाऊँगी मैं। गोविन्दन बच्चा ही तो है। यही लिखना होगा कि बेटा जहाँ भी रहो चाहे जो भी करो बस प्रसन्न रहो! लिखना होगा कि भले ही फिल्मी संगीत का ही धंधा करो हमारा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है!

यह तो मैं नहीं लिख सकता। फिल्मी संगीत के पक्ष में मैं अपने हाथ तो नहीं कटा सकता। चिट्ठी तुम्हीं लिखना अपनी तरफ से!

'नहीं तुमसे ही लिखवाऊँगी! तुम्हें ही लिखनी होगी। गरम-गरम कॉफ़ी का यही मूल्य चुकाना होगा।

"पहले कॉफ़ी तो बनाओ ठकुर!

सो तो बनाऊँगी ही!

बिना घृत ही बनाओ!'

बिना घृत नहीं। मैं माँ हूँ दूध-गाछ हूँ! बेटा कहीं भी रहे, कुछ भी करे, मेरी शुभ इच्छाएँ उसके साथ हैं। तुम्हारा आशीर्वाद भी गोविन्दन को मिलना ही चाहिए।



नौ

सभी जानते थे कि उत्तर भारत के उस्ताद फैयाज़ खाँ रुद्रपन्नम् के अनन्य मित्र हैं, पर जब उन्होंने दामोदरन को उस्तादजी का पत्र दिखाया तो उसकी आँखों को जैसे विश्वास ही न हो रहा हो। फिर जब बालचन्द्रन देशमुख ने दुभाषिये का काम करते हुए पत्र पढ़कर बताया कि उस्तादजी ने यह वचन दिया है कि वे अपनी पूरी मण्डली सहित रुद्रपन्नम् की साठवीं वर्षगाँठ पर कलकत्ता आयेंगे तो दामोदरन खुशी से उछल पड़ा।

रुद्रपन्नम् की साठवीं वर्षगाँठ पर कलकत्ता में कुछ होना चाहिए, यह सुझाव नम्बूतिरिप्पाड का था। बालचन्द्रन ने भी हाँ-में-हाँ मिलाते हुए कहा था, 'छलकती-छलकाती आनी चाहिए गुरुदेव की वर्षगाँठ। उस्ताद फैयाज़ खाँ आ जायँ तो जादू ही न हो जाय!' और अब वही जादू होने जा रहा था। उस्तादजी का पत्र भी आ गया। उन्होंने आने का वचन दिया था। सोने में सुहागा हो जायगा।

अब तो एक ही बात की चिन्ता थी कि रुद्रपन्नम् का स्वास्थ्य सुधर जाय क्योंकि इधर लम्बी बीमारी के कारण वे बहुत दुर्बल हो गए थे। वर्षगाँठ में बहुत दिन नहीं रह गए थे। देशमुख की तो यही राय थी कि उस्तादजी को लिख दिया जाय किसी कारणवश साठवीं वर्षगाँठ मना ही नहीं रहे, इकसठवीं वर्षगाँठ पूरी तैयारी के साथ मनाई जायगी और उसी समय वे कलकत्ता पधारें तो कलकत्ता निवासी उनके

निमंत्रण से इतने होंगे। देशमुख को डर था कि वर्षगाँठ के अवसर पर स्कन्दम् फिर से बीमार पड़ गए, तो मुद्दई सुस्त गवाह चुस्त वाली बात होगी। पर देशमुख का यह सुझाव किसी के भी मन न लगा। नम्बूतिरिप्पाड़ तो इस पर हँस पड़े। लक्ष्मण ने भी नाक भौं चढ़ाकर कहा था, 'इस वहम का इलाज नहीं!'

कनकम्मा बोली, 'आप ठीक कहता है। उस्ताद जी को वर्षगाँठ से एक वर्ष बाद आने को लिखना तो यह बात होगी कि स्कन्दम् मान जायें और हम कहें—हे देव, तुम अपना अनुकम्पा का हस्त वर्ष तक उठा रखना।'

फिर तो स्कन्दम् भी मान गए। उन्होंने घोषणा कर दी कि साठवीं वर्षगाँठ पर ही उस्ताद फ़ैयाज़ खाँ का आना ठीक रहेगा, जिसके लिए वे पहले ही अपनी स्वीकृति भेज चुके हैं।

स्कन्दम् के मन पर सन्तोष की आभा प्रसन्न मुद्रा बन गई। उनका कहना था, अब बीमार नहीं पड़ेंगे। वर्षगाँठ भी उनके लिए अनुष्ठान से कम न थी, क्योंकि इसकी तिथि उसी दिन पड़ती थी जब वनान्तन स्वामी के मन्दिर का वार्षिक नवकम् उत्सव मनाया जाता था। इस अवसर पर बाहर से आए यात्रियों की अपार भीड़ रहती थी।

कई बार स्कन्दम् को लगता, मलयगिरि की छाया-तले सुरों का प्यार भरती आ रही है मानो, जिसमें उस्ताद फ़ैयाज़ खाँ अपना अनूठा भक्ति भरते हैं। जीवन के साठ वर्ष उनकी कल्पना में घूम जाते—विविध भावों के स्वर-फलक पर थिरक-थिरक उठते साठ वर्ष। इनमें थी धुंधली स्मृतियों की छाया—मुँह-बार वर्षों की स्मृतियाँ, धूप के टुकड़े-सा छपन, मनभाती स्मृतियाँ, सारे अतीत का ताना-बाना, सपनों की पाण्डुलिपि, अनूपम मन राजपथ की धूल-मिट्टी। इन सारे वर्षों में एक बात तो याद बना रहा कि माँ के स्तन में हमारे लिए दूध की एक भी बूँद न बची रहा और उस उमस भरे मन में वे यहाँ सोचकर रह गए—निराश मत होना मन! फिर-उगता है पत्ता! कई बार तो

वे साते-सात हड़बड़ाकर उठ बठते और देखते कि अभी तो वर्षगाँठ में कुछ दिन शेष हैं और खाँ साहब वरकला के स्टेशन पर उतरने की बात भूलकर त्रिवेन्द्रम् तो नहीं जा पहुँचे।

आखिर वह दिन आ गया जब खाँ साहब अपनी मण्डली-सहित वरकला पहुँच गए। उन्हें संगीत-विद्यालय में ही ठहराया गया। रुद्रपदम् बहुत प्रसन्न थे। लम्बी बीमारी का उपहार—देह की दुर्बलता और रक्त की कमी के कारण कभी-कभी हाथ-पाँव भूले पड़ने की-सी स्थिति अब वे भूल-से गए थे।

खाँ साहब को यह स्थान बहुत पसन्द आया। शान्तिा की चार दीवारी पर कुहानियाँ टेके खड़े-खड़े नीचे सागर का अनन्त विस्तार उनकी कल्पना को छू-छू जाता और वे बार-बार कह उठते आप तो खुशकिस्मत हैं!

देशमुख और रुद्रपदम् के लिए खाँ साहब और उनकी मण्डली के दूसरे सदस्यों की भाषा समझना कुछ भी कठिन न था। वे इस भाषा के मुहावरे की नोक-पलक तक समझते थे। रामधरन आधे रास्ते पहुँच पाता था और विशेष रूप से मुहावरे की गली में भटक जाता। दामोदरन और नम्पूतिरिप्पाड के पल्ले कुछ भी न पड़ता जब तक देशमुख दुभाषिये का कर्तव्य न निभाता।

दिन के समय खाँ साहब और उनके साथी नववम् की शोभा यात्रा देखते रहे और फिर वे नारायण स्वामी की समाधि देखने गए। नारायण स्वामी की संस्था की ओर से एक हाई स्कूल चलता था। खाँ साहब ने समाधि भवन में लगा चित्र देखे रवीन्द्रनाथ ठाकुर
महात्मा गांधी को नारायण स्वामी से दिखाया गया
दोनों महानुभाव वरकला पधार चुके ५ से
थे। रवीन्द्रनाथ पहले आये थे ॥ साहब
गया कि छूआछूत के विरुद्ध जिस १९
आवाज उठाई थी गांधीजी को आया

ख़बर ?

रुद्रपन्नम् मनयानम् ने बोले — मुत्तु बाबा रात को संगीत-गोष्ठी में अवश्य आना। खाँ साहब का संगीत सुनकर तुम मेरा संगीत भूल जाओगे।

दासुप्र ने खाँ साहब को इसका मतलब समझाया तो वे कह उठे — हम तो आपकी तरफ देखते हैं। हमने तो हिन्दुस्तानी संगीत का ही थोड़ा रियाज़ किया है और आप हैं कि कर्णाटकी और हिन्दुस्तानी दोनों का पूरा-पूरा मुलाहिज़ा रखते हैं।

"यह आप क्या फरमा रहे हैं खाँ साहब?" रुद्रपन्नम् मुस्कराये, "यह बात क्या किसी से छिपी है कि आज से बीस वर्ष पहले जब आप मैसूर राज्य में थे दरबार ने आपको 'आफ़ताब मौसीकी' की पदवी दी। जो संगीत का सूरज है वही हमारा भी।"

"अरे भाई मैं सूरज-वूरज कुछ नहीं। मैं तो माता का मामूली-सा फ़ैयाज़ मियाँ हूँ।"

मुत्तु बाबा कुछ नहीं समझ पा रहे थे क्योंकि बातचीत खाँ साहब की भाषा में चल रही थी।

खाँ साहब ने मुत्तु बाबा की ओर संकेत करते हुए कहा, "जहाँ के मज़दूर तक संगीत के रसिया हों, वहाँ संगीताचार्य रुद्रपन्नम् के घराने में बीस पीढ़ियों से संगीत चला आ रहा है यह हमारे लिए कोई अचरज की बात नहीं है।"

मल्ली के बाकी लोग पीछे की ओर मुड़ चुके थे।

मस्त बाबा रुद्रपदम् का कथा ऊमोडकर बोले अपने अतिथि में कहिए मैं जरूर उनका गाना सुनने आऊगा। बहुत दिन से उनकी महिमा सुनता आ रहा हूँ। सुना है त्रिवेन्द्रम् में तो कई बार आये। हमारा सौभाग्य है कि व वरकला भी पधारे!

दशमुख न इसका भावार्थ खाँ साहब को समझाया तो वे बोले मस्त बाबा से कहो, यह तो हमारा सौभाग्य है कि हमें वरकला में आप लोगों के दर्शन हुए।

देशमुख ने झट दुभाषिये का कर्तव्य निभाया। खाँ साहब और रुद्रपदम् चलने लगे तो मस्त बाबा आँखें मचाकर और बाँह उठाकर बोले एतु वर्तमानम् ? क्या खबर ?

खाँ साहब वे हसते-हसते पेट म बल पड़ गए। मलयालम और हिन्दुस्तानी का यह अमोखा सगम उन्हें गुदगुदा गया था।

चलते चलते खाँ साहब सभलकर बोले दखिए गन्धर्व! हम एक बात कह दें अगर आपको नागवार न गुजरे। ठीक ही कहेंगे। आपके तो दोनो हाथ लड्डू हैं। एक तवे की रोटी क्या छोटी क्या मोटी! क्या कर्णाटकी क्या हिन्दुस्तानी दोनों आपके तम्बूरे की बाँदी हैं।

यह सब तो आपकी फयाजी है खाँ साहब! नहीं तो मैं क्या?

खाँ साहब न आँखों-ही आँखों म कहा— आप तो गुरुदेव हैं!

देशमुख द्रुत गति स जा खाँ साहब की मण्डली में सम्मिलित हो गया था। चलते चलते खाँ साहब बोले रागदारी बड़ी तपस्या माँगती है। गवया तो राग रागिनिया की कठपुतली बन जाता है। राग रागिनियाँ खुद ही अपना हिसाब न रखें तो गवये की यह मद उड कि उस महफिल स भागने ही बने।

मुझ तो कभी-कभी लगता है खाँ साहब कि मैं दूध-पीता शिशु हूँ और माँ का छाती स ही राग रागिनियों की रगभूमि को निहार रहा हू!

यह तो आपने हमारे ही दिल की बात कह दी गुरुदेव ! मैं भी यही कहने वाला था। माता को तो हम भूल ही नहीं सकते। यह तो अच्छी बात है। जिस दिन हम माता को भूल जायेंगे उस दिन हमारा कला मिट्टी में मिल जायगी।

'यह तो ठीक है खाँ साहब ! फिर हम माँ क्यों चिल्लायें—हम हैं कलाकार, कला के सच्चे सूत्रधार। सर्जना नमस्कार ! कोई हमारी बात नहीं सुनेगा। कला के सृजनात्मक उपयोग में माँ की याद ही रंग भरती है। इच्छानुसार आवश्यकतानुसार कला का हम नित नूतन उपयोग करना चाहें और माँ परम्परा को एकदम भुला दें फिर हम कैसे सफल हो सकते हैं ?

यही तो मैं भी मानता आया हूँ।

हम कला को एक नया प्रयोजन दे सकें, हममें आत्म विश्वास बोलता रहे, सेवा-समर्पण की भावना आँख से ओझल न होने पाए—ठीक माँ के समान ही हम कला की नूतन सृष्टि करें तभी तो बात बन सकती है। शिशु में जैसे ददिहाल और ननिहाल वालों के गुण आगे बढ़ चलते हैं, ऐसे ही नूतन कला-सृष्टि में होना चाहिए।

बिलकुल बजा फरमा रहे हैं गुरुदेव ! मतलब यह कि परम्परा हम पर बोझ न बन जाय बल्कि फूल में सुगंध बनकर महक उठे।

माँ के व्यक्तित्व का प्रतिबिम्ब ही तो नहीं होता शिशु। वह उससे अधिक होता है अधिक होने की सम्भावना रखता है। परम्परा कठोर अनुशासन का पालन करना सिखाती है। इसकी अपनी जगह है। पर कला को मैं मात्र परम्परा का अनुकरण ही नहीं मानता। यही बात मैं अपने मन से हमेशा कहता हूँ।

'गोविन्द क्या काम निकला ? उन क्या आपने नई रचना की छूट नहीं दी थी ?

'उसका तो यह बात थी खाँ साहब कि वह पारम्परिक अनुशासन से ही विद्रोह कर बैठा।

चलिए ठीक है। मैंने सुना है फिल्मों में उसकी कद्र हो रही है। हँसते-हँसते खाँ साहब हँस पड़े 'आजकल के छोकरे हमसे कहीं ज्यादा अकलमंद हैं। आखिर इस बात का फायदा तो वह उठाता ही होगा कि वह एक संगीताचार्य का बेटा है और वह बड़े मजे से डुग्गी पीटता होगा कि उसके खानदान में सात पीढ़ियों से संगीत चला आ रहा है।

परम्परा का अनुशासन एक संस्कार है खाँ साहब ! सद्रपन्न् का गला भर आया गोविन्दन यहाँ रहता तो अच्छा था। चलते-चलते सूर्य की ओर हाथ उठाकर बोले हे सूर्य भगवान् गोविन्दन कहीं भी रहे कुछ भी करे बस मेरे नाम को कलंक न लगाये !



दस

मंच पर प्रशस्त मसनद डाले खाँ साहब विराजमान थे मानो संगीत का देवता धरती पर उतर आया हो। बाईं ओर बँगलौरी टोपी पहने बैठे थे खाँ साहब के भानजे गुलाम रसूल खाँ। उनके दोनों हाथ हारमोनियम पर टिके थे। पीछे बैठे थे खाँ साहब के दो तैयार शिष्य— अता हुसैन और मुहम्मद बशीर। उनके हाथ में था एक-एक तम्बूरा। उनमें सटे बैठे थे दो नौसिखुए। तबले पर संगत करने जा रहे थे विष्णु पन्त शिरोडकर। छह आदमियों की मण्डली, सातवें खाँ साहब।

दोनों तरफ और पीछे सात-आठ हाथ खुली जगह छोड़ दी गई थी जिससे मण्डली का ठाठ उभर सके।

मण्डली के बायें हाथ बैठे थे दामोदरन देशमुख और नम्बूतिरिप्पाड— दोनों ही आँखों में नई-नई की तान उठाते-से।

मण्डली के दायें हाथ संगीताचार्य रत्नम् और उनके शिष्य रामचरन ने आसन जमा रखा था। गुरु मानो कला-पारावार का आचमन करते थे, शिष्य मानो मधुमित्र बनने का सपना देखता-सा।

मुत्तु बाबा श्रोता-मण्डली में एक जगह दुबके बैठे थे। उन्हें मंच पर बुलाने का स्वयं खाँ साहब ने आग्रह किया, पर वे बोले— मैं यहीं ठीक हूँ। मैं चाहता हूँ सबको देखूँ, न कि सब मुझे देखें।

संगीत-गोष्ठी की व्यवस्था संगीत-विद्यालय की वाटिका में विशाल मण्डप बनाकर की गई थी।

नवकम् के उपलक्ष्य में मंदिर के प्रांगण में फुलझड़ियाँ और अनार छूट रहे थे। आकाश पर आग के चित्र विचित्र फूल बन-मिट रहे थे।

यह रात बहुत दिनों की प्रतीक्षा के बाद आई थी। इसे अधिकार था कि संगीत से प्यार करे जिसके अंग अंग में रागिनियाँ जाग उठें। रात की आयु तो उतनी ही थी पर वह चाहती थी अघोर अन्दाज रागिनी की अनुकम्पा जिसे वह अपने आप को सौंप दे। गेरुआ मिट्टी को अधिकार था कि गेरुआ रहकर भी हरे-हरे अंकुर उगाए तो रात को भी छूट थी कि नयन उनींदे रहने पर भी किसी अनिरुद्ध का सपना देखे। जब रात भी कोई कमनीय सरोवर हो जिसके एक-एक कमल से किसी रुकुन्तला की मन-हुलासी कथा आ जुड़ी हो।

'तो शुरू करें।' खाँ साहब मुस्कराये।

थोड़ा ठहरिए। कृष्णन् बोले अभी कुछ और खाना खा लें।

माना रात ने भी किसी सुन्दरी के सदृश मनसी किन्नया बात माथ को झुकाकर मूक संकेत से हाँ न-हाँ मिलाई—हाँ-हाँ अभी कुछ और खाना खा लें।

'लगता है दिन फीकी वार्ता है और रात निरी कविता गुरुदेव।'

उधर से दामोदरन बोल उठा।

रात कविता न होती तो संगीत के लिए कैसे इतनी मौजूँ होती? खाँ साहब ने चुटकी ली और डिबिया में पान निकालकर बगल वाली जेब से बूटियों वाले कपड़े की गुथनी निकाली और इसमें से चुटकी भर मुरादाबादी तम्बाकू डालते हुए पान मुँह में रखा। एक पान सबलची की तरफ बढ़ाया, तुम भी लो विष्णु।

मानो रात सुन्दरी ने फिर मूक संकेत से हाँ-न-हाँ विनिदाइ—हाँ हाँ तुम भी लो विष्णु।

विष्णुपन्त अभी तबला ठोक कर रहे थे। नम्पूनिरिप्पाट ने उठकर खाँ साहब को माला पहनाई। दत्तगुप्त ने कृष्णदम् के गले में माला डालते हुए कहा इसमें पूरे साठ फूल हैं, गुरुदेव! और यह है आपकी साठवीं

वषगांठ ! नम्बूतिरिप्पाड और देशमुख ने खाँ साहब के साथियों को भी मालाएँ पहनाई ।

नम्बूतिरिप्पाड ने उठकर कहा वरकला म खाँ साहब का आगमन एक ऐतिहासिक घटना है। खाँ साहब का नाम हमारे लिए नया नहीं। उनके सगीत में आप अद्भुत रस पायेंगे। यह भी देखेंगे कि खाँ साहब अपने साथियों क सहयोग से सगीत को परम्परा से कहा ऊपर उठाकर कला को नूतन रूप देते हैं।

देशमुख ने खाँ साहब की भाषा में इसका सार बताया तो खाँ साहब बोल हमें तो बल्कि शिकायत है कि गुरुदेव ने साठ वष का उम्र तक पहुँचने में इतनी देर लगाई! क्या व हम इसस पहल यहाँ आने की दावत दे ही न सकते थे? देशमुख ने खाँ साहब की यह चुटकी मलयालम म प्रस्तुत की तो सारा मण्डप श्रोताओं की तालियों म गूज उठा।

रुद्रपदम् न खडे होकर कहना आरम्भ किया—

यह हमारा सौभाग्य है कि खाँ साहब यहाँ पधारे। मैं जानता हूँ आप लोग उनका सगीत सुनने को उत्सुक हो रहे हैं। पर इस अवसर पर इनकी वश-परम्परा कला और जीवन का सक्षिप्त-सा परिचय दना मेरा कत्तव्य है।

प्रतिमा जिन्हे वरदान में मिली थी उन्हीं मियाँ रगीले क प्रपौत्र हैं आफताब-मौसीकी उस्ताद फयाज खाँ! मियाँ रगीले की प्रसिद्धि का कारण था अनगिनत चीजों को अपनी शली म बाँधने की उनकी क्षमता। प्रपितामह का पूरा रग प्रपौत्र में आकर खिल उठा।

अब रही दूध-गाछ की ओर से उनकी पृष्ठभूमि। हाँ तो उनका ननिहाल भी उच्चकोटि के गायकों का घराना रहा है। उनके नाना थे गुलाम अब्बास—ऊँची-स्साई आवाज वाल कलाकार जिनकी खरज मन्द्र क रागों का गायकी बड़ी साफ-साफ और तयार थी।

'प्रपितामह से रंग मिला नाना से आवाज पाई। पर अभी वे दः मास क गभ में ही थे कि उनके पिता चल बसे। बालक फयाज का

पालन-पोषण उनके नाना गुलाम अब्बास ने किया जो आगरा में रहते थे।

आगरा में नत्थन खाँ का सहवास भी बालक फयाज़ की प्रतिभा का दीया सजाने में सहायक हुआ।

कोटा के फिदा हुसैन से भी कुछ कम विद्या-लाभ नहीं हुआ।

क्या ददिहाल और क्या ननिहाल दोनों रहे ध्रुपद-धमारियों के घराने। फयाज़ साहब का शिक्षण इसी ढंग पर हुआ।

फिर उन्होंने खयाल की गायकी में हाथ डाला माने ही उस युग में ध्रुपद-धमार को ही ऊँचा और शुद्ध मानते थे। विलम्बित गायकी तो फयाज़ साहब की घुट्टी में है। दरबारी कान्हड़े में उनका जवाब नहीं। और वे नट बिहाग में गाते हैं— झन झन झन झन झन पायलिया बाजे! इस राग में वे कितना अमृत घोलते हैं! जैजैवन्ती में गाते हैं— मोरे मन्दिर अबलौं नहीं आये! प्रिय से बिछुड़ी नायिका का पूरा चित्र खिंच जाता है। झिंझोटी में उनकी विख्यात चीज़ है— अखियाँ उन संग लाग रहीं! फिर वृन्दावनी सारंग में गाते हैं—'सगरी उमरिया मोरी ।' और सोहनी में उन्हें गाते सुनिये— चलो हटो जाओ सैयाँ! हर बार वे आप पर अपनी छाप छोड़ जाते हैं। और सच तो यह है जिसने एक बार उनका सच्चा संगीत सुन लिया वह फिर किन्हीं अटपटी चीज़ों पर तो रीझने से रहा!

सन् १६२५ में इन्दौर-नरेश तुकोजीराव ने होली के अवसर पर दस सहस्र रुपये के मूल्य का रत्नकण्ठा, दस सहस्र रुपये नकद और पाँच सौ रुपये के वस्त्र भेंट करते हुए फयाज़ साहब की संगीत-साधना का अभिनन्दन किया था।

अभी आप देखेंगे कि हमारे उस्ताद फयाज़ खाँ कैसे अपना विलम्बित लय का ठाठ प्रस्तुत करते हैं और कैसे हम रंगते हैं। अब मैं उनके और आपके बीच व्यवधान नहीं बनना चाहता।

श्रोताओं ने तालियाँ बजाकर हर्ष प्रकट किया और बड़ी उत्सुकता से अतिथि गायक के संगीत की प्रतीक्षा करने लगे।

मण्डप में अनन्तशयनम् और कल्याणसुन्दरम् के चित्र देखते हुए फ़याज़ ख़ाँ ने कहा — वे तो फ़रिश्ते थे, संगीत के देवदूत थे। अब गवय्ये अब जन्म नहीं लेते। वे नाद ब्रह्म के उपासक थे। संगीत ही उनका अल्लाह था, वही ईमान था। उसी घराने के ज्योतिष्मान् हैं रुद्रपदम्। हमें बताया गया है कि ज्योतिष्मान् शब्द का एक अर्थ ब्रह्मा का तीसरा चरण' भी है। बस तो इस घराने में बीस पीढ़ियों से संगीत चला आ रहा है जो एक बड़ी बात है और इस पर हम सभी नाज़ कर सकते हैं। हाँ, तो पितामह और पिता के बाद तो रुद्रपदम् ब्रह्मा के तीसरे चरण ही हुए। और आज ब्रह्मा के उसी तीसरे चरण की साठवीं वर्षगाँठ पर हम उन्हें मुबारकबाद देते हैं और आप लोगों की इजाज़त से अब कुछ अर्ज़ करते हैं।

इतने में मन्दिर से फुलझड़ियाँ और अनार एक साथ छूटे और ख़ाँ साहब ने आकाश की ओर देखकर कहा — लो, इन फुलझड़ियों ने भी आस्मान पर इकसठ का हिन्दसा लिख डाला।

दामोदरन ने ख़ाँ साहब के मधुर हास्य का मलयालम में रसास्वादन कराया तो मण्डप तालियों से गूँज उठा।

विष्णुदत्त गिरिडकर तबला मिलाने लगे और ज्यों ही उन्होंने थपकी सी देकर थिर् गम्भीर स्वर निकाला। उधर दोनों तम्बूरे भी बोल उठे और ख़ाँ साहब ने महफ़िल का अभिवादन करते हुए तम्बूरे में बसा हुआ समृद्ध स्वर मिलाया। धीमे धीमे पूरिया का रूप भरने लगे। श्रोताओं का मन प्राण गायक का नशा चढ़ा रहा था।

नम्पूतिरिप्पाड ने दामोदरन के कान में कहा — कैसे मन्द्र से मध्य और मध्य से मन्द्र में चल रहा है ख़ाँ साहब का संगीत ?

'कैसे भाव लेकर कोमल अति कोमल तक दरसाते हैं! अति सुन्दर!' दामोदरन मुस्कराया।

ख़ाँ साहब जहाँ छोड़ते उनके शिष्य अल्ताफ़-अन्वर आलाप को उठाते, नये स्वर छानते, पुनः मूल स्वर पर आते। विष्णुदत्त से सन्

की धिन् लेते। गुरु शिष्यों की यह परस्पर गायन-पद्धति बरबस के लिए नई थी। 'दे रे ना' 'तूम-तूम' आदि शब्दों के साथ आलाप चल रहे थे। फिर पन्द्रह मिनट के बाद खाँ साहब ने 'नि रे ग' का रागवाचक स्वर लेकर गान्धार पर मुकाम किया तो सारी महफिल झूम उठी।

रुद्रपन्नम् ने दास के कान में कहा इतना पक्का सच्चा पूरिया का गान्धार हर कोई नहीं लगा सकता। और गुरु की आँखों में हर्ष के आँसू उमड़ आए।

दास ने कहा खाँ साहब कहें तो भी आप आज मत गाइए। अभी आपका स्वास्थ्य आज्ञा नहीं देता।

रुद्रपन्नम् ने कहा हाँ हाँ मैं नहीं गाऊँगा। खाँ साहब कहेंगे तो भी नहीं गाऊँगा।

बार-बार मन्द्र सप्तक में उतर रहे थे खाँ साहब। ऊपर गान्धार पर मुकाम करते। हर बार नये-से-नया अलंकार पहनकर बन-ठनकर सामने आता वह गान्धार।

नम्पूतिरिप्पाड ने दामोदरन के कान में कहा 'पूरी गोष्ठी पर पूरिया की छाया पड़ गई।

खाँ साहब तारसप्तक में गान्धार लगाकर धीरे-धीरे आलाप का विस्तार करने लगे। फिर दुगुन-चौगुन में 'दिर दिर तूम-तूम' वाला का रंग बँधने लगा। खाँ साहब एक ओर शिष्य-मण्डली दूसरी ओर। शिष्य मानो गुरु से होड़ लेते हुए 'सवाल' डालते गुरु मुस्कराते हुए सहज जादूगर आलाप करके 'सा' पर आकर 'जवाब' देते और हर बार श्रोताओं पर जादू-सा होता चला जाता।

यह क्रम चल रहा था। नम्पूतिरिप्पाड ने दामोदरन को मार देता। यह धीरे-से बोला मैं समझ गया। गुरुदेव का स्वास्थ्य तो इस योग्य नहीं कि गा सकें। गाना चाहेंगे तो भी हम साफ मना कर देंगे।

दामोदरन ने पास से कहा स्वास्थ्य का ही सारा जादू है। मेरा भी यही विचार है। आज गुरुदेव को तो नहीं गाना चाहिए।

मन्दिर की ओर से छूने वाली फुलझड़ियाँ बीच-बीच में श्रोताओं का ध्यान भंग कर जातीं।

गुरु-शिष्यों के दाँव-पेंच अभी चल ही रहे थे गुरु ने सा' पर आकर मुकाम किया और पूरिया के निनाल की चाल आरम्भ की—मध्य लय में

माई सपने में आय !

कुछ ऐसे ढंग से खाँ साहब ने कहना आरम्भ किया कि दूसरे आवर्त पर पहुँचते ही एक मुखड़ा मारकर विष्णुपन्त 'सम' पर आ गए, और मिजाज का 'ठेका' उठाया। न खाँ साहब को कहना पड़ा कि अमुक ताल नगाड़ों ने जमी हुई रंगत में कहीं विघ्न-बाधा पड़ा। सहज भाव से राग का दूसरा दृश्य चल पड़ा। 'माई' शब्द की आवृत्ति करते समय खाँ साहब इसमें भिन्न भिन्न भावनाओं की बाधा सजाते चले गए। एक ही शब्द का विविध अर्थों में मुड़-मुड़ सामने आते देखकर नम्बूतिरिप्पाड ने रामास्वरन के कान के पास मुँह ले जाकर कहा 'माइ का अर्थ है माँ अर्थात् दूध-गाछ ! मुझे तो लगता है, सारी गोष्ठी पर दूध-गाछ की छाया पड़ गई। देखो देखो मुत्तु बाबा भी किस तरह झूम रहे हैं !' रामास्वरन ने ताल की ओर संकेत करते हुए कहा 'ताल खायन साथ रहा है कि गुरुदेव को छोड़कर खाँ साहब का चरा बन जाय !

लगता था 'माई सपने में आय !' की रागदारी अभी खत्म न होगी। पर कॉफ़ी-पान का समय हो चुका था। कॉफ़ी के बाद फिर पूरिया का दौर चला। पता ही न लगा कि डेढ़ घण्टा कब बीत गया।

मुत्तु बाबा ने उठकर मुलतानी की फ़रमाइश की तो खाँ साहब बोले 'इस वक्त इस रागिनी को हम मात नहां।

रामास्वरन् ने सिफारिश की 'सुना दीजिए न ! श्रोताओं का नाराज़ क्या करते हैं ?

'लो लीजिए !' कहकर खाँ साहब ने मगी हुई, मुलायम आवाज़ में मुलतानी का आलाप किया और फिर महफ़िल की उत्सुकता देखकर

शीघ्र ही तिताल में नये राग की चीज पेश की—
    अरी ए री आली री
    इन बुजन लोगन को काहा कीजू ?

राग चल पड़ा। समां बन गया। नम्बूतिरिप्पाड ने दामोदरन के कान में कहा 'देखो—देखो कैसी सोच और कैसी मिठास के साथ खाँ साहब आली री को खींचते हैं!' दामोदरन ने आँखों-ही आँखों में बताया—'उस्ताद उस्ताद ही रहता है!'

खाँ साहब ने सिद्ध कर दिया कि जादू वह जो सिर पर चढ़कर बोले। आवाज बड़े नखरे से लय में लगाते। दूसरी पंक्ति नाना विध सजाते लय के नये-नये रूप सूझते। इसे गाते समय उनका वजनदार कंठ कितना कोमल हो उठता। दर्द विस विनती से बाहर आते और विरह व्याकुलता का चित्र-सा उरेह जाते! आवाज पर कितना अधिकार था! भावानुकूल उच्चारण और त्वरित रसोत्पत्ति द्वारा गायक ने महफिल को अपने रंग में रंग लिया।

दास ने गुरुदेव के कान में कहा 'संस्कार रक्त में आते हैं!'

गुरुदेव बोले 'सुनो-सुनो! बातें पीछे होंगी।'

गाना बन्द हो गया। महफिल की उत्सुकता बनी रही।

यह है कलाकार का संयम! रुद्रपदम् मुस्कराए।

इसके बाद खाँ साहब ने दो-तीन चीजें पेश कीं। राग का चलन शुद्ध रखते। रागवाचक स्वरों की आवृत्ति द्वारा राग का स्वरूप स्पष्ट करते। बीच-बीच में छोटी-छोटी 'मुरकियाँ' रंग दिखातीं। सुरीले 'खटके' जादू-सा कर-कर जाते। हरकतें स्वर मानो गायक श्रोता के हृदय को वश में करता चला जाता। धीरे-धीरे अन्तरा भरा जाता। फिर बोलतान लय में आगे से बढ़त की सृष्टि करके महफिल को झुमा देते। एकदम तान पर आते। आलाप में से धीरे-धीरे तानों का रूपाकार रचते। जोरदार बोल-तानों की झड़ी-सी लगाते। चीज को रंग भर से आते और धीरे से बन्द कर देते।

क्या मजाल कि लय छूट जाय ! आलाप-तान और स्वर विस्तार में नये का मध्य कुछ इस प्रकार सजाते कि महफिल में प्रत्येक श्रोता यही सोचता कि गायक उसी को लक्ष्य करके गा रहा है। यों गायक और श्रोता में आत्मीयता की लय रंग दिखाती। गायक और श्रोता को पान सिगरेट और इलायची-मिश्री की सुध न रहती मानो वे संगीत की स्वप्नपुरी में विचर रहे हों।

सहसा यह स्वप्न टूटा तो खाँ साहब ने रुद्रपदम् की ओर संकेत करके कहा अब आपकी बारी है।

रुद्रपदम् ने मुस्कराकर दास की ओर देखा। दास भी जैसे इसी प्रतीक्षा में था। बोला गुरुदेव अब तो गाना ही होगा।

विष्णुपन्त बोले 'तबले से ही चलेगा या मृदंग उठाऊँ ?

'तबला ही ठीक है !' रुद्रपदम् मुस्कराए।

दासचरन ने तम्बूरा सँभाल लिया।

मैं तो अब बूढ़ा हो गया !' रुद्रपदम् ने क्षमा-याचना के स्वर में कहा 'कंठ इच्छा का साथ नहीं देता। लम्बी बीमारी और रक्त की कमी के कारण हाथ-पैर सूखे पड़ने के दौरे का भय बना ही रहता है !

हम आपको यहाँ नहीं जाने देंगे ! खाँ साहब मुस्कराये यह आप क्या फरमा रहे हैं ? यह न भूल जाइए कि हम श्रोताओं के लिए गाते हैं और आप हमारे लिए ! और खाँ साहब ने उठकर रुद्रपदम् का आलिंगन कर लिया आपकी साठवीं वर्षगाँठ पर हम आपका गाना सुने बिना चले जायें यह कब मुमकिन है ?

मैं खाँ साहब और आप सबको रुष्ट नहीं करना चाहता !' और रुद्रपदम् ने दो बार खखारकर सुगठित आवाज़ से आलाप आरम्भ कर दिया।

गाते-गाते गायक का कंठ कभी अति कोमल हो उठता और कभी श्रोताओं को लगता कि कोमल स्वर तो रास्ते का पड़ाव-मात्र था। स्वर बड़ चला था। इसमें रौद्र रस का पूरा संचार हो रहा था।

विष्णुपन्त पूरी शक्ति से हाथ चला रहे थे पर पीछे रह रह जाते थे और फैयाज खाँ उसे हाथ की टेक से समझाते जा रहे थे पीछे मत रहो। साथ-साथ चलो!

दास को तम्बूरा बजाते-बजाते लगा गुरुदेव का ऐसा गायन पहले तो नहीं सुना!

मुसु बाबा ने जैसे अपने-आपसे कहा इसे कहते हैं संगीत!

देशमुख ने भी जैसे अपने आपसे कहा ऐसा ठिकाने का गवया दक्षिण में दूसरा न होगा!

नम्बूतिरिप्पाड के कुछ कहने से पहले ही दामोदरन कह उठा ठिकाने का और फिर रीति का लयदार!

पास से नम्बूतिरिप्पाड बोले "और फिर कितने सहज भाव से गाना रंग दिया! यह भाव आप खाँ साहब की आँखों में भी पढ़ सकते हैं। गुणी को गुणवान पहचानता है!

स्वर फूट-फूट पड़ते थे। यह कोई उन्मत्त प्रकृति का राग था। लय का भय पास आ रहा था। आलाप बढ़ता गया। आलाप ने लय को पकड़ना आरम्भ किया। यह कोई साथ-श्रद्धा का राग था। इसमें अतीत की छवि थी। कदाचित् यह उस समय की छवि थी जब सद्यःस्नाता धरती ने सागर से बाहर आना आरम्भ किया था। समवेत चीत्कार बज-बज उठता था सबसे पर—ऊँघ उघ जाता था तम्बूरा। यह तो कोई कोसों लम्बी रागिनी थी—कोई युग-युग की जन्म-जन्म की लम्बी रागिनी जो अछोर अतीत को पकड़ने जा रही थी। कभी लगता यह तो मगन-कामना की पूजा रागिनी है जब आनन्द का हर्ष रोर आलाप को छू-छू जाता। जैसे स्वयम्भू में राग रागिनियों का इष्टदेव प्रवेश कर गया हो जैसे स्वयम् वहां भी न हो कोई राग स्वयं अपने को गा रहा हो।

खाँ साहब कई बार वाह-वाह कर उठे।

छाती में कितना दम हो सकता है और आवाज में कितनी पकड़

ख़ाँ साहब वहीं ठिठककर मायूस-से खड़े रह गए।

एक-एक श्रोता के मन में संगीत बैठ गया, जैसे गीत और श्रोता एकाकार हो गए। राग का प्रदीप्त आलोक भरता, भर-भरकर आग बढ़ रहा था। संगीत में ही सबका शरण-स्थल है, ब्रह्म-ब्रह्म है! मुक्ति अब कोई दूर नहीं रही। संगीत स्वयं अपना स्वर ठीक रखता है! संगीत पार किए की चाँदनी नहीं। संगीत तो नित्य है, सनातन है। बड़े लाघव से, बड़े जतन से रुद्रपम्म् अपने आलाप द्वारा यही सिद्ध किए जा रहे थे।

नम्बूतिरिप्पाड ने नारायणन से कहा, "अब गुरुदेव का गाना बन्द कर देना चाहिए।"

दमायन्न बोला, "रस भंग तो ठीक नहीं।" दामुन्नु कुछ न बोला, वह तन्मय होकर सुन रहा था।

विष्णुपन्त ने सम पर आकर 'धिन्' का स्वर निकला तो गुरुदेव गाना बन्द करने की बजाय फिर आरम्भ हो गए। 'सुन्दर! अति सुन्दर!' विष्णुपन्त के मुँह से निकल गया।

ख़ाँ साहब झूम उठे।

रुद्रपम्म् की आवाज़ उच्च शिखरों को छूती उनके विराट विस्तार में समाती चली गई, डूबती चली गई। उनके विचित्र-सा आनन्द था, तो इसमें एक अनोखी-सी वेदना और पीड़ा भी थी, जैसे कण्ठ रो रहा हो, जैसे रोना ही संगीत का अन्तिम लक्ष्य हो।

गाते-गाते रुद्रपम्म् का मुख-मण्डल पीला पड़ने लगा, पर इस पीलेपन को कोई न देख सका—ख़ाँ साहब भी नहीं।

सहसा रुद्रपम्म् ने अपनी डूबती मिचती आँखों से नारायण को देखा और आँखों-ही आँखों में कहा—मेरे संगीत को निरन्तर आगे ले चलना!

नारायणन का कण्ठ जैसे बैठ गया था, फिर भी उसने गुरुदेव के साथ अपनी आवाज़ मिलाई।

कोई भी न जान सका कि कहाँ गुरु का स्वर मौन हुआ और कहाँ शिष्य का मुखर।

तबलची ने गति तेज कर दी। तोड़ा देने का उसे ध्यान ही न रहा उसे संगीत उड़ा ले चला।

रुद्रपदम् आँखें बन्द किये बैठे थे और दासधरन उसी उठान में उसी लय में उसी स्वर में गाये जा रहा था।

रुद्रपदम् जैसे किसी समाधि में लीन थे। जैसे वे कोई भूली बिसरी कथा का स्मरण कर रहे थे। अतीत तो पीछे रह गया था बहुत पीछे।

सबने देखा। दास गा रहा था। खाँ साहब ने भी देखा उनके साथियों ने भी देखा। गुरुदेव के साथियों की दृष्टि गुरुदेव पर ही थी।

किसी के भी हाथ न हिले। किसी का भी यह साहस न हुआ कि रुद्रपदम् से पूछे—क्या सोच रहे हैं?

खाँ साहब अवाक्-से बैठे थे। अपने साथियों की ओर देख लेते जो बड़ी जिज्ञासा से रुद्रपदम् की ओर देख रहे थे।

दासधरन गा रहा था। गुरुदेव का ऐसा ही आदेश था—बस संगीत को निरन्तर आगे ले चलो!

तबलची बराबर लय को बढ़ाये जा रहा था। सहसा गुरुदेव ने आँखें खोलीं। हाथ फैलाकर उन्होंने तान लगाने की चेष्टा ही की थी कि तान की बजाय रक्त-धार बह निकली और रुद्रपदम् एक ओर को लुढ़क गए।

खाँ साहब ने चिल्लाकर कहा—हाय भया!

और जैसे टूटते तार की खण्डित झंकार के साथ समस्त संगीत थम कर थम गया।

रुद्रपदम् अपने संगीत की लय थामे सदा के लिए कहीं दूर निकल गए थे।



ग्यारह

चन्दन चिता पर रुद्रदत्त का दाह-कर्म किया गया। प्रयाग की जाने से पहले भक्त तक यही कहते रहे 'काश, ऐसी फरिश्तों जैसी मौत हमें मिली होती!'

अन्नपूर्णा की आँखों से आँसू थमते ही न थे। गोविन्द पाँचवें दिन आया। माँ के चरणों में बैठा भाग्य को कोसता रहा। पिता के अन्तिम दर्शन न कर सकने का उसे दुःख था। देर से खबर मिली। बम्बई का फासला! दाह-कर्म के समय तो उसका पहुँचना वैसे भी असम्भव था। उसे अब पिताजी की सभी विशेषताएँ याद आ रही थीं। ऐसे देवता-स्वरूप पिताजी की आज्ञा पर न चलने का उसे बहुत दुःख था। वह फूट-फूटकर रोने लगता। उसके आँसुओं में माँ के आँसू खो गए। उलटा माँ उसे समझा रही थी 'बेटा रोने से तो वे वापस आने से रहे। यही लीला है। ऐसा ही होता आया है। अब विलाप से क्या लाभ?'

उसे इस बात का भी दुःख था कि पिताजी के फूल भी वह अपने हाथ से गंगा में न डाल सका।

'ये सब तो मन रखने की बातें हैं बेटा!' अन्नपूर्णा ने समझाया 'पंछी तो उड़ गया!'

अम्बुनिरिप्पाड को दुःख था कि रुद्रदत्त आत्मकथा के तीन अध्याय अन छोड़ गए। एक उपाय सोच लिया था। गुरुदेव एक चिट्ठी छोड़

गए थे दास के नाम जिसमें उन्होंने जहाँ अपने पुत्र कन्याकुमारी में डालने का आदेश दिया था वहाँ अपने अध्ययन और जीवन-दर्शन का सार भी दिया था। इसमें कला की टक थी। उस पर गहरे अनुभव की छाप थी। कला में भविष्य में उनका विश्वास बोल उठा था। नम्पूतिरिप्पाड इसे आत्मकथा का उपसंहार बनाकर छापने जा रहे थे।

'गुरुदेव की आत्मकथा मलयालम साहित्य की बहुत बड़ी देन होगी। नम्पूतिरिप्पाड ने आँखें ऊपर चढ़ाकर कहा 'एक एक अध्याय लिखने पर उन्होंने कई-कई सप्ताह लगाये।

यह तो उनकी पुरानी आदत थी। गोविन्दन ने बड़े गर्व से सिर हिलाकर कहा एक ही चीज को पाँच-पाँच सात-सात बार लिख चुकने पर ही वे सोचते थे कि अब ठीक भाषा हाथ लगी और जो कहना था कह पाये।

यही बात तो आज दुर्लभ है। हर कोई जल्दी में है। सोचने का अवकाश किसे है? पुस्तक शीघ्र छापी जाय यही तो सब चाहते हैं।

कोई प्रकाशक मिलेगा?

यह काम मेरे ऊपर छोड़ो। गुरुदेव का हम पर कुछ कम ऋण नहीं।

'तो आप ही छापिये। हमारा सहयोग तो रहेगा ही। अगर कन्याकुमारी से लौटे आये योजना बना लेंगे।

गोविन्दन के हाथ में गुरुदेव का पत्र था—पिता की अन्तिम रचना।



बारह

प्रिय भरत

तानपूरा सामने पड़ा है। मन में है साधना की बात। कैसे करूँ? तुम स्वयं मना कर रखा है। उनसठ वर्ष हो गए। पचास वर्ष से ऊपर तो साधना में ही बीत गए।

सोचा नित नित का अभ्यास—साधना नहीं कर सकता तो यह पत्र ही लिख डालूँ।

जो कहना चाहता हूँ वह सका तो!

संस्कृतियाँ मिलती हैं। आस्ट्रिक आये, द्रविड़ आये, आर्य आये, हूण आये, शक आये, सिथियन आये, मुसलमान आये, अंग्रेज आये। सब आये, टकराये और गले मिले। कुछ लिया, कुछ दिया।

मरने के पश्चात् मैं कलकत्ता में ही जन्म लूँगा। मैं मुक्त बाबा से बँधा हुआ हूँ। उन्हें विश्वास नहीं होता। हो भी कैसे? मैं जन्म सोचता हूँ ये नहीं मानते। सोचें भी कैसे? पर वह दिया सो वह दिया। मन ने दिया कि कलकत्ता में बागली पाड़ा का संगीतालय चितपुर के मदुआ टोला में ही जन्म लूँगा। वचन निभाना होगा स्वयं दोबारा जन्म लेकर! दूध-भात तो दूध-भात है! उसकी कोई जाति नहीं होती।

श्रीमती यमुना नम्बूतिरिप्पाड अपनी मातृभाषा बंगला की एक कहावत सुनाती है—'उपल जसत हैं गोदर हमला है!' ठीक कहती है यमुना।

दक्ष-यज्ञ में शिव की निन्दा सती को सहन न हो सकी, उन्होंने प्राण त्याग दिए। शिव ने सती की मृत देह को उठा लिया, मत्त हो उठे, धरती रसातल को जाने लगी। देवता नारायण के सामने गिड़गिड़ाये, चक्री ने चक्र चलाया और सती की देह बावन-खण्ड हो गई।

प्राणहीन देह के तो कोई बावन छोड़ एक सौ एक खण्ड कर डाले। यहाँ तो दूसरा ही संकट उपस्थित है। संस्कृति की जीवित देह को हम अपनी अपनी ओर घसीट रहे हैं, भय हो इस खींचातानी में उसके प्राण छूट जायें।

तानपूरा सामने पड़ा है। इधर बहुत दिनों से मिला नहीं, स्वर मानता बन्द है। जीवन भर स्वर के पीछे भागता रहा। स्वर मिला तो लगता है भगवान् का बुलावा भी साथ ही आ गया। जाना ही होगा। च। दूर जाना नहीं। फिर से बरसाना में ही जन्म लेने की बात है।

बात चल रही थी संस्कृति की। संस्कृति एक है। आर्यों ने द्रविड़ों से बहुत-कुछ लिया। वैदिक सभ्यता की धुरी था यज्ञ, द्रविड़ संस्कृति की धुरी था तीर्थ—तीर्थ अर्थात् नदी का तरण योग्य स्थान। नदी के प्रति पवित्रता की भावना आर्यों ने द्राविड़ों से ली। पतितपावनी गंगा का नाम भी द्राविड़ है। सब कहते हैं यमुना कि आज भी सत्याल की गति नहीं होती जब तक उसकी अस्थियाँ दामोदर नदी में न डाल दी जायें। वृक्ष-पूजा भी आर्यों से पहले की है—बहुत पहले की। मनसा देवता और तीर्थ उत्सव आर्यों ने अनार्यों से लिये। नाग-पूजा भी अवैदिक है पर आर्यों के वंशज नम्बूतिरि ब्राह्मण ही आज केरल में नाग-पूजा के मुख्य सचालक हैं। विवाह में सिन्दूर-दान की रीति आस्ट्रिकों की देन है। पूजा ही नहीं, भक्ति-परम्परा भी अवैदिक है। दास आदि नामों का भी वेद में उल्लेख नहीं। वैदिक और अवैदिक संस्कृतियाँ टकराईं। ऋषिगण शिव-पूजा और लिंग-पूजा के प्रति नाक भौं चढ़ाते थे। वामन पुराण में आया है कि ऋषि-पत्नियों का तो शिव प्रिय थे पर स्वयं ऋषियों में इतनी उदारता न थी। इस

यन म मो इसीलिए गिव का कोई प्रतिष्ठा नहा दो गई था। स्कन्द पुराण' म आया है जय महादेव ऋषि-मुनिया क आश्रम में गए तो उन्होंने क्रुद्ध होकर कहा— र पाप तरे द्वारा हमारा आश्रम विडम्बित हुआ। तरा यह लिंग पृथ्वी-तल पर गिर पडे। फिर वामन पुराण' म हम पढ़ते हैं नि ऋषिगण निव क प्रति उदार होने लगे।

जैसे सोच रहा हूँ वैसे लिख रहा हूँ। जान का वर समाप है। वह तानपूरा तो यहा रह जायगा। नए घर म प्रवेश करना होगा। वहाँ नया तानपूरा होगा। हाँ तो मैं कह रहा था "गव और वैष्णव धर्म आर्येतर धर्मों म हो लिए गए। पुराण साक्षी हैं। पहले इनका तिरस्कार हुआ फिर उन्हें ठौर मिल ही गया। बल्कि कर्मकाण्ड म शवित्वाद ने प्रवेश कर लिया। देवताओं की यज्ञ-रचना म आ विराजे अवतारवाद। इन्द्र गए विष्णु आए। विष्णु को उपेन्द्र कहकर सम्मान दिया गया। हमारे प्रायः अवतारों का जन्म अर्द्धरात्रि को ही हुआ—दो सदृतियों के सक्रान्ति प्रहर में।

सस्कृतियाँ मिलती हैं। मिलती हैं नदियाँ। सगीत म स्वर मिलते हैं। सस्कृति जोडती है विलग नहीं करती। आदान प्रदान के बिना जीवन खीज जायगा कला चुक जायगी स्वर-ताल भग हो जायगा। हम बहुत पीछे न आ रहे हैं बहुत आगे जायेंगे। मुझे तो दूर नहीं जाना पुन धरतना म भी जन्म लेना है।

चिदम्बरम् में नटराज मन्दिर म प्रवेश करने का प्रथम मूर्ति नन्दनार की है जिन्होंने अस्पृश्य परिया जाति में जन्म लेकर परिया दूध-गाछ का दूध पिया था। आज नन्दनार क गान गाए बिना ब्राह्मणों के अनुष्ठान अपूर्ण रहते हैं। फिर यदि मैं भी महुआ दूध-गाछ का दूध पी लूँगा तो इसमें क्या बुराई होगी?

यहाँ के एक-एक जनपद म ग्राम-देवता की पूजा होती है। मन ही मनु ने कहा है—ग्राम देवता क पूजक पतित होते हैं। मनुष्यगोत्रा म जन्म लेकर मैं यहाँ क देवता का वरदान प्राप्त करूँगा।

आर्यों के आगमन से पूर्व दक्षिण के मातृ-तन्त्र समाज में देव-मन्दिरों की अर्चिकाएँ स्त्रियाँ ही हुआ करती थीं। 'महाभारत' के सभा-पर्व में यह उल्लेख है कि जब वैदिक धर्म दक्षिण में पहुँचा तब भी स्त्रियों के सुन्दर ओठों की फूंक के बिना अग्निदेवता जागते ही न थे। फिर देव-मन्दिर की अर्चिका के रूप में स्त्रियों का स्थान उनसे छिनता गया।

तानपूरा मेरे सामने पड़ा है। जीवन भर यह मेरा प्रिय साथी रहा। इसे देखकर कला की ही नहीं घर की बात भी ध्यान में आये बिना नहीं रहती। संगीत विद्यालय से जो-कुछ मिलता रहा वह इतना कम रहा कि उससे तो घर की गाड़ी ही ठेली जा सकी। सोचता हूँ मेरे पीछे गोविन्दन की माँ का क्या बनेगा? गोविन्दन बम्बई में है—फिल्मों में म्यूजिक डाइरेक्टर बनने के चक्कर में। उसने अपनी माँ की सेवा का कर्तव्य न निभाया तो तुम्हें ही गुरुपत्नी की सेवा करनी होगी। भूलना नहीं।

तुम सोचोगे मैं यह सब क्या लिख रहा हूँ। सामने पड़ा तानपूरा तो बजा नहीं सकता। नित नित का अभ्यास बन्द है। किसी भी दिन भगवान् का बुलावा आ सकता है। सोचता हूँ जो कहना है कह डालूँ। कुछ मन में न रखूँ। गोविन्दन की माँ से कहता हूँ मेरे जाने की घड़ी समीप है। वह खीझकर कहती है—छिः ऐसी बात मुँह से न निकालो। मैं कहता हूँ तुम तो दूध-गाछ हो तुम्हारे लिए जैसा गोविन्दन वैसा दास। मैं उसे समझाता हूँ—नाद की मन्त्र तुम्हारा ध्यान रखेगा। वह रोने लगती है। मैं कहता हूँ—छिः अन्नपूर्णा तुम तो बच्चों की तरह रो रही हो। जाने की घड़ी तो आकर रहेगी। सभी को जाना है—कलाकार हो चाहे साधारण व्यक्ति। उसकी आँखों से भर-भर आँसू झरने लगते हैं।

मैं बहुत पीछे भी देखता हूँ बहुत आगे भी। दृष्टि बारम्बार गाछ को मुड़-मुड़ जाती है।

नम्पूतिरि ब्राह्मणों में सबसे बड़ा भाई ही ब्राह्मण-कन्या से विवाह

करने का अधिकार रखता है। छोटे भाई नायर कन्याओं से सम्बन्ध जोड़ते हैं। इसी से बहुत-सी नम्बूतिरि कन्याओं को पति नहीं जुड़ते। उनके नायर युवकों को नायर-वधू नहीं मिल पातीं। और देखिए, नम्बूतिरि खान-पान में तो नायर-कन्या को शूद्र समझता है पर उसके साथ गार्हस्थ्य सम्बन्ध जोड़ने से नहीं हिचकिचाता। नम्बूतिरि की दृष्टि में सभी स्त्रियाँ शूद्र हैं। वह सोचता है प्रातः स्नान के बाद वह फिर शुद्ध हो लेगा। यह कैसा धर्म है, कैसा सम्बन्ध है?

तानपूरा मेरी ओर एकटक देख रहा है। मैं इसे उठाकर गाने लगूँ। जी तो बहुत चाहता है पर नहीं, अभी आप लोगों की यह इच्छा है कि कंठ पर ज़ोर न डालूँ। हाँ, तो केरल के चित्पावन ब्राह्मणों की कथा विख्यात है। परशुराम ने पृथ्वी को क्षत्रियहीन करके यज्ञ और श्राद्ध करना चाहा तो ब्राह्मण कहाँ मिलते? उन्होंने कैवर्तों के गले में यज्ञोपवीत डाल, चिता के पास खड़ा करके उन्हें ब्राह्मण बना डाला। यह सब कब हो हुआ, जब बंगाल में हुआ। हमारे शास्त्रीय गवेषकों के आँगन में लोक-वार्ता से प्रेरणा ली जाती रही है। मेरे इस मत से तो उस्ताद फ़ैयाज़ खाँ भी सहमत हैं कि समय समय पर इसने लोक-पुत्रों के गले में यज्ञोपवीत डाला जैसे परशुराम ने कैवर्तों को ब्राह्मण बनाया।

तानपूरा मेरे सामने पड़ा है। मैं इसे कैसे हाथ लगाऊँ? तानपूरे में मेरे प्राण बसते हैं। तानपूरा देखकर मुझे इस बात का स्मरण हो आता है कि मातृ-पूजा भी चिरंतन है। जमुना सच कहती है, मलयाल जाति में माँ को कहा है 'तोदा दारे' अर्थात् दूध-गाय। दक्षिण में देवदासी प्रथा का प्रचलन रहा। वहाँ यह मान्यता रही है कि कोई स्त्री देवदासी हो जाय तो वह सदा शुद्ध है। देवदासियाँ सात प्रकार की होती हैं—

१ दत्ता—अर्थात् स्वयम् अर्पिता।

२ विक्रीता—स्वयं के मूल्य स्वीकृता।

३ भग्या—कुल-कल्याणाय देवता को निवेदिता ।
४ भक्ता—भक्तिवश देवार्पिता ।
५ हृता—अनिच्छा से आनीता ।
६ अलंकारा—राजा द्वारा नृत्यादि कला निभिता एवं देवार्पिता ।
७ रुद्रगणिका अथवा गोपिका—मन्दिर की वेतन भोगिनी नर्तकी ।

कर्नाटक में देवदासी नाइकानी बनकर रह गई। हम अपनी संस्कृति पर हँसें या रोयें ? मंगल-कार्य में विधवा का प्रवेश वर्जित है। वेश्याएँ चौक से आयें और नाचें। ठीक कहती है यमुना, बंगाल में दुर्गा-पूजा आदि शुभ अवसरों पर वेश्या के द्वार की मिट्टी लाना आवश्यक होता है। यह तो 'अत्रि संहिता' वाली धारणा हुई— न स्त्री दुष्यति जारेन अर्थात् स्त्री उपपति के संसर्ग से दूषित नहीं होती। संहिताकार की यह स्थापना कितनी विचित्र है कि सर्वप्रथम देवता ही स्त्री का उपभोग करते हैं और इस प्रक्रिया के फलस्वरूप सोम उसे पवित्रता प्रदान करते हैं। गन्धर्व सयत-सुन्दर नारी और अग्नि सब मन्या। फिर कोई उसे अपवित्र कर ही नहीं सकता। ऋतु-स्राव से उसका सारा दुरित (पाप) धुल जाता है। नारी के प्रति यह दृष्टि हमें कहाँ ले जायगी ? नारी तो दूध-गाछ है। आज कला में नारी के प्रति हम स्वस्थ और सच्ची दृष्टि लेकर चलना होगा।

तुम सोचोगे मुझे क्या हो गया, गुरुत्व की लेखनी से तुम्हें ये सब संकेत अरुचिपूर्ण लगेंगे। पर कला को जीवन के साथ सम्बद्ध करने की बात है।

संगीत विद्यालय की ओर से मुझे महाराज के कोष से जो-कुछ मिलता रहा उसे मैंने कभी कम न माना। गोविन्दन दूसरी तरह सोचता था। वह कहता था महाराज तो दान के रूप में ही यह धन देते हैं। उसने वह मार्ग छोड़ दिया जिसमें महाराज से दान लेकर निर्वाह करना पड़े। उसने शास्त्रीय संगीत का मार्ग छोड़ दिया। तुम तो गोविन्दन की तरह नहीं सोचते। तुम्हारी तो शास्त्रीय संगीत में पूर्ण

निष्ठा है। गोविन्दन की दूसरी बात है। वह बम्बई में फिल्म वालों के सामने यह दावा करता है कि उसका जन्म उस घराने में हुआ जिसमें बीस पीढ़ियों से संगीत चला आ रहा है। इस प्रकार वह सिद्ध कर दिखाता है कि संगीत तो उसके रक्त में है। यह बात वह छिपा जाता है कि शास्त्रीय संगीत को बीच से छोड़ भागा। वह अभूतपूर्व प्रतिभा का दावा भी करता है। उसकी यह शान! तुमने तो मुझसे दीक्षा ली।

संस्कृति के बने मन्दिर में हम पुनः सत्य की प्रतिष्ठा करें। बीज की सुप्त शक्ति के समान सत्य भी अंकुरित होने के लिए समय क्षेत्र और सुयोग की प्रतीक्षा करता रहता है।

तानपूरे को तो मैं अभी हाथ नहीं लगा सकता। यह पत्र लिख रहा हूँ। इसे भी तानपूरे की तुन-नन-नन समझो। जो मैं गाना हूँ वह भी तो यह गाना है। संस्कृति का गान ही तो करता हूँ। संगीत यदि हम हमारे धरातल में ऊँचा नहीं उठाते तो उसे संगीत कैसे कहा जायगा? मेरा वह थप्पड़ तुम भूले तो न होगे। मुत्तु बाबा का गीत सुनकर तुम हँस पड़े थे। मैंने तुम्हारा अट्टहास सुन लिया। जब मैंने पूछा कि तुम क्या हँसे तो तुमने सच-सच बता दिया कि तुम मुत्तु बाबा के गीत पर हँसे। फिर तो थप्पड़ आवश्यक हो गया। तुम रोने लगे थे। फिर मैंने शान्तिपूर्वक समझाया था कि संगीत पर हँसना तो सरस्वती का अपमान है। मैंने तुम्हें विस्तार से समझाया था कि भरत ने शास्त्र में यही बात कही है कि संगीत विद्या स्त्री का स्थान है पर हम यह स्मरण रखना होगा कि इस मानव ने अपनी साधना द्वारा विकसित किया और आगे बढ़ाया। शास्त्र में मार्ग-संगीत के साथ-साथ देशी संगीत का भी प्रमाण मिलता है। देशी संगीत को आज हम लोक-संगीत कहने लगे हैं। उस्ताद फैयाज खाँ बताते हैं कि उत्तर भारत में लोक-संगीत में बहुत-कुछ लिया गया। ख्याल और टप्पा लोक-संगीत में ही थाय। भटियाली आदि रागिनियाँ भी लोक-संगीत के धरातल से उठाई गई। एक दिन बंगाल में माँझियों द्वारा गाई जाने वाली भटियाली

भी शास्त्रीय संगीत की वस्तु बनकर रहेगी ।

तानपूरा मेरे सामने पड़ा है । इस पर नित नित की स्वर-साधना तो बन्द है । फिर भी इसमें मेरे प्राण बसते हैं । यह तानपूरा मुझ कह रहा है कि हम मसा-तीथ को पहचानें जिसमें अनेक संस्कृतियाँ गले मिलती हैं । तानपूरा कह रहा है कि संगीत म दोनों का भेद भी क्या ?

हम उत्तर और दक्षिण के भेद भाव मिटायें । कला की यही टेर है । कला के दूध-गाछ की यही माँग है । कला एक है । महासती की मृत देह के सदृश कहीं हम इसे बावन खण्डों म विभक्त न कर डालें ।

यमुना के मुख स मैंने अनेक बार रवीन्द्रनाथ ठाकुर की ये पंक्तियाँ सुनी हैं

> तोमारे शतधा करि क्षुद्र करि दिया
> माटिते लुटाय यारा तृप्त सुप्त हिया
> समस्त धरिणी आजि अवहेला भरे
> पा रखेछे ताहादेर माथार ऊपरे ।

—तुम्हें शत् शत् खण्डों म विभक्त करके अपने सोये हृदय म तृप्ति लेकर जो लोग पृथ्वी पर लोट-पोट हो भक्ति दरशाते हैं आज सारी धरित्री ने अवहेला के साथ उनके माथे पर पग रख दिया है ।

> जे एक तरणी लक्ष लोकेर निर्भर
> खण्ड-खण्ड करि तारे तरिबे सागर ।

—जो एक नया है लाखों लोगों का आधार उस खण्ड-खण्ड करके क्या सागर पार करोगे ?

तानपूरा सामने पड़ा है । अब जैसे वह मुझे घूर रहा है । इसे उठा लूँ और छेड़ दूँ कोई-सा भी राग यही जी चाहता है । पर पत्र तो लिख रहा हूँ । क्या मैं अपनी बात कह भी पाया ? हाँ तो हम कला को अपनी ही ओर खींचते हैं । कालिदास को महान् मानने से पूर्व पहले यही चेष्टा करते हैं कि उसे अपने ही प्रान्त का कवि सिद्ध कर डालें । त्यागराज को महान् संगीताचार्य सिद्ध करते समय हम एेसे सोचते हैं

जम उत्तर भारत का उसम कुछ लना-दना न हो। वसे ही उत्तर भारत वाल तानसन की यशकीर्ति म स्वय ही गव करके रह जाते हैं हम उसम साझीदार नही बनते। हम कितने सकुचित होते जा रहे हैं!

बस हम विदेशी सत्ता स लड रहे हैं। हम एक दश की जय बुलाते हैं भारत माता का नाम लेते हैं। पर कला का उत्तर-दक्षिण और पूव-पश्चिम म विभक्त करके इसके खण्ड-खण्ड करके ही आत्म-तुष्टि अनुभव करते हैं।

तानपूरा तो एक है। सामन पड़ा तानपूरा साक्षी है। हाँ तो हम उत्तर-दक्षिण की भावना भुलाकर हिन्दुस्तानी और कर्णाटका सगीत को पास-पास गायें। आय-द्रविड सस्कृति पारावार के सत-शुद्ध जल स आच मन करें।

तानपूरे की तो यही टेक है कि कला में दश-देश के सीमान्त भी विलीन हो जाय। सब भेद भाव भुलाकर एक ही मानव-कला और सस्कृति क दावेदार बनें। यह स्थिति दूर करें कि उपल जलते रहें और गोबर हँसता रह।

अब रही मुत्तु बाबा की प्रिय वचन की बात। जी म आता है सामन पड़ा तानपूरा उठाकर आलाप करन लगू। मन की बात गाकर कह सकूँ तो!

घ च थ ऋग्वेद क हमारे पूवज, जो देह स बिछुड़ा आत्मा को सम्बोधित करके आलाप लिया करते थे—

—आओ उस प्राचीन माग से आओ
जिससे हमारे पितर पुरावास में गये।
—वहाँ तुम वरुण
और यम को स्वधा ग्रहण करत
देखोगे।
—यम से मिलो। पितरों से मिलो।

परम स्वत्व में सुसम्पादित कर्मों का पुण्य
लाभ करो।
—पाप को छोड़ पुनः नवग्रह को प्राप्त हो!
नूतन आलोकमय तन धारण करो!

मुझको यहीं दूर न हो जाना, गुरु बाबा! अपना वचन याद है। बरकला के मछुआटोला में किसी मछुआ दूध गाछ की कोख से ही जन्म लूँगा। वह दिन आ रहा है। मैं उसे देख रहा हूँ।

प्रिय भाग्य, मेरे प्रिय शिष्य, तुम्हें वंश का उत्तराधिकार सँभालकर रखना होगा। मैं आ रहा हूँ—पुनः जन्म लेकर फिर से शिशु बनकर। शिष्य का शिष्य बनकर ही मेरा जीवन सार्थक होगा। गोविन्दन से कहना मैंने उसे क्षमा किया। वह स्वतन्त्र है। अपने लिए अलग पथ चुनने की उसे स्वाधीनता है।

विचित्र वीणे, मेरा प्रणाम स्वीकार करो। तानपूरा मेरी ओर देख रहा है जैसे कह रहा हो—मुझे उठा लो और कोई राग गाओ। अन्त में यही कहना शेष है, मेरे फूल कन्याकुमारी में डालना, जहाँ तीन सागर मिलते हैं—इसलिए कि कला-संगम ही मेरा आदर्श रहा। और मेरी भस्मी चिताभोर के ही सागर में डालना, जिसके समीपवर्ती मछुआटोला में मुझे जन्म लेना होगा, मुड़-मुड़ जन्म लेना होगा—सागर संगीत का अमृत-मन्थन करने के लिए।

—रुद्रपट्टम्



तेरह

गुरुदेव का पत्र गोविन्द ने तीन बार पढ़ा। हर बार उसे लगा कुछ छूट गया, कोई वस्तु पकड़ में आने से रह गई। जैसे यह पत्र उसके लिए नहीं, किसी के लिए लिखा गया हो।

कमरे में जहाँ गुरुदेव बैठा करते थे सब-कुछ वैसा ही पड़ा था। बस गुरुदेव ही नहीं थे। शीशे में फ्रेम में जड़े गुरुदेव के सुन्दर सुलेख का उदाहरण थीं ये पंक्तियाँ

राजा उदयन ने भिक्षु आनन्द को पाँच सौ चादरें दीं और पूछा,

'भन्ते, इतने चीवरों का क्या करेंगे?'

'महाराज, जिन भिक्षुओं के चीवर फट गए हैं, उन्हें बाँटेंगे।'

'उनके जो पुराने चीवर हैं, उनका क्या करेंगे?'

'महाराज, बिछौना की चादरें बनायेंगे।'

'पुराने बिछौना की चादरों का क्या करेंगे?'

'महाराज, गद्दों के गिलाफ बनायेंगे।'

'पुराने गद्दों के गिलाफों का क्या करेंगे?'

'महाराज, फर्श बनायेंगे।'

'पुराने फर्शों का क्या करेंगे?'

'महाराज, पाँव-पोछ बनायेंगे।'

'पुराने पाँव-पोंछों का क्या करेंगे?'

'महाराज, झाड़न बनायेंगे।

पुराने भाड़ना का क्या करेंगे ?'
उन्हें कूटकर कीचड़ के साथ मग्न कर पलस्तर करेंगे।

—एक बौद्ध कथा

उसे लगा यह बौद्ध-कथा भी गुरुदेव ने उसी के लिए लिख रखी है। तो क्या उसे बम्बई नहीं जाना चाहिए ? वह बैठा यही सोच रहा था। माँ के सामने उसने प्रस्ताव रखकर देख लिया था कि वह उसके साथ बम्बई चले। माँ ने साफ़ कह दिया था कि वह वरकला नहीं छोड़ेगी। वरकला में ऐसी क्या बात थी ? अब तो उसे भी लगा वरकला में कोई बात है।

गुरुदेव का पत्र उसने चौथी बार पढ़ा जैसे गुरुदेव कह रहे हों—गोविन्दन उठ जाग ! गा नूतन राग ! रे अदूरदर्शी उठ मोह त्याग ! नूतन भाव नूतन चाव भर ले मन के झोले में हे वीतराग ! ले नूतन भाग ! गा विहाग !

वह उठकर खड़ा हो गया और धीरे से जड़ी बौद्ध-कथा पढ़ने लगा—एक बार दो बार तीन बार। इस कथा में से भी जैसे हर बार कोई सूत्र पीछे छूट जाता हो। आखिर बीच का सूत्र हाथ लग गया। उसने मन से पूछा यदि चीवर भी एक दिन भाड़न बनना है और भाड़न ने कीचड़ में मग्न होकर पलस्तर में काम आना है तो फिर क्या समूचे मानव-जीवन को इसी दृष्टि से देखना होगा ?

फिर वह गुरुदेव की आत्मकथा इधर-उधर से पन्ने पलटकर पढ़ने लगा। माँ ने आकर टोका बेटा इसे छोड़ दे। जाकर सागर-स्नान कर आ। पर वह न उठा।

वह माँ से कहना चाहता था कि वरकला के जीवन पर पिताजी ने जो प्रभाव डाला उसी का प्रमाण है पिताजी की आत्मकथा। पर उसने यह बात मुँह से न निकाली। वह कहना चाहता था कि वरकला में ऐसी कोई विशेषता अवश्य है जिस पर वह बचपन में मुग्ध रहा।

'वरकला के अटन व्यक्तित्व को पिताजी ने समझा माँ ! उसने साहसपूर्वक कह ही डाला ।

'ठीक होगी यह बात ।' माँ को जैसे अपनी ही बात स्मरण हो 'तुम सागर स्नान कर आओ बेटा !'

वह न उठा । माँ रसोई में काम कर रही थी । बाहर से सागर का जय घोष सुनाई दे रहा था ।

उसे स्मरण हो आया कि एक बार उसने पत्र में पिताजी को लिखा था 'हमारा देश तो इतना विशाल है कि कोई व्यक्ति मात्र वरकला को देखकर समूचे देश का चित्र हृदय में नहीं बिठा सकता ।' इसके उत्तर में गुरुत्व न लिखा था 'तुम्हारी बात के साथ इतना और जोड़ दूँ'— हमारी विशाल जन्मभूमि के वर्तमान स्वरूप की झाँकी देखकर ही कौन इसके महामहिम अतीत की कल्पना जुटा सकता है ?' उसे लगा कि पिताजी ने ठीक ही लिखा था ।

'माँ हमारी जन्मभूमि की जड़ें तो हमारे अतीत में पाताल तक चली गई हैं !' उसने आह्लादमय स्वर में कहा ।

'ऐसी बातें तो तुम्हारे पिताजी रोज ही कहा करते थे ।' माँ को जैसे इस प्रकार की सूक्तियों में कोई रस नहीं रह गया था ।

'हमारा अतीत हमारे वर्तमान के साथ जुड़ा है माँ ! और हमारे वर्तमान से हमारे भविष्य के अंकुर फूट रहे हैं ।'

गोविन्दन की यह बात भी माँ को न छू सकी । 'वह बोली 'नाव इसी गाड़ी से आ रहा होगा । तुम उससे पहले तक सागर-स्नान कर आओ न !'

माँ जैसे पर यथार्थ के धरातल पर थे । जाने वाला चला गया था और अब वह लौटकर नहीं आ सकता था । अब माँ का आग्रह टालना सहज न था । माँ ने उसे कन्धे से पकड़कर उठा लिया था ।

वह स्नान के बाद लौटा तो देखा दास लौट आया । दास फूट-फूट कर रो पड़ा । गोविन्दन भी स्थिर-मन न रह सका । बचपन के मित्रों

के आँसू गने मिलते रहे। माँ ने बड़ी मुश्किल से उन्हें अलग किया और गम्भीर आवाज में कहा "रोने से तो वे लौटकर आने से रहे। सोचो और विचार करो। आगे की बात सोचने वाला ही बुद्धिमान है!"

दास स्नान करने चल दिया। गोबिन्द पिता की आत्मकथा पढ़ने लगा। स्नान के बाद दास लौटा तो माँ ने कहा "भोजन तैयार है!"

"मैं तो कुछ नहीं खाऊँगा माँ! मुझे भूख नहीं!" दास की आवाज में वेदना का स्वर था।

"तुम नहीं खाओगे तो मुझे भी भूख नहीं!" गोबिन्द भी चुप न रह सका।

"अन्न तो किसी से छूटा नहीं बेटा!" माँ ने समझाया "अन्न की स्तुति से ही तो गुरुदेव ने अपनी पुस्तक आरम्भ की है।"

तीनों की आँखें पुस्तक की पाण्डुलिपि पर झुकी थीं—समर्पण-पृष्ठ पर

"अन्नमय है हमारा मन! उसी अन्नमय मन्त्र स्रोत को समर्पित है यह ग्रन्थ।"

ब्रह्मविद्या की दीक्षा देते हुए उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु से कहा "पन्द्रह दिन तक कुछ मत खाओ।"

पन्द्रह दिन के उपवास के बाद उसने पिता से पूछा "क्या सुनाऊँ?"

पिता ने आज्ञा दी "सौम्य मुझे ऋग् यजु साम के मन्त्र सुनाओ।"

पुत्र ने दुःखित वाणी में कहा "देव क्षमा करें। मैं सभी मन्त्र भूल गया हूँ।"

तदनन्तर पिता के आदेशानुसार श्वेतकेतु ने भोजन किया और सभी मन्त्र उसकी जिह्वा पर उतर आए।

तब पिता ने कहा "सौम्य अन्नमय है हमारा मन। अन्न के अभाव में उसकी गति कहाँ?"

अब दोनों मित्रों को भोजन के लिए बैठने देर न लगी।



चौदह

गाड़ी जितने वेग से आगे की ओर भागी जा रही थी, गंगाशरण की विचारधारा उतनी ही गति से पीछे, दूर पीछे, वरकला की ओर भाग रही थी।

दास को चुप पाकर गोविन्दन ने कहा, "अब पीछे की बातें छोड़ो, आगे की सोचो।"

दास ने कुछ उत्तर न दिया। वह कुछ इस तरह बैठा था जैसे अगले किसी भी स्टेशन पर उतर सकता हो। एक विचार आता, एक जाता। ऐसी दुविधा में इससे पहले वह कभी नहीं पड़ा था। कभी सोचता, उसका यों बम्बई का टिकट कटाकर गाड़ी में आ बैठना गुरु-परम्परा का अपमान है। गुरु की सब बातें भुलाकर उसने गुरु की महिमा को नीचा गिराया, उस पर बट्टा लगाया। फिर गोविन्दन की बातें याद आतीं। बम्बई की रसमय ध्वनि का जो चित्र गोविन्दन ने बातों ही-बातों में उसे दिखाया था, उसमें कितना आकर्षण था!

गोविन्दन ने उसे कठपुतली बना लिया, जब उसने बताया, 'जहाँ मैं रहता हूँ बम्बई में मरीन ड्राइव पर एक फ्लैट में, वहाँ से सागर का दृश्य बहुत भला लगता है।' गोविन्दन ने यह भी तो कहा था, 'बम्बई में तुम्हारा सितारा एकदम चमक जायगा!' यह समझकर बैठ गया, महमाद की टेक मिट गई।

वह सोचने लगा, गोविन्दन कितना निपुण है! आत्मविश्वास तो

उसकी छुट्टी म है। गोविन्दन ने उसे यह भी तो बताया था कि बम्बई म बड़े-बड़े लोगों से उसको मिलना है जो उसकी प्रशस्ति गाते हैं। उसने अपनी योग्यता का लम्बा चौड़ा हिसाब किताब बताया था अपने सम्बन्ध सूत्रों का मानो पिताल म ठेका लगाया था।

गोविन्दन ने उसका कन्धा झमोड़कर कहा बरकला अपनी जगह रहेगा कहीं चला नहीं जायगा। बम्बई म तुम्हें बरकला की याद नहीं सतायेगी। बम्बई का जादू सिर चढ़ बोलेगा।

गुरुदेव न मुझम जिस आचरण की आशा की थी मैं उससे हट रहा हूँ।

यह तुम्हारा भ्रम है। तुम्हारे अन्दर जो भय भरा हुआ है उसे निकाल दो। मैं कहता हूँ बम्बई म तुम्हारी कला चलेगी। तुम्हें पैसा मिलेगा। पैसा तो जरूरी है।

दुविधा म उलझा-उलझा दास बैठा था जैसे अब भी वह अगले स्टेशन पर नीचे उतर जाने का फैसला कर सकता हो। वह कह सकता था—मुझे तो बरकला ही पसन्द है वहीं लौट जाऊँगा बम्बई नहीं चाहिए। पर गोविन्दन की बातें मुड़ मुड़ मन पर थाप लगा रही थीं—बम्बई की सुख-सुविधा की बातें। बम्बई म नीलू भी तो थी जो किसी विद्यालय म पढ़ाती थी। गोविन्दन को तो विश्वास था एक दिन नीलू को भी फिल्मों में ले आयेंगे। नीलू का आग्रह था फिल्म म काम करने के लिए पिताजी की स्वीकृति चाहिए और पिताजी कभी इसकी अनुमति नहीं दे सकते थे। गोविन्दन का विश्वास था कि जब दास बम्बई से नम्पूतिरिप्पाड को लिखेगा कि नीलू का भविष्य तो फिल्म के साथ जुड़ना ही चाहिए तो वे मान जायेंगे। गोविन्दन इस बात पर हँसता था कि नीलू व्यर्थ ही नतिकता की दलील देती है और उस विद्यालय म अपना समय गँवा रही है जबकि फिल्मों में उसे असीम ख्याति मिल सकती है और अपार दौलत।

क्या सोच रहे हो दास ? गोविन्दन ने उसकी पीठ पर थपकी

दकर कहा तुमम साहस होना चाहिए। हम पिताजी की जीवनी पर फिल्म बनायेंगे। उनकी आत्मकथा छपने भर की देर है। इसके अनुवाद की व्यवस्था बम्बई में कुछ भी मुश्किल नही होगी। अनुवाद निकला नहीं और समझो चर्चा शुरू हो गई। फिर हम इसम पसा लगाने वाले भी ढूंढ ही लेंगे। गुरुन्व का सगीत तुमम अच्छा कौन न्गा ? इस तरह तुम गुरु-परम्परा की कुछ सेवा ही तो करोगे।

"गुरुन्व की यश-महिमा को आगे ले चलने म कुछ कर सकू यह तो मेरा धम है!

यही तो मैं भी सोचता हू। इस काम म इरा भी हमारी सहायता करेगी।

शांत चुपचाप बठा रहा। इरा की महिमा वह सुन चुका था। शांत समत भाव स वह बीच-बीच म गोविन्दन की ओर देख लेता। उसने सोचा गुरुन्व पर जो फिल्म बनेगी उसम नालू को आ ले ही आयेंगे। इरा तो रहेगी ही। साठवा वषगाठ वाला अन्तिम दृश्य ठीक स न्लिान म आफताब-मौसाकी फयाज खाँ अवश्य सहयोग देंगे। बम्बई स बडौदा कौन दूर है! बडौदा स व बम्बई तो आ ही सकेंगे।

तुम्हे देखकर नीलू कितना प्रसन्न होगी शान्त! गोविन्दन मुस्कराया जब भी मिलती है तुम्हारा समाचार अवश्य पूछती है।

शान्त मुस्कराया। इस समय नीलू की स्मृति कितना सुखद था! गुरुन्व की जीवनी की फिल्म की बात तो घाव पर मरहम का काम कर गई। यह सुझाव गोविन्दन के जन्म-जात सस्कारों का प्रताप था। आखिर गोविन्दन पिता का पुत्र निकला। जस की सगा जसे वह फिल्म तयार भी हो गइ। पिता की प्रसिद्धि म गोविन्दन न हाथ बटाया। पुत्र हो तो एसा। पिता-पुत्र म ऐसा ही ताल-मल होना चाहिए। मन-प्राण एक बार झनझना उठ। सब ओर आनन्द से उसकी कल्पना नाच उठी।

डिब्ब म बहुत भीड़ थी। गाडी दनदनाती हुई भागी जा रही थी। बरकला पीछे रह गया था—बहुत पीछे।

गोविन्दन ने इस बात पर सन्तोष प्रकट किया कि करकला के संगीत विद्यालय में त्रिवेन्द्रम् से एक महोदय आ रहे हैं, और जैसा कि नम्बूतिरिप्पाड ने कहा था, चिलावकोर के मधुमाटोला वाली संगीत शाला के लिए भी वे गुरुदेव के एक अन्य शिष्य की सेवाएं प्राप्त कर लेंगे। यह तो संसार है, दास! उसने दास की आँखों में झाँककर कहा, 'एक जाता है, एक आता है। करकला की चिन्ता छोड़ो। तुम्हारे बिना भी करकला की गाड़ी चलेगी। तुम्हारी जरूरत तो बम्बई में है। बम्बई तुम्हारी कला को सलामी देगी।

दास मुस्कराया, 'कला ही जीवन है, गुरुदेव कहा करते थे। कला दूध-गाछ है।'

'तुमने देखा था न, दास!' गोविन्दन ने प्रसंग बदलकर कहा, 'माँ ने मुझे बम्बई आने से रोका नहीं था, उसने तो मेरे इस सुझाव को भी सराहा कि तुम मेरे साथ बम्बई चलो। माँ बहुत समझदार है। वह जानती है पैसा ही गाड़ी का पहिया है। वह तो पिताजी से भी यही बात कहा करती थी। पिताजी जीवन भर आदर्शवादी रहे। क्या मैं झूठ कहता हूँ, दास?' और फिर पैंतरा बदलकर वह बम्बई की प्रशंसा के पुल बाँधने लगा। साथ-साथ वह यह भी कहता जा रहा था कि वहाँ मक्खन-पालिश के बिना तो काम नहीं चलता।

दास फिर किसी सोच में खो गया, जैसे वह अब भी अगले स्टेशन पर उतरकर करकला की गाड़ी पकड़ सकता हो। वह सोच रहा था, मैं तो निर्मोही, मक्खन-पालिश नहीं लगा सकूँगा। फिल्मों में मेरा संगीत कैसे चलेगा? वहाँ तो चटपटी धुनों की ही पूछ है।

'*फिल्मों में लोग खूब पैसा लगाते हैं!*' गोविन्दन मुस्कराया, 'और खूब मुनाफा कमाते हैं। संगीत के बिना फिल्म की गाड़ी नहीं चलती।'

'संगीत!' दास ने नाक भौं चढ़ाकर गर्दन हिलाई। गर्दन तक पहुँचते उसके घुँघराले बाल झूम उठे।

'हाँ हाँ, संगीत!' गोविन्दन ने अपनी बात दोहराई।

गुरुदेव तो कहते थे उस संगीत कहना कला का अपमान है।

'बात-बात में उनकी दुहाई न दो!' गोविन्द जैसे खीझ उठा अपनी बात करो। बरसला पीछे रह गया—बहुत पीछे। दो स्टेशन और। फिर बम्बई की सीमा शुरू हो जायगी। हम विक्टोरिया टर्मिनस पर उतरेंगे। कहते-कहते वह मुस्करा उठा "गुरुदेव तो हम दोनों के गुरु थे। वे अब नहीं रहे। अब यह समझो कि बम्बई में कुछ दिन मुझे ही तुम्हारा गुरु बनना होगा। मैं तुम्हें बताया करूँगा कहाँ ठुमरी और दादरा के गड्ड-मड्ड से कोई चीज उभारता है कैसे टेरा लगाते-लगाते मानो पाताल में उतर जाना है जहाँ हमारे महाकवि रहते हैं—नीचे, बहुत नीचे।

'बहुत नीचे—मराज मन्दर से भी नीचे!" ज्ञान हँस पड़ा।

'पैसा देने वाला हम चाहे जितना नीचे क्यों न ले चले। गोविन्द की आँखें नाच उठीं 'यह भी मसखरा-पालिसी है। हमें पैसा चाहिए। हमसे कोई ऊँचा स्वर लगवाये चाहे नीचा सात पाताल वाला।







मीना-बाजार



एक

मेरीन ड्राइव को देखकर यह कहना तो कठिन है कि बम्बई किसी समय मछुओं का साधारण-सा गाँव था। हाँ तो मरीन ड्राइव के तीन रंग हैं। एक रंग उषा का है जैसा शृङ्गार से पहले नववधू का होता है। एक रंग दोपहर का है—न ओस न चमक जाने क्या ऊधना सा रहता है। एक रंग साँझ का है जिसमें इन्द्रधनुष के सातों रंग घुल जाते हैं। यहाँ की उषा है किसी मौजी की मलक-सी दोपहर विराम सी और साँझ एकदम विलम्बित लय-सी। साँझ का निखरा हुआ रंग ही मरीन ड्राइव का सच्चा रंग है।

जहाँ मरीन ड्राइव की गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ सागर के साथ-साथ चली गई हैं वहाँ कभी सागर ठाठें मारता था। यह सब भूमि सागर से छीन ली गई।

मरीन ड्राइव से आरम्भ होने वाला यह पत्थर और सीमेण्ट का रास्ता एक लम्बी भुजा के समान सागर के भीतर तक चला गया है जैसे माँ अपने बच्चों को पास बुला रही हो। इसका अंतिम सिरा है नरीमान पॉइण्ट। नरीमान का सपना था कि एक दिन इस पाषाणी भुजा को बालाबार से मिलाकर इसके उत्तर-पूर्वी भाग का जल निकाल लिया जाय और फिर इस समतल भूमि का रूप दे दिया जाय। फिर तो हम यहाँ मरीन ड्राइव की अट्टालिकाओं से भी ऊँचे भवन बनते देखेंगे और सोचेंगे मनुष्य चाहे तो क्या नहीं कर सकता! बम्बई तो इसी

प्रकार फलती चली गई है फल रही है—नई-नई बस्तियों के रूप में नये-नये उप-नगरों का चेहरा मुहरा लेकर। पूरा नगर एक विराट् बर गद के सदृश है जिसकी हर छोटी-बड़ी शाखा एक-दूसरी पर बाजी ले जाने को हाथ-पैर मार रही हो।

नरीमान-पाइंट पर बैठे-बैठे गोविन्दन ने कहा वह रहा उस ऊँची अट्टालिका में हमारा फ्लैट। उससे सातवें फ्लैट छोड़कर रहती है इरा। कल उसका जन्म दिन है। तुम भी चलना मेरे साथ।

तुम कह रहे थे 'माँग का सिन्दूर' में माँ की पृष्ठ भूमि में काम किया है इरा ने। दास मुस्कराया।

इरा की अपनी माँग में सिन्दूर नहीं पड़ा। गोविन्दन ने आँखें नचाईं वह माँ नहीं है पर ममता के अभिनय में वह गोद में दूध पिलाने वालियों को भी पीछे छोड़ गई। हम आज दूसरे शो में यह पिक्चर देखने चलेंगे।

दास कुछ न बोला। वह बड़े ध्यान से उन युवतियों को देखने लगा जो अभी अभी एक युवक के साथ आकर खड़ी हो गई थीं।

फिर एक अधेड़ जोड़ा आ निकला। साथ थी उसकी कन्या जूड़े पर दवन फूल खोंसे।

तीनों कन्याएँ घुल मिलकर गप शप करने लगीं मानो वे चिर-परिचिता हों।

गोविन्दन ने दास के कान में कहा यह दवन फूल वाली लड़की हु-ब-हू इरा से मिलती है—वही चेहरा मुहरा वही उठान।

मैं तो यह नहीं कह सकता। दास मुस्कराया 'मुझे तो इरा से मिलाया नहीं।

कल तुम उससे मिलोगे मेरे ठाठ से। गोविन्दन हँस पड़ा और देखो माँग का सिन्दूर तो आज तुम देख ही लो। शायद वह पूछ बैठे। और देखो इरा से मिलने पर कोई कच्ची-पक्की बात न कह बैठना।

सूर्य सागर में डूब रहा था। सागर की लहरें नरीमान प्वाइंट से टकरा रही थीं मानो डूबते सूर्य की सुनहरी घेरेदार घघरिया पहन नीलवर्ण लहरों ने भी किसी नृत्य-मुद्रा में गोविन्द की बात दोहरा दी—हाँ-हाँ, कोई कच्ची-पक्की बात न कह बैठना।

वह तीनों कन्याओं की ओर मुड़-मुड़ देख लेता और सोचता इनकी माँग में भी सिन्दूर पड़ेगा। ये भी माँ बनेंगी; शिशु के लिए दूध उतरेगा। उसकी कल्पना में कलकत्ता घूम गया। वहाँ भी सागर-तट पर सूर्य डूब रहा होगा। वहाँ भी लाल चट्टानों से खेलती लहरों ने सुनहरी घघरिया पहनी होगी। इसी प्रकार लहरें उचक-उचककर कलकत्ता के देवता जगन्नाथ स्वामी के दर्शन लाभ की इच्छुक-सी दीखती होंगी।

गोविन्द श्याम वर्ण और इकहरे शरीर का युवक था। मुस्कराता बात करता तो गहरी भवों के नीचे से उसकी बड़ी-बड़ी आँखें उसकी प्रतिभा का नाम उछालती-सी लगतीं। उसे कभी-कभी इस बात का ध्यान अवश्य आता कि उसका कद ऊँचा क्यों न हुआ। पिताजी तो खूब कद के निकलते हुए थे पर वह पिता पर नहीं माँ पर था।

नाग लम्बा था मानो मूर्तिकार ने ऊँची चट्टान चुनकर उसकी आकृति गढ़ी हो। लम्बे हाथ, बड़ा सिर, चौड़ा माथा। वह कलकत्ता के वेष में था—कमर में घुटनों तक धोती, खुली आस्तीनों का कुर्ता, कन्धों पर सुनहरी किनारी वाला पटका। गोविन्द के समान पैंट और बुशकोट पहनने का वह शौक़ीन न था। उसके मुख पर मुस्कान खिल रही थी—देश के कुम्भ में घिरे घट के सद्भाव और स्वागतम् भाव-सी।

तीनों कन्याएँ सूर्य की डूबती किरणों में स्वर्ण मूर्तियों-सी लग रही थीं। वह युवक एक ओर को हटकर प्रकट आदेश के भाव किसी ग़लत पते वाले लिफ़ाफ़े जैसे प्रसंग पर जल्दी-जल्दी ज़बान चला रहा था मानो उन लिफ़ाफ़ों की सही मंज़िल पर पहुँचने की कोई आशा न हो।

गोविन्द बोला, "बम्बई में मुझे कम जूझना पड़ा। बहुत दिन तक फ़ुटपाथ पर सोता। फिर नौकरी मिली। और दादर का मोरी

मैं मरीन ड्राइव के फ्लैट में आने की कहानी तुम सुनोगे तो मेरे साहस और परिश्रम को अवश्य सराहोगे।

इस हिसाब से तो मैं भाग्यशाली हूँ। दास मुस्कराया 'मैं तो कलकत्ता से सीधा मरीन ड्राइव के फ्लैट में ही चला आया।'

एक बात यह भी तो है। मुझे इरा से मिलने में अनेक दिन लग गए थे। तुम धन्य हो यानी बम्बई आने के तीसरे ही दिन इरा से मिल लोगे। गोविन्दन हँस पड़ा। बस इरा के सामने कोई कच्ची-पक्की बात न कह बैठना। यह भी मत पूछना कि उसके सपनों के सूटकेस में क्या क्या घास-सीपियाँ खोई पड़ी हैं।

तुम कहते हो तो बोलूँगा ही नहीं। केवल मुस्कराकर ही उसे देखता रह जाऊँगा। मैं ऐसा ही करूँगा, बोलूँगा ही नहीं। और दास की कल्पना में जनार्दन स्वामी के मंदिर का सुनहरा कलश घूम गया जो आकाश में लटकता-सा लगता था जैसे मन्दिर की घण्टियों की आवाज बराबर कान में पड़ रही हो। देवता का दर्शन-लाभ करने वाले यात्री जैसे सीढ़ियाँ चढ़कर मन्दिर को जा रहे हों। उसकी आँखें खुल गईं जैसे नींद से जागकर उसने पूछा 'इरा का जन्म यहीं बम्बई का है?'

'यहाँ का नहीं, हैदराबाद का।' यह कहकर गोविन्दन कल्पना में पत्नी उन कन्याओं की ओर देखने लगा जिनके विचार मिट्टी में दबे बीजों से जमे नवजात अंकुरों-से थे।

दास की आँखों में वरकला के घर घूम गए—कैसे वे कुम्भा के बीच मुस्कराते घर, नवजात बछड़ों को प्यार से चाटती गौएँ, पकने को लटकाए केला के गुच्छे, धूप में सूखने को फैलाई काली मिर्च, काजू के भूरे छिलके वाले ढेर, जो बम्बई तक आ पहुँचते थे और जिन्हें डालडा में तलकर और नमक लगाकर बम्बई के धनजौरी और ईरानी रेस्तोराँ में परोसा जाता था। वरकला के किसी भी घर की विशेषता थी ताजा दोसे की गरम-गरम सुगन्ध। गोविन्दन ने उसके कन्धे पर

हाथ रखकर कहा, 'कमाल हो जाय, यदि हमारी नीलू भी इस समय घर पर निकले ! कल तो नहीं परसों उससे मिलने चलेंगे।'

श्वेत फूल वाली रूपसी दोनों युवतियों के बीच खड़ी चौखटे में जड़ी तस्वीर-सी लग रही थी। उसे देखकर राम की आँखों में पिता की बनाई मान मूर्ति घूम गई। यह भी माँ बनेगी उसने सोचा—इसका दूध भी उतरेगा।

तीनों कन्याएँ किसी बात पर हँसकर दोहरी हो-हो गईं। गोविन्दन बोला 'तुम्हें देखकर नीलू कितनी प्रसन्न होगी !'

'और इरा अप्रसन्न होगी ?'

'परिचय की बात है। नीलू अपनी जो है।'

'और इरा ?'

'फिर वही कच्ची-पक्की बात ! पूछ तो रहे हो पर इसका भाव तुम नहीं समझते !' गोविन्दन मुस्कराया 'मैं तुम्हें अहल्या की माँ से भी मिलाऊँगा।'

'और अहल्या से नहीं ?'

'फिर कच्ची-पक्की बात ! हाँ तो अहल्या की माँ आज भी उसी खोली में रहती है—उस खोली से तीसरी खोली में जहाँ कभी मैं रहता था।'

इस बार कई तीर्थयात्रियों पर आए और चले गए। अधेड़ ...... उन युवकों से बातें किए जा रहा था मानो वे अपनी कन्या के लिए वर पा गए हों। और उधर तीनों कन्याएँ मुस्कान के नीलम-मोती बिखेर रही थीं।

पिताजी हमें सत्य के लिए छोड़ गए ! गोविन्दन ने दार्शनिक-सी आवाज में कहा 'अब तो वे अपनी आत्म-कथा में ही जीवित रहेंगे। मलयालम में छप जाने पर हम इसे हिन्दी में भी छपवायेंगे। पिताजी का दर्द तो बढ़ना ही चाहिए।'

"क्या उनका हिन्दी नहीं बन सकता ?

क्यों नहीं। पर रुपया कौन लगाये? देखेंगे—जो भी बन पड़ेगा करेंगे।"

गुरुदेव तो ग्राबारा जन्म लेंगे बरकला के मधुमाटोला में।' दास ने करुणा भरी आवाज में कहा 'चिट्ठी में लिखी बातें झूठ तो नहीं हो सकती। तुम उन्हें उतना नहीं जान पाए जितना मैं!

गोविन्दन ने आँखों में व्यंग्य-सा चमकाकर कहा सुना नहीं था अँधेरी से लौटते समय रेल में हमारे पास बैठा युवक क्या गा रहा था! और वह गुनगुनाने लगा—

"अगले वक्तों के हैं ये लोग इन्हें कुछ न कहो!'

दास के लिए इस विचार से सहमत होना सहज न था। गुरुदेव की बातें रह रहकर उसे याद आ रही थीं। उनकी कला उनकी सहृदयता उनकी लेखनी में समन्वय की भावना। इनका संगम ही तो थी गुरुदेव की आत्मकथा। गुरुदेव की चिट्ठी को आत्मकथा का उपसंहार बनाने की बात भी नम्पूतिरिप्पाड को समय पर सूझी।

तुम मेरे साथ आ गए यह तुमने बुद्धिमानी का काम किया। गोविन्दन मुस्कराया "अब देखो हम बम्बई को किस तरह उँगलियों पर नचाते हैं। हम एक नहीं दो हैं। नहीं हम दो नहीं एक हैं। मुम्बादेवी हम पर दयालु होगी! जन्मभूमि—नहीं नहीं जहाँ मनुष्य का जन्म होता है। जन्मभूमि तो सारा देश है। सप्त-कोटि भुजाएँ उठाकर जन्मभूमि अपनी सन्तान को प्यार करती है।

दास कुछ न बोला। उसे लगा गोविन्दन ठीक कह रहा है। जन्मभूमि में तो सात लाख गाँव थे। उसमें तो शत-शत नगर उपनगर थे। जंगल पहाड़ मैदान थे नदी-माताओं के प्रिय शत-शत जनपद थे। ऐसी जन्मभूमि से तो जितना प्यार किया जाय कम था।

'इरावती को इस बार तुम मातृभूमि भेंट करना दास!

कहीं यह भी कच्ची-पक्की बात तो नहीं होगी?

अरे नहीं दास! और गोविन्दन ने प्रसंग बदलकर कहा कल

शाम जब हम एक मित्र से मिलने [illegible] में अँधेरा [illegible] तो तुम्हें डिब्बे में जैसे पूरा हिन्दुस्तान दिखाई दे [illegible] और तुमने [illegible] से पूछ लिया था—क्या ये सब लोग अँधेरी जा रहे हैं? और [illegible] हँसकर कहा था—और भी [illegible] स्टेशनों से लोग अँधेरी जा रहे होंगे। [illegible] सुमन कहा था—अब तो समय-समय पर [illegible] में [illegible] नज़र आया-जाया करेंगे।"

[illegible] ने आँखें नचाईं, "अँधेरी में इस मित्र के घर [illegible] तो तुमने बम्बई के कई रंग देख लिए थे।"

वह [illegible] [illegible] [illegible] वह [illegible] था। [illegible] की रही या बातों की [illegible] गलबहियाँ [illegible]।

नरीमान पॉइंट पर अँधेरा छा गया था पर [illegible] [illegible] का एक-एक पलट बिजली के प्रकाश से [illegible] रहा था। [illegible] पछवा बरसना में भी चल रहा होगा इस [illegible]!" [illegible] ने [illegible] के [illegible] में बाँह डालकर कहा, "अब [illegible]। '[illegible] [illegible]' [illegible] [illegible] है न?"

"अवश्य!" गोविन्द हँस पड़ा, "मैं तो तुम्हारा [illegible] [illegible] देखने की बात। पर जब तुम [illegible] से मिल रहे हो। [illegible] [illegible] से सम होकर ही तुम्हें इस से मिलना चाहिए। तो अब [illegible] पेट-पूजा करें फिर [illegible] के टिकट लें।"

ऐड्रेस और एग्ज़िट ! गोविन्दन जल्दी जल्दी कह गया और फिर उसने इस बात की ज़रा भी परवाह न करते हुए कि शंखधरन उसकी बात समझ भी गया या नहीं दूर से एक कार का उस कोठी के अहाते में घुसते देखकर कहा लो वह आ गया !

शंखधरन ने केवल इतना ही देखा कि एक कार उस कोठी के अहाते में प्रवेश कर रही है। उसने दबे स्वर में पूछा वह कौन ?

'मेरा होने वाला फाइनान्सर मनोज सान्याल ! गोविन्दन ने खुशी से उछलकर कहा और वह शंखधरन को खींचकर कोठी में ले गया।

भीतर बहुत प्रकाश था—हाई सोसाइटी का चमत्कारमय सौन्दर्य इन्द्र का अखाड़ा।

इरावती ने दूर से गोविन्दन को देखा तो वह लपककर उसके पास आ गई।

'सिमकयूज़ माई लेट एराइवल !

चलो लेट हो सही आ तो गए ! इरावती मुस्कराई।

ये हैं गुरुदेव कृष्णम् के शिष्य भगीनाचार्य शंखधरन। उसने परिचय कराया 'यह आपके लिए एक भेंट लाये हैं।

शंख ने वह डिब्बा इरावती के हाथ में दे दिया।

इसमें क्या है ?

उत्तर में शंख केवल मुस्करा दिया।

खोलकर देखिए न ! गोविन्दन ने हँसकर कहा डु यू माई डैल्फ यू ? उसने डिब्बा ले लिया और उसमें से चमचमाती मूर्ति निकाल कर इरावती के हाथ में थमा दी।

'पुञ्जिया ! इरावती मुस्कान बिखेरती हुई बोली किसने बनाई यह मूर्ति शंखधरनजी ?

शंख दोबारा मुस्कराया और मुँह से कुछ न बोला।

तीन-चार युवक और एक अधेड़ आयु का व्यक्ति आकर इरावती के पास खड़े हो गए और मुग्ध दृष्टि से इस मूर्ति की ओर देखने लगे।

'आप हैं श्री मनोज सान्याल!' गोविन्दन ने परिचय कराया।

नलधरन ने हाथ जोड़ लिए। मुँह से कुछ न बोला, खड़ा मुस्कराता रहा। अब वह मूर्ति सान्याल के हाथ में थी। उसने कहा, 'नलधरनजी, क्या इरा के मन में माँ बनने की भावना जगाने के लिए ही यह मूर्ति चुनी?'

सान्याल के व्यंग्य का इरा ने कोई उत्तर न दिया।

इरा को मूर्ति देते हुए सान्याल खिलखिलाकर हँस पड़ा, 'आगे हो चाहे पीछे, माँ बने बिना स्त्री का छुटकारा नहीं।'

'कुछ आप भी कहिए न नलधरनजी!' इरा ने आग्रह किया।

'मैं अचानक ही संगीताचार्य बन गया जब कि हमारे परिवार की परम्परा के अनुसार तो मुझे मूर्तिकार ही बनना चाहिए था। यह मूर्ति मेरे पिताजी की कलाकृति है।'

बैरे बड़ी-बड़ी प्लेटों में काजू, किशमिश और बादाम की गिरियाँ लिए घूम रहे थे। किसी के पास चाय और ऑरेंज था।

'आप क्या लेंगे नलधरनजी?' इरावती मुस्कराई और फिर उसने खुद ही फैसला किया, 'काफी लेंगे आप! अच्छा काफी मँगवाती हूँ।'

'हमारे लिए काफी उधर भिजवा दीजिए—उस कोने में!' यह कहते हुए गोविन्दन नलधरन को एक कोने की तरफ ले गया।

पार्टी कोठी के सामने हरे लॉन में हो रही थी। कनातें तानकर सुन्दर मण्डप प्रस्तुत किया गया था। मण्डप में मंच और स्टेज बनाई गई थी।

कॉफी आई तो साथ में काजू की प्लेट भी थी।

सहसा रंगभूमि के पर्दे के पीछे से घुँघरुओं की आवाज उठती हुई आई। नीनू नाच रही थी। नीनू को देखकर दोनों मित्र चकित रह गए। गोविन्दन बोला, 'लगता है नीनू हमसे भी पहले आई।'

नीनू नाच रही थी जैसे लोक-कथा की राजकुमारी सौ साल की नींद से जाग उठी हो। जब वह रंगमंच पर नाचते-नाचते बैठ जाती और दोनों हाथ ऊपर उठाकर उँगलियाँ मिलाती-फैलाती तो लगता,

थमन फिर रहा है।

नीलू या नाच रही थी जस किसी नदी को पहली बार पहाड़ों ने रास्ता दे दिया हो। घुंघरू यों बज रहे थे जस नदी का रास्ता प्रारम्भ विश्वास और भरोसे की डगर बन गया हो।

जानते हो इरावती ने मुझे बताया था उसकी माँ बिलकुल नहीं चाहती कि वह ऐक्ट्रेस बने क्योंकि ऐक्ट्रेस बनने के लिए तो उसकी माँ ने बड़ी लड़की को पहले ही तयार कर रखा था। और फिर बड़ी बहन मर गई! कहते-कहते गोबिन्द रुक गया।

ओह! कसे मर गई?

बस मर गई, जसे हर कोई मरता है।

तो फिर इरावती ऐक्ट्रेस कसे बन गई?

यह मत पूछो दाख! खर छोड़ो नीलू का नाच देखो।

नीलू नाच रही थी—नीली-पीली हरी रोशनियों की किन्नरी! पिछले पर्दे पर बादलों के घिर आने का दृश्य प्रस्तुत किया गया। फिर बहुत सी लड़कियाँ एक साथ आई। वे सब इन्द्र-पूजा नृत्य कर रही थीं। उनमें इरावती भी थी और वह बिलकुल अलग नजर आ रही थी। उसके घूँघट का अन्दाज दूसरी लड़कियों से बिलकुल अलग था। मंच के एक ओर गायक और वाद्य बैठे गीत का स्वर उभार रहे थ।

गोबिन्द ने नाच का कन्धा झँझोड़कर कहा 'देख रहे हो न! इरावती सबसे अलग नजर आ रही है न! उसकी आँखों में सचाई का काजल चमक रहा है। उसकी भवों की तीखी रेखाएँ अपनी पवित्रता की कथा सुना रही हैं। ऐसा प्रतीत होता है स्वयं धरती नाच रही है धरती की आत्मा नाच रही है।

रोशनियाँ बदलती गई—रंग बिरंगी रोशनियाँ। फिर कुछ छोकरे आए—गाँव के छोकरे। राजस्थान की तरफ का लिबास प्रतीत होता था। लड़कियाँ एक तरफ को भाग गई और वे फिर आ निकलीं। एक-एक लड़के के साथ एक-एक लड़की मानो राधा और कन्हैया की जोड़ी बनी

नाच रहा थी। एक विशेष ताल था जिस पर इन्द्र-पूजा नृत्य हो रहा था और इरा अलग नजर आ रही थी।

सात वृक्षों की टहनियाँ लाई गई सात प्रकार का अन्न लाया गया और अब गाँव की छोकरियाँ इन्द्र-पूजा नृत्य की चरम सीमा प्रदर्शित कर रहा थीं। इरावती की देह-लता मानो किसी वृक्ष की टहनी के सदृश ही झुक झुक जाती थी। उसकी आँखें पहले से बडी प्रतीत हो रही थीं, उनमें काजल के डोरे जैसे मुँह से बोल रहे थे मानो वह स्वयं धरती हो—हरीतिमा की प्रतीक। तभी तो उसने हरे वस्त्र पहन रखे थे।

फिर सहसा नाच बन्द हो गया। रंगभूमि पर पर्दा गिर गया।

अब उत्सव स्थल की पार्टी के अतिथि एक एक करके जा रहे थे। इरावती सबको विदा दे रही थी।

जब सब अतिथि चले गए, तो इरावती नीलू के साथ उस अंधेरे कोने में बैठे गोविन्दन और रामचरन के पास आकर बोली "मैं काफ़ी का ऑर्डर देकर आई हूँ। काजू की प्लेट भी आ रही है। मैं तो कुछ भी खा-पी नहीं सकी अब तक।"

नीलू बोली "बम्बई में तुम्हारा संगीत चमकेगा।"

नीलू और इरा प्रसन्न मुद्रा में बैठी थीं। इरा हरे वस्त्रों में सज रही थी। उसके अपार सौन्दर्य पर राम मुग्ध हो गया।

राम की आँखें उसी पर गड़ी थीं। वह लजा गई। गोविन्दन ने इस स्थिति पर व्यंग्य-सा कसते हुए कहा "बालज़ाक ने एक स्थल पर कहा है संसार में सबसे सुन्दर तीन चीजें हैं—खुली पाल वाला जलयान, सरपट दौड़ता घोड़ा और नाचती हुई नारी।"

नीलू हँस पड़ी "यह मेरे नृत्य की प्रशंसा है या इरा का भाव मुग्ध की!"

राम इस हँसी में भी गम्भीर रहा।

इरा बोली "आपको कैसा लगा मेरा नृत्य रामचरनजी?"



तीन

सामने वाले फ्लैट की बुढ़िया पड़ोसिन का मधुर व्यवहार न मिला होता तो घबराकर वहाँ से भाग निकला होता। तब वह वरकला पहुँचकर ही दम लेता। कभी वह मराठी कहावत का हवाला देती— देवा ची करनी आणि नारियळ पाणी! [देवता का प्रताप है कि नारियल के भीतर जल पैदा होता है।] संसार में लोगों को वैसे ही रहना चाहिए—नारियल के दूध के समान! कभी वह हँसकर कहती— 'भज कलदारम् भज कलदारम् भज कलदारम् मूढ़मते! [कलदार को भज ले, कलदार को भज ले, कलदार को भज ले मूढ़ मति!] 'शंकराचार्य यहाँ बम्बई में आ जाते बेटा, तो वे कभी यह न कहते— भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् भज गोविन्दम् मूढ़मते! बुढ़िया पड़ोसिन हाथ हिलाकर, आँखें नचाकर कहती, 'बम्बई में तो चाँदी के रुपये का राज है। कलदार चाहिए कलदार, जैसे भी मिले। कलदार बिना बम्बई बेकार है। यहाँ कलदार का ब्याह होता है, कलदार ही बच्चे-कच्चे पैदा करता है। कलदार ही बम्बई का जहाज है।

गोविन्दन भी बुढ़िया पड़ोसिन के स्वर में स्वर मिलाता, यह बात भी तो सुनाओ न माँ! कहीं—जेब में कलदार हो, तो बम्बई का मवाली भी सेठ जी बोलो बोलता है—हम बड़ गली लग बाजार का रास्ता किधर?

सो तो ठीक ही है बेटा! झूठ बात नहीं।" माँ दोनों हाथ

आकाश की ओर उठाकर मानो बम्बई के देवताओं का ध्यान धरती हुई कहती "कलदार न हो जेब में तो बम्बई रोनी सूरत बनाकर कहती है—दूल्हा-दुलहन सावधान घर में नहीं एक पायली धान।"

दास विचित्र वीणा पर अभ्यास करने लगता, तो कमरे से निकल कर अहल्या की माँ कहती "तेरे कण्ठ में तो सरस्वती विराजमान है दास! तेरी गाँठ में लक्ष्मी का निवास होकर रहेगा। फिर तो ठनठना ठन चले आयेंगे कलदार-ही-कलदार!"

गोविन्दन कहता "बम्बई का यह मौसम भी कितना विचित्र है! धूप निकलती है तो पूरी तरह खुलकर। और फिर ऐसा भी होता है कि घर से निकले आधा घण्टा भी नहीं हुआ कि रास्ते में ही वर्षा घेर लेती है।"

खिड़की में खड़े होकर वे बाहर की ओर देखते तो सामने से उठती हुई घटा ऐसी लगती जैसे किसी ने आकाश पर गोट लगा दी हो। जब मूसलाधार वर्षा होने लगती तो इस गोट का कहीं पता भी न चलता।

"बम्बई के बादल तो हाथियों की तरह हैं!" अहल्या की माँ ने एक दिन सवेरे-सवेरे ज्ञान बघारा "अपनी अपनी सूँड में सागर का पानी भरकर उँडेल डालते हैं ये हाथी!" और वह खिड़की से सागर की ओर देखती रह गई।

"यह उपमा तो सचाई से परे है माँ!" गोविन्दन ने हँसकर कहा "मैं जानता हूँ। मैं केरल का रहने वाला हूँ जहाँ सागर भी है और जंगल भी जिसमें हाथी झुंड बाँधकर विचरते हैं। सागर के किनारे आना तो दूर रहा, हाथी तो सागर की आवाज़ से भी वैसे ही डरता है जैसे आग से!"

दास ने अपनी ही हाँकी "तुम्हें याद है गोविन्दन! जब हम बच्चे थे तो बादलों की गरज सुनकर यही सोचा करते थे कि बादल अपने घरों में चक्कियाँ पीस रहे हैं।"

"बादलों की आवाज़ तो आज भी वैसी है!" अहल्या की माँ कह

उठी, "हम ही अब बच्चे नहीं रहे। अभी एक महीना और रहेगा वर्षा का ज़ोर बम्बई में। फिर आयेगी नारियल पूर्णिमा! सुन बेटा गोविन्दन! और तुम भी सुनो, बेटा दास! नारियल पूर्णिमा को मेरे संग मन्दिर चलना।

"ये मन्दिर हम नहीं छोड़ेंगे!" गोविन्दन ने विचित्र-सा मुँह बना कर कहा। "वरकला में तो एक जनार्दन स्वामी का ही मन्दिर था, यहाँ बम्बई में तो मन्दिरों की गिनती करना कठिन है।

"ये नास्तिकों जैसी बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं बेटा! तुम मत जाना। मैं दास को तो ले जाऊँगी अपने साथ मन्दिर में देव-दर्शन कराने! मन्दिर में देव-दर्शन करके हम सागर-पूजा को चलेंगे।

"सागर-पूजा में क्या होता है?" दासचरन की उत्सुकता सजग हो उठी।

माँ को जैसे श्रोता मिल गया हो। गोविन्दन खेल कर रहा था। दासचरन खिड़की में खड़ा था। माँ ने पास आकर सागर-पूजा का चित्र उभारा, "बड़े आराम से फूलों की दोन में रखकर अपना नारियल सागर की लहरों पर छोड़ते हैं बेटा!" माँ ने आँखें नचाकर कहा।

"लहरों पर फूल और नारियल डोलते-तरते होंगे!" दास ने रस विभोर होकर कहा, "जैसे वीणा के तारों पर किसी रागिनी के स्वर डोलते-तरते हैं।"

माँ ने नारियल-पूर्णिमा के दृश्य में थोड़ा और रंग भर दिया, "सागर के किनारे खड़े मछुवे भी वह नारियल चढ़ाकर याद कर लेते हैं।"

गोविन्दन बैठा खेल बनाता रहा। वह जानता था कि सावन की पूर्णिमा नारियल-पूर्णिमा के नाम से मनाई जाती है। यह त्योहार वर्षा समाप्ति का प्रतीक था। उस दिन से मछुवों के लिए अच्छा मौसम आरम्भ होता था। उस दिन से सागर-तट के साथ-साथ चलने वाली स्टीमर सर्विस, जो वर्षा के कारण रुक जाती थी, फिर से आरम्भ हो

पानी। सेव करते-करते गोविन्दन बोला "बहुत से लोगों का विचार है कि प्रारम्भ में नारियल-पूर्णिमा मछुवों का त्योहार था। प्राचीन काल में तो सागर-पूजा करते समय बड़े-बड़े सौदागर नारियल पर सोना मढ़वाकर भेंट दिया करते थे और वह मछुवा भाग्यवान होता था, जिसके हाथ पड़ जाता था यह स्वर्ण-मण्डित नारियल।

"अब तो वैसे धनी मानो नहीं रहे बेटा!" माँ ने ठण्डी साँस भर कर कहा।

गोविन्दन बोला तुम्हें यह मालूम नहीं होगा माँ कि नारियल पूर्णिमा के दिन ही पड़ता है रक्षा-बन्धन!

इतने में अहल्या भी चली आई "मैं तो इस बार अपने भैया को भी राखी बाँधूँगी।

"एक कलदार से ज्यादा नहीं मिलेगा। गोविन्दन हँस पड़ा, "मजा तो यह है कि नारियल-पूर्णिमा में नारियल डालकर बनाया हुआ भात भी खिलाना पड़ेगा।

'वह तो चाहे आज भी खा लो। माँ के मुख की झुर्रियाँ भी मानो मुस्करा उठीं और ठण्डी साँस भरकर बोली 'मँहगाई तो पहले से भी बढ़ गई, बेटा! टैक्स भी तो घटने के स्थान पर उलटा बढ़ रहे हैं।

इसमें क्या मन्दिर का देवता कुछ नहीं बोल सकता माँ? गोविन्दन हँस पड़ा देवता कहाँ हैं? वे तो सब सागर में डूब गए जैसे स्टीमर डूब जाते हैं तूफान आने पर!

नारियल-पूर्णिमा से चलते-चलते बात मँहगाई तक आ पहुँचेगी यह तो कोई नहीं जानता था।

अहल्या को एक काम बताकर माँ ने कमरे में भेज दिया और हाथ उठाकर बोली 'हे भगवान्, वह दिन जल्दी लाओ जब अहल्या की डोली उठे और गाजे-बाजे के साथ मुलवट पर नारियल तोड़ा जाए।

अच्छा तो अब समझा उस गीत का क्या भाव है जो अहल्या गाया करती है! गोविन्दन ने गम्भीर होकर कहा 'वही गीत—लहर

में आनन्द से रहती है कन्या ससुराल जाने लगती है तो नारियल टूट जाता है।

गीत में नारियल के टूटने से लड़की के रोने का भाव है बेटा ! माँ ने खड़े-खड़े बाँहे फैलाकर कहा 'इस मँहगाई में अहल्या का विवाह कैसे हो ? पुण्य की जड़ हरी होगी। वह शुभ दिन आयेगा जब अहल्या की डोली उठेगी और रास्ते रास्ते हर नुक्कड़ पर नारियल तोड़ा जायगा इससे भूत प्रेत का भय जाता रहता है।

सहसा बादल घिर आए। एक-दो बार बादल गरजा तो माँ ने कहा ऊपर वाली बुढ़िया चने की दाल दल रही है।

गोविन्दन को हँसी आ गई 'यह क्यों नहीं कहती माँ कि भगवान् चने चबा रहा है या हमारे साथ भगवान् भी हँस रहा है। और फिर उसने दास की ओर आँखें नचाकर कहा चने की दाल दलते हैं तो भरड भरड की आवाज निकलती है। ऊपर वाली बुढ़िया के रूप में चने की दाल दलती बादलों की माँ की कल्पना भी उतनी ही अटपटी है जितनी हमारी उपमा कि बादल चटाइयाँ घसीट रहे हैं।

बाहर मूसलाधार वर्षा आरम्भ हो गई। बीच-बीच मे बिजली चमक जाती।

माँ बोली अब तो तुम लोग दिन भर के लिए यहीं कैद हो गए समझो।

दास के मुख पर चिन्ता की रेखाएं दिखाई दीं। वह यही सोच रहा था—मैं टूयूशन करने कैसे जाऊंगा ?

इतने में अहल्या ने पास आकर कहा 'गोविन्दन भया मेरा एक काम नहीं करेंगे ?

ऐसा भी क्या काम है ?

'मेरी सहेली है प्रभाती वह एक्स्ट्रा नहीं बनना चाहती। आप उसे एक्ट्रेस बनवा दें।



चार

मालाबार हिल पर रहते थे नटवर देसाई, जिनकी सुपुत्री उर्वशी का विवाह जयन्त रावल के साथ हुआ था। पर अपने पति की अनुपस्थिति में उर्वशी अपने पिता के घर पर ही रहती थी। सागर के किनारे थी यह कोठी।

उर्वशी की ट्यूशन गोविन्दन ने इरावती से कहकर दिलाई थी। दासधरन को उसने समझा दिया था कि इस प्रकार की लड़कियाँ संगीत में वैसे ही रुचि रखती हैं, जैसे लिपस्टिक लगाती हैं। बस कुछ राग रागिनियों के नाम आ जायँ, एक-आध राग का आलाप सुना सकें वैसे ही जैसे अपने ड्राइंगरूम के पर्दों का रंग दिखाती हैं और अपने टेस्ट की डींग मारती हैं। 'यमुना सुलोचना और इला—ऐसी-ऐसी कई लड़कियाँ लम्बी क्यू में खड़ी हो रही हैं! उसने हँसकर कहा था पर सवाल तो यह है अधिक-से अधिक कलदार कौन देती है! अभी तुम उर्वशी को संगीत सिखाना आरम्भ करो। संगीत तो वह क्या सीखेगी आगे चलकर तुम्हारे संगीत की पट्रन अवश्य सिद्ध हो सकती है।

उर्वशी ने दासधरन के सम्मुख पहले ही दिन अपने व्यक्तित्व का पूरा परिचय दे डाला मेरी कल्पना में सहगल आज भी जीवित है। लोग कहते हैं अधिक मदिरा-पान के कारण उसकी मृत्यु हुई मैं कहती हूँ सहगल के अन्दर जो आग थी वह उसी में जल मरा। हाँ उसका संगीत नहीं मरा कभी मर भी नहीं सकता।

इसके उत्तर में दासपरन ने उदास-सा मुँह बना लिया।

उसने एक अल्बम में बहुत से फिल्म-स्टारों और दूसरे कलाकारों के फोटो लगा रखे थे। सहगल के चित्र के नीचे उसने ये शब्द लिखकर अपनी सूझ-बूझ का परिचय देने का प्रयत्न किया था

Time goes you say? Ah no
Alas time stays, we go!
[तुम कहते हो
समय बीत जाता है
पर नहीं
अफसोस, कि बीत जाते हैं हम
समय नहीं।]

फिर उसने अपनी डायरी से एक नीग्रो गीत का रूपांतर पढ़कर सुनाया

यदि तुमसे कोई पूछे—
कि यह गीत किसने बनाया?
केवल इतना कहना—
कि वह एक काला किसान था।
दुःख के नीले रंग में रंगा
और उसका कोई घर नहीं था
उसका कोई घर नहीं था!

डायरी में सामने वाले पन्ने पर फ्रांस के एक लोकगीत का उल्लेख था

न कोई नदी है बिना मछलियों के!
न कोई पहाड़ बिना घाटियों के!
न कोई बसन्त बिना नीलोफरों के!
न कोई प्रेमी बिना प्रेयसी के!

इन्हें देखकर दासपरन मुस्कराकर रह गया और फिर उसने आँखें

पर यह मुस्कान मानो एक प्रश्न चिह्न बन गई ।

अब तक कौन-कौनसा राग सीखा है ?

विशेष नहीं ।'

तो कैसे पता जाय ?

'जैसी भी आपकी राय हो । दो-तीन महीने का समय खाली है मेरे पास । इसमें एक आध चीज तो सीख ही जाऊँगी ।'

'फिर ?

फिर जैसी जयन्तजी की राय होगी । और सुनिए, वे आते ही एक पिक्चर बनायेंगे । कहानी मैंने लिखी है । हालीवुड गए हुए हैं जयन्तजी सात महीने से । वे डाइरेक्शन और प्रोडक्शन का अनुभव लेकर आ रहे हैं । इरावती हीरोइन होगी ।

और हीरो ?'

'देखें किसके सिर पर यह सेहरा रखा जाता है ?

कहानी क्या है ?

बम्बई के लाखों बेघर लोगों की कहानी समर्पित जो न जाने कब से पटरी पर रात गुजारते आ रहे हैं ।

इतने में नौकर चाय ले आया । साथ में केक-पेस्ट्री और मिठाई थी ।

बालकनी से सागर का दृश्य बहुत सुंदर था ।

ऐसा घर तो हर किसी को नहीं मिल सकता । रामचरन ने प्रसंगवश कहा, पटरी पर सोने वाले तो पहले खोली मिलने का सपना ही देख सकते हैं । खोली भी मिल जाय तो समझो बम्बई दयालु है !

ऐसा में रहने वालों की क्या-क्या प्रॉब्लम्स हैं वे भी इस पिक्चर में दिखाई जायेंगी ।'

रामचरन ने कुछ कहना चाहा, तो उसकी ने मुस्कराकर कहा, पहले चाय पीजिए फिर मैं आपकी बातें सुनूँगी । लीजिए, ये रस गुल्ला चखिए ।

रामचरन ने ठण्डी साँस लेकर कहा हमारे ग्राम के लोगों को बहुत

कष्ट हैं।

इसीलिए तो यह पिक्चर बनाई जा रही है।

पिक्चर का नाम क्या होगा?'

'विष मन्थन!'

शरतचन्द्र ने बड़े ध्यान से उर्वशी की ओर देखा, अमृत-मन्थन तो सुना था यह विष मन्थन क्या हुआ?

न सागर मन्थन कहने से बात बनती है न अमृत-मन्थन से! कहते-कहते उर्वशी हँस पड़ी और कहानी पर अभी मैं काम कर रही हूँ। सागर के साथ मेरा सम्बन्ध कोई नया नहीं है। गोविन्दन बाबू बता रहे थे आप लोगों का जन्म भी सागर के किनारे हुआ! तब तो इस कहानी को आप पूरी तरह समझ सकेंगे और इसमें आवश्यक सुझाव भी देंगे। आप ही सोचिए, बम्बई के बेघर लोगों के लिए सागर से अमृत निकला या विष? कहते हैं सारा विष अकेले महेश पी गए थे। पर इसकी सचाई तो उनसे पूछिए जिन्हें आज भी विष पीना पड़ रहा है। ये लोग इस विष के कारण पल-पल मृत्यु की ओर जा रहे हैं। अच्छे घर नहीं मिलेंगे इन लोगों को तो एक ही बात होगी कहते कहते उर्वशी हँस पड़ी फिर तो ये लोग हमारी कोठियाँ छीन लेंगे! खैर छोड़िये। अपनी कहानी की कहाँ तक प्रशंसा करूँ!

बेघर लोगों की कहानी की हीरोइन के लिए तो कोई बेघरी ही हीरोइन चाहिए थी।

पर पिक्चर को बॉक्स ऑफिस में सफलता तो किसी हीरोइन से नहा मिल सकती। और देखिए, संगीत आप दीजिए! पर ध्यान रखिए, बेघर लोगों की कहानी में धूम-धड़ाका वाला संगीत तो नहीं चलेगा।

शरतचन्द्र ने बलपूर्वक कहा 'हीरो का चुनाव भी हीरोइन जैसा न कीजिए। मैं तो कहूँगा, सचाई और अनुभव के मेल से ही बनाइए यह पिक्चर। बाकी रहा संगीत। हम देखेंगे आप लोगों की आवश्यकता को समझेंगे। फिर सोचेंगे क्या होना चाहिए और क्या नहीं!



पाँच

"तुम हो संगीतकार, मैं हूँ कलाकार! हम दोनों मिले रहें तो एक दिन बम्बई हमारा पानी भरेगी! हमारे गुरु ने तो एक ही बात सिखाई है— यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्। [जब तक जीओ सुखपूर्वक जीओ, ऋण लेकर भी घी पीओ।]" गोविन्द हँसते-हँसते दोहरा हो गया, "आज डालडा मिलता है, तो कल असली घी मिलेगा।"

"मैं समझ गया।" शामचरन मौन न रह सका, "तुम्हारी जेब गरम है। तुम्हारी बम्बई तुम्हारे लिए शुभ हो। मुझे जाने दो।"

"तुम नहीं जा सकते।" गोविन्द ने मेज पर मुक्का मारकर कहा, "यह गोविन्द का हुक्म है। आत्मा के बच्चे बनो। जो मिलता है उसे मत छोड़ो।"

"मेरा दिल तो यही कहता है कि मुझे कलकत्ता लौट जाना चाहिए।" शामचरन ने दृढ़तापूर्वक कहा।

"तुम हो संगीतकार, मैं हूँ कलाकार।" गोविन्द ने आँखें नचाकर कहा, "तुम यहीं रहोगे बम्बई में।"

शामचरन सोचने लगा—एक लड़की है इरावती, एक लड़की है उर्वशी, एक लड़की है अहल्या। एक लड़का है गोविन्द, एक लड़का है बसन्त, जो हॉलीवुड से अपनी उर्वशी को चिट्ठियाँ लिखता है। चाय की चुस्की भरते-भरते अपनी कल्पना में इन सबकी रूपरेखा उभर आई।

नष्ट है।

'इसीलिए तो यह पिक्चर बनाई जा रही है।'

पिक्चर का नाम क्या होगा?

विष-मन्थन!

रासधरन ने बड़े ध्यान से उर्वशी की ओर देखा 'अमृत-मन्थन तो सुना था यह विष मन्थन क्या हुआ?

'न सागर मन्थन कहने से बात बनती है न अमृत-मन्थन से!' कहते-कहते उर्वशी हँस पड़ी सर कहानी पर अभी मैं काम कर रही हूँ। सागर के साथ मेरा सम्बन्ध कोई नया नहीं है। गोविन्दन बाबू बता रहे थे आप लोगों का जन्म भी सागर के किनारे हुआ! तब तो इस कहानी को आप पूरी तरह समझ सकेंगे और इसमें आवश्यक सुझाव भी देंगे। आप ही सोचिए, बम्बई के बेघर लोगों के लिए सागर से अमृत निकला या विष? कहते हैं सारा विष अकेले महेश पी गए थे। पर इसकी सचाई तो उनसे पूछिए जिन्हें आज भी विष पीना पड़ रहा है। ये लोग इस विष के कारण पल पल मृत्यु की ओर जा रहे हैं। अच्छे घर नहीं मिलेंगे इन लोगों को तो एक ही बात होगी कहते कहते उर्वशी हँस पड़ी फिर तो ये लोग हमारी कोठियाँ छीन लेंगे! खैर छोड़िये। अपनी कहानी की कहाँ तक प्रशंसा करूँ!

बेघर लोगों की कहानी की हीरोइन के लिए तो कोई वैसी ही हीरोइन चाहिए थी।

पर पिक्चर को बॉक्स ऑफिस में सफलता तो वैसी हीरोइन से नहीं मिल सकती। और देखिए, संगीत आप दीजिए! पर ध्यान रखिए, बेघर लोगों की कहानी में प्रपंच वाला संगीत तो नहीं चलेगा।

रासधरन ने बलपूर्वक कहा 'हीरो का चुनाव भी हीरोइन जैसा न कीजिए। मैं तो कहूँगा, सचाई और अनुभव के मेल से ही बनाइए यह पिक्चर। बाकी रहा संगीत। हम देखेंगे आप लोगों की आवश्यकता को समझेंगे। फिर सोचेंगे क्या होना चाहिए और क्या नहीं!



पाँच

"तुम हो मगोतवार, मैं हूँ मयतार! हम दोनों मिले रहे तो एक दिन बम्बई हमारा पानी भरेगी! हमारे गुरु ने तो एक ही बात सिखाई है—'यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।' [जब तक जीओ सुखपूर्वक जीओ, कर्ज लेकर भी घी पीओ।] गोविन्द हँसते-हँसते दोहरा हो गया। [illegible] आज डालडा मिलता है तो कल असली भी मिलेगा।

'मैं समझ गया।' रामचरन मौन न रह सका। 'तुम्हारी जेब गरम है। तुम्हारी बम्बई तुम्हारे लिए तुम हो, मुझे जाने दो।'

'तुम नहीं जा सकते।' गोविन्द ने मेज पर मुक्का मारकर कहा, "यह गोविन्द का हुक्म है। आदमी के बच्चे बनो। जो मिलता है उसे मत छोड़ो।

मेरा दिल तो यही कहता है कि मुझे वापस लौट जाना चाहिए!" रामचरन ने दृढ़तापूर्वक कहा।

'तुम हो मगोतवार मैं हूँ मयतार।' गोविन्द ने आँखें नचाकर कहा 'तुम यहीं रहोगे बम्बई में।'

रामचरन सोचने लगा—एक लड़का है दयावता, एक लड़की है उसकी एक लड़की है महम्मा। एक लड़का है गोविन्द एक लड़का है बसन्त जो हातापुर से अपनी उसकी को चिट्ठियाँ लिखता है। बाप का मुझे मरते मरते अपना कल्पना में इन सबकी रेखाएँ उभर आईं।

उस लगा उसकी विचित्र वीणा के तार परस्पर उलझकर एक ऐसा संगीत प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें सब-कुछ होते हुए भी कम-से-कम गुरुदेव का सन्देश तो नहीं है।

गोविन्दन ने नौकर को आवाज़ दी 'यह चाय तो ठण्डी हो गई। और चाय लाओ गरम-गरम।'

सब का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए गोविन्दन ने कहा फिल्म के लिए कहानी लिखना उतना कठिन नहीं जितना इसे बेचना। जानते हो फिल्म में कहानी कैसे बेची जाती है। कहानी-लेखक कहानी सुनाने बैठता है तो खिड़कियाँ ही नहीं रोशनदान तक बन्द करा लेता है ताकि कहानी की हवा भी बाहर न निकल सके। वह कहानी सुनाते सुनाते कई बार पानी पीता है। कई बार छाती पर दोहत्थड़ मारता है। कई बार गिरता है कई बार उठता है। कई बार मरता है कई बार ज़िन्दा हो जाता है। डाइरेक्टर और प्रोड्यूसर आँखों-ही-आँखों बीच बीच में इन लोगों ने इशारों ही इशारों में और कहानी-लेखक बीच डालकर बातें करते हैं इशारों से ही उनकी पसन्द-नापसन्द का सुराग लगाने का यत्न करता है। फ़रहाद को जो नहर खोदने का काम सौंपा गया था वह फिर भी आसान था पर फिल्म में कहानी बेचना तो नहरें खोदने से भी कठिन है। और कहानी बेचने में चमचागीरी करने वालों का बहुत हाथ होता है।

गजवरन ने आश्चर्यपूर्वक पूछा 'चमचागीरी क्या हुई ?'

मस्का पालिश तो हुई चापलूसी। जो मस्का लगाता है उस भी मस्का कहेंगे। मस्का की ही एक क़िस्म है चमचा। हाँ तो कहानी के बिकने में सेठजी के चमचा का बहुत हाथ होता है। एक चमचा पास से कहता है—हाँ जी हिट जायगी, सेठजी ! भाड़ में गई कहानी की टैकनीक और करेक्ट्राइज़ेशन सेठ को तो कहानी के हिट जाने से मतलब रहता है। और सुनो चमचा कहानी-लेखक का भी हो सकता है। पर चमचे का कमाल यही है कि सेठ के चमचों के साथ मिलकर उसी

का चमचा बन जाय। खर मेरी कहानी कल बिक गई। सवा हज़ार मिला था। ऊपर के ढाई सौ चार चमचों को देने पड़े—दो चमचे सेठ के थे दो मेरे अपने।

नलधरन ने आश्चर्य से गोविन्दन की ओर देखा। वरकला में सागर-तट पर रेत के घरौंदे बनाकर अथवा मन्दिर के प्रांगण में बल्लौर की गोलियों से खेलते समय तो दासधरन ने कभी न सोचा था कि गोविन्दन बड़ा होकर हाथ की सफाई में इतना होशियार निकलेगा।

मैं हूं गोविन्दन अवतार! गोविन्दन ने गम्भीर होकर कहा, हमो मत। अवतार को भी बहुरूप भरने पड़ते हैं। अहल्या की माँ मुझसे खिची खिची-सी रहती है। कोई बात नहीं। अहल्या के लिए घर का बहुरूप भरने से मैंने इन्कार कर दिया। मैंने माँ से साफ-साफ कह दिया—अपने को यह सब नहीं होना माँ! ब्याह करना नहीं माँगता गोविन्दन अवतार! यह सुनकर माँ की आँखें ऊपर को चढ़ गई। अब मैं क्या कर सकता था?

सो तो ठीक है! दासधरन मुस्कराया।

जानते हो यह कहानी क्या थी जो सवा हज़ार में बिकी? एक स्कूल मास्टर है जिसे बहुत कम वेतन मिलता है। इसलिए वह ब्लैक बोर्ड पर देश का नक्शा बनाकर उस पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखता है—निधनता! और फिर वह लड़कों से कहता है—हमारे देश में इतनी रबड़ पैदा होती है पर लड़को यह सारी रबड़ भी इस बात के लिए काफी नहीं कि देश के नक्शे पर से बड़े-बड़े काले अक्षरों में लिखा हुआ यह शब्द निधनता मिटाया जा सके!

कहानी का आरम्भ तो बहुत अच्छा किया है।

आरम्भ का यह भाग सौ फ्री प्रतिशत मौलिक है। भाग की सारी कहानी एक हंगेरियन कहानी से उड़ाई हुई है। पर पैबन्द लगाया है पूरी होशियारी से। इस स्कूल मास्टर का घर का खर्च पूरा नहीं होता था। साथ ही उसे बहुत प्यास लगी थी। वह नौकरी छोड़कर घर से

निकल पड़ा। आवारा हो गया। इधर-उधर से हयफर करके पेट तो भर लेता पर दो चीजें उसका ध्यान खींचती रहती। एक तो ब्लैकबोर्ड पर बना देश का नक्शा और उस पर लिखा हुआ शब्द—निधनता। और दूसरे उसे प्यास लगी रहती। किसी ने एक शहर में उसे यह सलाह दी—हिमालय के एक झरने का पानी पी आओ। इसके लिए वह यात्रा पर गया। पर हिमालय के झरने का पानी पीकर भी प्यास न मिटी। फिर किसी ने कहा—मदिरा पीओ। उसने खूब मदिरा पी फिर भी प्यास न बुझी। किसी मवाली ने बम्बई में उसे यह सलाह दी—लहू पीओ! प्यासे स्कूल मास्टर ने किसी बचारे को मार डाला और उसका लहू पीकर प्यास बुझाने का यत्न किया। प्यास फिर भी न बुझी। वह पकड़ा गया। पर मैंने उसके पकड़ जाने से पहले उसकी रंगरेलियाँ खूब दिखाई हैं। उसकी प्यास कई गुना बढ़ती गई। एक दिन वह पकड़ा गया। मुकदमा चला। जब उसे फाँसी दी जाने वाली थी तो उससे उसकी अन्तिम इच्छा पूछी गई और उसने बताया—अब उसे वह बात याद आ गई है कि जब वह छोटा था—बहुत छोटा तो एक दिन वह माँ की छाती से लगा दूध पी रहा था और किसी ने उसे झटककर माँ की छाती से अलग कर दिया था! पहली शक्ल में उसकी प्यास माँ के दूध की प्यास थी। उसने माँ का ठिकाना बताया और माँ के दूध की चार बूँदें माँगी।

'तो क्या उसकी वह इच्छा पूरी की गई थी?'

'यह तुम उस समय देखोगे जब यह कहानी फिल्माई जाएगी।

तो चलो आज तुम्हें मुक्तिबोध से मिलाने ले चलूँ जो आत्मा के स्थान पर कबूतरों से प्रेम करते हैं।



छः

कबूतर की आँखों में झाँकते हुए मुक्तिबोध बोले, 'रात को आते-जाते मेरी आँख खुल जाती है तो मैं कबूतरों वाले कमरे में जा, मैं बिजली का बटन दबाकर देखता हूँ कि कबूतर सो रहे हैं या नहीं। कबूतर पंख फड़फड़ा उठते हैं। मैं सच कहता हूँ, मुझे आदमी उतने अच्छे नहीं लगते जितने कबूतर।'

"धन्य हो मामा मुक्तिबोध!" गोविन्द ने आँखें नचाते हुए कहा, "ये पवित्र कोई कबूतर तो सचमुच यही आदमी पाल सकता है जो पागल हो। कहें एक कबूतर दे दव।"

विचित्र शहर है बम्बई! धनपति का मौन न रह सका, जहाँ लाखों लोग रात को छत के नीचे नहीं सो सकते, पटरी पर बिस्तर लगाते हैं, वहीं हमारे मामा मुक्तिबोध के कबूतर अगर इन लोगों से अच्छे नहीं तो भाग्यशाली अवश्य हैं।

'मैं कबूतरों पर एक पुस्तक लिख रहा हूँ!' मुक्तिबोध ने गम्भीर होकर कहा, 'आज का जमाना विज्ञान का है। हमारी भाषा में हुनर देकर भी अच्छी पुस्तक नहीं लिखी जा सकती कबूतरों पर!' यह कहते वे मुस्कराए और उन्होंने एक संस्कृत श्लोक पढ़कर सुनाया, जिसमें कबूतर-कबूतरी के प्रेम को आदर्श बताया गया था। फिर वे हँसकर बोले, 'आप लोग जगर आर्टिस्ट को तो जानते होंगे?'

'कहीं गवैया वाला जगर?' गोविन्द मुस्कराया।

या कहिए शेखर मानी रूबी! मुक्तिबोध गम्भीर हो गए उनका प्रेम सच्चा प्रतीत होता है।'

उन पर आपका वरद हस्त है मामा! गोविन्दन मुस्कराया वे कमरे में हों तो उन्हें बुलवाइए ज़रा।

क्यों न वहीं चल चलें?

यहीं बुलवाइए! गोविन्दन ने हंसकर कहा 'वहां जाना तो ऐसे ही होगा जैसे आप रात को चुपके से बिजली का बटन दबाकर कबूतरों का हाल चाल देखने लगते हैं।

पता चला कि उनका कमरा बन्द है।

यह जो आपके सामने बैठे हैं मामा! गोविन्दन ने आंखें नचाकर कहा बहुत बड़े संगीतकार हैं! मालाबार से यहाँ आये हैं। पर पता नहीं आज भी फिल्मी दुनिया में डटे रहते हैं या नहीं।

वह भी क्या ज़माना था! मुक्तिबोध ने कबूतर को अपने हाथ से छोड़ते हुए कहा फिल्म द्वारा हमने अपने इतिहास को सँवारा निखारा। धार्मिक फिल्मों में हमने अपनी संस्कृति पेश की। सामाजिक फिल्मों में हमने जनता की राष्ट्रीय चेतना का प्रमाण दिया। वह भी क्या ज़माना था! मैंने एक्टर बनकर नाम कमाया पैसा कमाया। पर वैसे लोग नहीं रहे मैंने काम छोड़ दिया।

आपका संकेत न्यू थियेटर्स की ओर है। गोविन्दन मुस्कराया 'न्यू थियेटर्स की क्या बात थी मामा! एक-से-एक बढ़कर फिल्में बनाईं उन लोगों ने।

वही तो मैं कह रहा था। मुक्तिबोध ने उन्नत स्वर में कहा यहूदी की लड़की, देवदास 'मंज़िल' मुक्ति' और 'प्रेसिडेन्ट' जैसी फिल्में अब क्यों नहीं बनतीं कभी सोचा है आपने? विद्यापति चण्डीदास' और स्ट्रीट सिंगर जैसी फिल्में बनाने वाला न्यू थियेटर्स की कमर क्या टूट गई?

प्रभात पिक्चर्स को भी तो नहीं भुलाया जा सकता। गोविन्दन

ने यनपूर्वक कहा   अमर ज्योति पड़ोसी और आदमी जैसी फ़िल्में कोई शान्ताराम ही दे सकता था।

'उन सबमें कोई-न-कोई बात कही गई थी। वह भी क्या जमाना था! हर कदम पहले कदम से आगे जाता था। अब तो यह हाल है कि खास फिल्मों में कोई एक फिल्म अच्छी भी आ जाती है। यह नहीं कि पहले घटिया फिल्में बिलकुल नहीं बनती थीं पर अब तो बुरा हाल है। अब तो अच्छी फ़िल्में आटे में नमक के बराबर भी नहीं रह गईं।

एक बात यह भी तो है ! गोविन्दन ने पतरा बदलकर कहा जो जमाना बीत जाता है वह अच्छा लगने लगता है।

नहीं यह बात नहीं। मज़िल मुक्ति और आदमी जैसी फ़िल्में तब भी अच्छी मानी गई थीं जब वे बनी थीं। और अब तो हमारी फिल्म इण्डस्ट्री फिनान्सर के हाथ की कठपुतली बन गई है। सेठ कहता है—माली फिल्म ता अन्त आपी दो। [माली फिल्म का अन्त कर डालो।] और वहाँ कहानी को तोड़-मरोड़कर समाप्त कर लिया जाता है।

आपका मतलब है आज की फ़िल्मों में कहानी नाम की चीज़ भी होती है ? गोविन्दन ने अवसर देखकर पूछ लिया।

कबूतर ने अपनी जगह से उड़कर कमरे में दो-तीन चक्कर लगाए और मुक्तिबोध के हाथ पर आ बैठा।

गरणचरण मुस्कराया इस भी हमारी बातों में रस आ रहा है।

मुक्तिबोध कहने लग गए, पिछले सप्ताह की बात है एक सज्जन मुझे मिलने आये। नाम नहीं लूँगा। एक डाइरेक्टर प्रोड्यूसर हैं। बता रहे थे लाहौर में एक फिल्म बन रही थी। वह फिल्म मुश्किल से आधी ही तैयार हो पाई थी कि पंजाब गरम हो गया। बम्बई में आकर उन लोगों ने उस अधूरी फ़िल्म को पूरा करना चाहा। गाने लिखने के लिए एक शायर की सेवाएं प्राप्त की गईं। प्लेबैक के लिए मादाम नूरजहाँ को बुलाया गया। स्क्रीन पर एक बच्चे का गाना था। उसके लिए एक एक्स्ट्रा लड़की मिल गई। यह बेचारी एक सीन में

काम करने के कुल पच्चीस रुपये माँगती थी। डाइरेक्टर प्रोड्यूसर कंजूसी पर अड़ गए। बीस में सौदा तय हुआ। अब वह एक्स्ट्रा लड़की एकदम आर्टिस्ट एक्ट्रेस बन गई है। हाँ तो वह डाइरेक्टर प्रोड्यूसर सज्जन बता रहे थे—जब दूसरे डाइरेक्टरों की तरह वे भी एक दिन उस एक्ट्रेस के दरे-दौलत पर पहुँचे और एक पिक्चर के लिए मामले की बातचीत हुई तो वह बोली—पूरी पिक्चर में काम करने के पच्चीस हजार लूँगी। वह अपनी इस कीमत पर अटल रही और हमारे उन डाइरेक्टर प्रोड्यूसर को उसी रकम पर कान्ट्रैक्ट करना पड़ा। कहते कहते मुक्तिबोध ने कबूतर को उड़ा दिया जो कबूतरी के पास जाकर चोंच से चोंच लड़ाने लगा।

संगीत के सम्बन्ध में आपने कुछ नहीं कहा। गोविन्दन ने बढ़ावा दिया।

इस पर मुक्तिबोध खिलखिलाकर हँस पड़े और फिर सम्हलकर बोले 'हमारे डाइरेक्टर प्रोड्यूसर आजकल यह समझने लगे हैं कि मरदानी गई भाड़ में नाच और गानों के बल पर ही वे पब्लिक को उल्लू बना सकते हैं। और यही हो रहा है। मतलब यह कि 'रम्भा सम्भा' और 'जाज' को चुन-चुनकर ठूँसा जा रहा है फिल्मी संगीत के मैदान में! इस पर दासवरन को कोई आपत्ति न हो तो मैं भी अपने होंठ सी लेता हूँ!

दासवरन भी मौन न रह सका मैंने तो सुना है कि बम्बई में हर म्यूज़िक डाइरेक्टर ने टेप रिकार्डर ले रखा है रेडियो की मदद से वे विदेशी संगीत के नये-नये रिकार्ड टेप रिकार्डर पर चढ़ाकर अपने पास रखते रहते हैं। और फिर इन्हीं धुनों को तोड़-मरोड़कर हमारी फ़िल्मों के हवाले करते रहते हैं। क्या मैं कुछ झूठ कहता हूँ मामा?

बिलकुल सही बात है! मुक्तिबोध ने कहा 'तुम्हें काम मिले तो इस दोगले संगीत से बचना।



सात

सात पीढ़ियों का इतिहास था इरावती के पीछे। कई बार वह सोचती —सात पीढ़ियाँ कम तो नहीं होतीं! यह विचार उसे बल देता, रियाज़ करते और अभिनय करते समय उसकी कल्पना पांच की ओर मुड़ जाती। पांच पीढ़ियों की कहानी तो फिर भी जाना-सुनी बात था। पिछली दो पीढ़ियों की बात तो आंखों-देखी थी। दादी अम्मां को उसने देखा था। मां की छत्रछाया तो अभी तक बनी हुई थी।

उसकी मां किसी समय नगर की सबसे अच्छी गायिका थी। मां ने काम संभाला तो दादी अम्मां ने गाना छोड़ दिया था। अपने ज़माने में दादी अम्मां कितनी बड़ी गायिका रही थीं यह तो इसी बात से स्पष्ट था कि हैदराबाद के हुज़ूर नवाब साहब ने उन्हें गोलकुण्डा के किले के पास एक जागीर देने के अतिरिक्त बम्बई में मरीन ड्राइव की कोठी एक रात उनकी गायकी पर खुश होकर उन्हें भेंट कर दी थी। संगीत विद्या की साधना में [illegible]। मां ने भी तो कुछ कम कमाल न किया था। दादी अम्मां कहा करती थीं — सब मेहनत की बात है। रियाज़ चाहिए रियाज़! जैसे घोड़े को खिलाया जाता है वैसे ही गले को भी तैयार करना चाहिए। हर रोज़ रियाज़ करना होगा और दामन कलंक से बचाना होगा। दाग़ लगा नहीं कि बात गई।

दादी अम्मां खुश थीं कि बड़े-बड़े लोग उनकी कला की कद्र पर सोना बरसाते रहते हैं। बेटी ने पांच पीढ़ियों की लाज रख ली। मां के

दूध को दाग भी नहीं लगने दिया, कोई यह नहीं कह सकता कि बेटी किसी भी तरह माँ से पीछे रह गई—यह बात दादी अम्माँ को पुलकित करने के लिए काफी थी। दादी अम्माँ के पास कई डाइरेक्टर आ चुके थे, हर बार उन्होंने साफ इन्कार कर दिया। सिनेमा विनेमा के चक्कर में नहीं पड़ने दूँगी अपनी मना को ! आखिर ऐसी भी क्या मुसीबत पड़ी है कि नवाब और राजा रईस की मजलिस छोड़कर भड़वों के बीच ठिकाना तलाश किया जाय ! मेरे रहते तो यह नहीं होगा।

अब तो वह जमाना बहुत पीछे छूट गया था। कहाँ यह हाल था कि दादी अम्माँ ने माँ का फोटो तक खिंचवाने की मनाही कर रखी थी, कहाँ अब बम्बई की सुप्रसिद्ध गायिका मना की बेटी इरावती हर रोज परदे पर चाँद बनकर उगती है !

इरावती की कहानी काफी मनोरंजक थी। माँ ने तो बड़ी बेटी सुधा को ही सिनेमा के लिए तैयार किया था। सुधा के रहते इरा कभी सिनेमा के परदे पर न उतरती। सुधा के रियाज के सामने इरा का रियाज तो रुपये में चवन्नी भी न था। माँ तो कहा करती थी, मेरी इरा का ब्याह होगा, उसकी डोली उठेगी, वह सिनेमा विनेमा के चक्कर में नहीं पड़ेगी। सिनेमा के परदे पर दुनिया को फतह करने आई है सुधा !

सिनेमा के परदे पर उतरने से पहले ही सुधा चल बसी। माँ के दिल पर बड़ी चोट लगी। फिर उसकी नजर इरा पर पड़ी। इरा भी तो सुधा बन सकती है—उसने सोचा। झट फैसला हो गया। रियाज पर जोर दिया जाने लगा।

दादी अम्माँ की मृत्यु तो पहले ही हो चुकी थी। माँ ने गारकुण्डा वाली जागीर बेच दी थी। मरीन ड्राइव वाली यह कोठी पुरानी स्मृति बनी रह गई थी। माँ के हीरे-जवाहरात भरे पड़े [illegible]। बैंक बैलेंस इतना था कि आराम से गुजर हो सकती थी। पर संगीत तो सात पीढ़ियों की विरासत था। इसे कैसे छोड़ा जाता ! अब इरा बम्बई की प्रसिद्ध अभि

नेत्री थी। उसके पीछे लम्बी कहानी है उसका किसी को ध्यान नहीं। इरा पर फ़िल्म की छाप है फ़िल्म पर इरा की यह सभी मानते थे।

बालकनी में कुरसी से उठकर इरा टहलने लगी। सामने सागर का दृश्य उसका ध्यान खींच रहा था। अब वह दीवारगीर पर रखी माँ-बेटे की मूर्ति के सामने खड़ी थी। इस कलाकृति में उसे क्या नज़र आता है यह बताना तो उसके लिए कठिन था। हाँ उसका मन यह तो स्पष्ट शब्दों में कह सकता था कि कलाकार ने इस कृति में अभिनय नहीं दिखाया। माँ के मुख पर वही भाव था जो होना चाहिए; कहो भी माँ की भावनाओं का केन्द्र प्रतीत हो रहा था। इस मूर्ति को देखकर उसे दादी का याद आ गई।

वह कई फ़िल्मों में काम कर चुकी थी। अभिनय-कला में उसकी अपनी मार्केट थी। 'माँग का सिन्दूर' में उसके अभिनय की सबने मुक्त कण्ठ से सराहना की थी। एक प्रश्न उसके मन में सदा उठता रहता—क्या अभिनय ही सब-कुछ है?

दादी के शिष्टाचार व व्यक्तित्व से वह कुछ कम प्रभावित नहीं हुई थी। उसने अपने मन को समझाया—मेरे पीछे सात पीढ़ियाँ हैं पाँच कानों-सुनी दो आँखों-देखा। पाँच पीढ़ियों से संगीत चला आया है। ऐसा तो शायद ऐसा दावा नहीं कर सकता!

मूर्ति में माँ की ममता दिखाई गई है! उसने मन-ही-मन कहा—'माँग के सिन्दूर' में मैंने माँ का अभिनय किया है। मैं माँ नहीं हूँ तो क्या? अभिनय के लिए जो चाहिए वह मैंने दिया उसे मैंने छिपाकर नहीं रखा।

उसे याद आया अभी पिछले दिन गोविन्दन मिला था। वह बता रहा था कि 'माँग का सिन्दूर' फ़िल्म उसने दशाधरन को दिखाई है।



आठ

मीना-बाज़ार ही तो थी बम्बई की फ़िल्मी दुनिया जहाँ कम्पनियों के मालिक और फ़िनान्सर ही नहीं डाइरेक्टर और एक्टर भी चन्द्रमुखी अभिनेत्रियों के पीछे लट्टू हुए घूमते थे। सेट पर चन्द्रवदनी कोमलांगिनियों की अदाएँ भी मुड़ मुड़ मीना-बाज़ार की छवि अंकित कर जाती थीं।

कहानी चुनने का काम हो चाहे गीत पसन्द करने का 'रोल' बाँटने की बात हो चाहे वेतन या मज़दूरी देने का प्रसंग—कदम-कदम पर दलालों का दौर-दौरा था। कहानी-लेखक की हैसियत मुंशी से अधिक नहीं थी। इसलिए इस मीना-बाज़ार में थोड़ा-बहुत दम-खम रखने वाला कहानी-लेखक भी डाइरेक्टर बन जाने के चक्कर में था जिससे उसकी कहानी महँगे दामों बिके और पूरे रंग-ढंग से फ़िल्माई जा सके। संवाद-लेखक भी डाइरेक्टर बनने की चिन्ता में घुले जा रहे थे। 'रिहर्सल' में जहाँ-जहाँ प्रेम-संवाद आते लगता था सहारा में नख़्लिस्तान सामने आ गया। प्रेम-मुग्धाएँ छाप लगातीं। 'प्यारी' और 'प्रिय' में गहरा रंग छलकता।

कितने लोग इस मीना-बाज़ार में बर्बाद हुए इसका हिसाब कौन लगाये! जिनकी इस बाज़ार में जीत हुई उन्होंने ही तो इतिहास नहीं बनाया। जो हारे और मैदान छोड़ गए वे भी तो अपना अनुभव लिखाते गए। युद्ध के चिह्न हैं। घटिया-से-घटिया फ़िल्म बनाने की होड़ लग

रही है।

रिट्रिमन म मीना बाज़ार की दुकानें पीछे न रहतीं। घर या कॉलिज से सीधी यहाँ पहुँचने वाली हर युवती हीरोइन बनने का सपना लेकर पहुँचती कन्दार का नाम जपती जैसे हीरोइन बनना इतना ही सहज हो। सक्स अपील' म पूरी उतरने वाली कन्याओं की भी परख होती। उनकी दह के 'कव देखे जाते। डाइरेक्टर और कमरामन की आँखें उसकी रूपराशि को मानो धम-काँटे पर तोलती। उसे 'सेट' पर आने का सौभाग्य प्राप्त होता तो हजार हजार कण्डल के बल्ब के प्रकाश म उसकी देह की एक-एक कव को सिलोलाइड पर उतारा जाता। यही फ़िल्म का दस्तूर है!

इरा से कुछ भी छिपा तो न था। वह भी मीना-बाज़ार की रानी। जिन चित्रों में वह काम कर चुकी थी उनम से कई बाक्स आफ़िस हिट' हो चुके थे। माँग का सिन्दूर' म उसका काम सभी ने पसन्द किया था।

माँग का सिन्दूर तो दास को भी अच्छी लगी थी। साथ ही दास ने दूसरी दो-तीन फ़िल्मों की मुक्त-कण्ठ से निन्दा की थी जिनमें सस्ते इश्किया गाने अटपटी धुनों म गाये गए थे। भाड मज़ाक अश्लील वातावरण के जनक थ। उसने एक धार्मिक चित्र की भी जी खोलकर बुराई की थी जिसम देवी-देवता भी वस्तुतः मीना-बाज़ार के प्राणी दीखते थे। यह बात भी उसकी समझ म नहीं आती थी कि एक-एक दजन गाने दने का क्या तुक है। कोई मरे चाहे जन्म ले हर जगह गाना क्यों इतना आवश्यक है और फिर गाना भी ऐसा जो न कल्पना की बाती सुजोता है न कहानी को आगे बढ़ाता है। पाँच-छः नृत्य भी रहने चाहिएँ—पर क्यों? हर कहानी म नृत्य क्यों आवश्यक है? बॉक्स ऑफ़िस हिट के लिए यह सब करना पड़ता है! यह कितना विचित्र उत्तर है।

मीना-बाज़ार की यही मूल प्रवृत्ति है। इरा तो हीरोइन है। जभी कहानी बनी हीरोइन। पर कहानी तो अच्छी भी हो सकती है। गुरुदत्त

रुद्रपदम् पर क्यों फिल्म नहीं बन सकती ? इसके उत्तर में इरा ने इतना ही कहा मैं यह देखूँगी। खाली मेरी पसन्द-नापसन्द पर तो कोई फिल्म बनने से रहा।

गुरुदेव की आत्मकथा छपकर आ गई थी। नीलू ने किया था अनुवाद। पत्रों में इस पुस्तक की अच्छी-अच्छी आलोचनाएँ प्रकाशित हुई। किसी किसी ने तो गुरुदेव रुद्रपदम् को दक्षिण का तानसेन कहकर उनकी सराहना की थी भले ही गुरुदेव इसी युग के संगीताचार्य हो गए थे।

नीलू ने पहले ही पुस्तक की प्रति इरा को न पहुँचा दी होती तो आज को यह पुस्तक इरा के हाथों में देते कितनी खुशी होती।

फिल्मी दुनिया में हर तीसरा आदमी महा कलाकार होने का दावा करता है शासधरनजी। इरा ने स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा यहाँ हर आदमी एक-न-एक कहानी लिये घूमता है।

मेरा तो विचार है कि जैसे शरत्चन्द्र के कई उपन्यासों के सफल चित्र बन चुके हैं और अभी और बनेंगे वैसे ही गुरुदेव की आत्मकथा पर आधारित अच्छा चित्र बन सकता है।

'संगीत तो आपका ही रहेगा। इरा मुस्कराई और गुरुदेव ही नाम रहना चाहिए।

फिर इरा ने यह प्रसंग छेड़ दिया कि हमारे आज के फिल्मी गाने झटपटी देशी विदेशी धुनों की खिचड़ी होकर रह जाते हैं। फिल्मी कवि का कोई व्यक्तित्व नहीं होता। एक्टर और एक्ट्रेस से जिस भी भूमिका में चाहो काम करा लो। वैसे ही यह आशा की जाती है कि गीतकार फिल्म-निर्माताओं के इशारे पर लिखे। मुखड़ा पसन्द न आने पर मुखड़ा अन्य दे चाहे तो एक-एक करके गीत के पूरे बोल ही अन्यथा लिये जायें और इस प्रक्रिया में गीतकार के अहम् को ठेस लगने का तो प्रश्न ही न होना चाहिए।

एक गीत का कितना मोल पड़ता है ?

'पचास से पाँच सौ तक।

तब तो फ़िल्मी कवि सब-के-सब खाते-पीते प्राणी हैं।

'सभी तो भाग्यशाली नहीं। चार-पाँच रुपये में गीत लिख देने वाले कवि ही अधिक हैं। उनसे ये गीत दूसरे लोग खरीद लेते हैं और आगे अधिक दाम पर चलाने की कोशिश करते हैं। महाकवि मौज करते हैं। सस्ते दामों खरीदी हुई चीज़ पर अपनी छाप लगाकर मुनाफ़ा कमाते हैं।

मैंने दूसरी बात सुनी है। संगीत निर्देशक गाने की धुन पहले तयार कर लेता है। गीतकार से कहा जाता है, इस धुन पर फ़िट बठने वाले शब्द जड़ दो।

ऐसा तो बहुत होता है। मैं एक गीतकार को जानती हूँ, जो एक गीत का एक हज़ार लेता है। दस वर्ष पहले वह अपना एक गीत पाँच रुपये में बेच डालता था और इसके लिए भी पैदल दादर से ग्रांट रोड तक पहुँचता था।"

दास को इरा के मुख पर महत्त्वाकांक्षा की कोई रेखा तो दिखाई न दी। उसने अपने हाथ से चाय का दूसरा प्याला भरकर लिया। 'बस तो हम मीना-बाज़ार में आकर भी भूल का ! अब भी सोचता हूँ उसकी जमा रोक-थाम और ट्यूशनें मिल जायें तो काम चल जाय। पर एक मन कहता है गुरुदेव पर चित्र अवश्य बनना चाहिए।

'गुरुदेव पर पिक्चर बनते-बनते इरा मुस्कराई, अब हम आपको तो नहीं जाने देंगे।

भीतर से इरा की माँ ने आकर कहा कहाँ जाने की बात चल रही है?

इन्हें बम्बई का पानी पसन्द नहीं।

'बम्बई की हवा में नमी तो बहुत है! माँ ने गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा दूर पास में ज़ंग आ जाती है।

इरा ने प्रसंग बदलकर कहा 'बहुत से लोग फ़िल्मी दुनिया को छोड़कर भाग गए। जो ठहर गए उनमें से ही हमें समझिए।

'हमारी इरा के सलुए घिस गए, बेटा !' माँ ने प्रशंसा-सूचक स्वर में कहा, 'मेहनत के बिना तो सेहरा नहीं बँधता।'

इरा की निगाह मेंटल पीस पर रखी माँ बेटे की मूर्ति पर पड़ गई।

माँ ने हँसकर कहा, 'जिस दिन से तुमने यह मूर्ति लाकर दी है बेटा, हमारी इरा पर तो जैसे जादू कर दिया है। स्टूडियो जायगी तो थोड़ी देर इस मूर्ति के सामने खड़ी रहेगी, लौटेगी तो फिर वहीं आ खड़ी होगी।'

इरा ने वहीं खड़े-खड़े आँखें घुमाकर कहा, 'बॉक्स ऑफिस हिट के तौर पर हमारी फिल्म-कम्पनियों ने 'तानसेन' और 'बैजू बावरा' जैसी फिल्में बनाईं, पर उनकी संगीत साधना को जिस तरह पेश किया गया, उसे तो प्रसंग से दूर का वास्ता भी नहीं कह सकते।'

'इरा ठीक कह रही है, बेटा!' माँ ने बेटी से एकमत होकर कहा, 'यह ठीक है कि तानसेन और बैजू बावरा पर बनाई गई फ़िल्म बॉक्स ऑफिस हिट सिद्ध हुई और उनके कई गाने भी लोगों की जबान पर चढ़ गए, पर इतने बड़े नामों के साथ इस तरह की अटपटी चीज़ों का ताल-मेल करने की कोशिश बड़े अफ़सोस की बात है।'

"यही तो मैं भी कहती हूँ, माँ! क्या कोई इस तरह की हिमाकत यूरोप के बड़े-बड़े संगीताचार्यों के जीवन पर बनी फिल्मों में कर सकता था? चौपिन के जीवन पर 'सौंग टु रिमैम्बर' फ़िल्म बनाई गई। स्ट्रौस के जीवन पर 'ग्रेट वाल्ट्ज़'। 'मुझे बिथोविन' फ़िल्म भी हमेशा याद रहेगी। इस तरह की सभी फ़िल्मों में संगीतकार के संगीत और उसकी शैली का पूरा-पूरा ध्यान रखा गया। पर हमारे यहाँ का तो आवा आवा ही निराला है।

'सो तो तुम ठीक ही कह रही हो, इरा! 'तानसेन' और 'बैजू बावरा' में उन कलाकारों की संगीत-परम्परा को कहाँ निभाया गया? मैं कहती हूँ, तानसेन और बैजू बावरा अपने सम्बन्ध में बनी उन फ़िल्मों को देखते तो शर्म से सिर झुका लेते या गुस्से से लाल-पीले हो जाते।'

'दूसरी बात ही ठीक है माँ।'

रमा ने गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा, 'गुरुदेव रुद्रपदम् पर फ़िल्म बने ही न, पर बने तो उनके संगीत और उनकी शैली को पूरी तरह दिखाया जाय।'

'मैं भी यही कहती हूँ कि कोई ठोस कदम उठाया जाना चाहिए। या फिर उस काम को किया ही न जाय।' इरा ने गम्भीर मुद्रा बना ली।

'क्यों न किया जाय बेटी? गुरुदेव की जीवनी तो मुझे भी सुना गई। उनके शिष्य हमारे सामने बैठे हैं। गुरुदेव की महिमा तो उस्ताद फैयाज़ खाँ भी गाते हैं। उन्होंने मुझे गुरुदेव के मानवें जन्म दिन पर जाने का हाल सुनाया था, जब मैं एक बार बड़ौदा गई थी। उन्होंने आँखों देखा हाल सुनाया था—कैसे गाते-गाते ही गुरुदेव के प्राण पखेरू उड़ गए थे। देखा बेटा, या तो तुम यहाँ आये ही न होते, आये हो तो गुरुदेव पर फ़िल्म बनवा ही जाना। मैं भी एक-दो जगह ज़िक्र करूँगी। उस्ताद फैयाज़ खाँ साहब से भी कहलवा सकती हूँ।'

'बरसाना से पिताजी का पत्र आया है कि गुरुदेव का नया जन्म हो गया।'

'यह कैसे बेटा?'

'बरसाना का बच्चा मधुआ है, मुन्नु बाबा। मुन्नु बाबा के पोते के रूप में ही गुरुदेव ने दोबारा जन्म लिया है, ऐसा ही बरसाना वालों का विश्वास है।'

'ये बातें तो मनगढ़न्त ही होती हैं बेटा! इतने महान् संगीतकार की क्या मुक्ति नहीं हुई होगी?"

'यह तो गुरुदेव की अपनी इच्छा थी। उन्होंने कहा था कि मैं बरसाना के मधुमालीला में जन्म लेकर अपने शिष्य का शिष्य बनूँगा। जो हो, चाहता है कि मैं अपना कर्तव्य पूरा करने के लिए बरसाना चला जाऊँ।

'पहन यह फिल्म तो बन जाय।" कहते-कहते इरा ने स्विच दबाकर रोशनी कर दी और माँ-बेटे की मूर्ति पर नजरें गड़ा दीं।

शख उठकर बोला अच्छा तो मैं चलूँगा।

खाना खाकर ही जाना बेटा! खाना बन रहा है। माँ की आवाज में ममता की गहरी पुट थी।

शख ने एक-दो बार जाने को कहा पर इरा और माँ ने एक स्वर होकर रोक लिया।

माँ ने हँसकर कहा गोविन्दन के साथ तुम्हें कष्ट हो बेटा तो हम तुम्हारे लिए यहीं रहने का प्रबन्ध कर सकते हैं।

मुझे वहाँ कोई कष्ट नहीं शख ने बलपूर्वक कहा।

माँ ने सात पीढ़ियों की बात छेड़ दी सात सागर संगीत के सात स्वर और सात पीढ़ियाँ। हाँ सात पीढ़ियों से ही हमारा परिवार बम्बई में है वर्ना! पीछे हम रेणुका के हैं। आगरा से दूर नहीं रेणुका। वही रेणुका जहाँ कभी जमदग्नि ऋषि का आश्रम था। बम्बई में लिखे गए हमारे परिवार के सात अध्याय। सोचती हूँ आठवाँ अध्याय और इरा ने माँ के मुँह पर हाथ रख दिया।

सात राग गाये गए, बेटा! माँ कहती चली गई आठवें राग का कैसे जन्म हो?

इरा उठकर भीतर चली गई।

शख कुछ न बोला।

माँ ने कहना शुरू किया इरा की बड़ी बहन जाती रही। मझला भाई भी न रहा। माँ चुप हो गई। उसने उठकर माँ-बेटे की मूर्ति को समीप से देखा और फिर सम्भलकर बोली अब मेरी इरा है या फिर उसका छोटा भाई शेखर! तुम बैठो बेटा! मैं इरा को भेजती हूँ! कहते हुए माँ भीतर चली गई और शेखर आकर शख से खिलौनों की बातें करने लगा।

फिर शेखर भी भीतर चला गया।

शंकर के जी में आया, उठकर नीचे उतर जाय। पहले इरा चली गई फिर माँ, और अब शंकर भी चला गया। बालकनी से सागर नजर आ सकता था जब वह यहाँ आया था। अब रात्रि ने अंधकार में सागर की हल्की-सी आवाज ही सुनी जा सकती थी। उसे वरकला की याद हो आई। माँ मुझे याद करती होगी। पापनाश पर माँ पहले के समान ही सागर-स्नान को जाती होगी। उसे अपने ऊपर क्रोध आने लगा—मैं यहाँ चला आया। बम्बई की फिल्मी दुनिया में मीना बाजार सजा है। यहाँ मेरे राग रागिनियों को कौन लेगा? डाइरेक्टरों को मस्का लगाने की कला से तो मैं अनभिज्ञ हूँ। प्रोड्यूसरों का चमचा बनने की कला कैसे सीखूंगा? मुझे वरकला लौट जाना चाहिए। उसे लगा राजवंश और साधारण परिवार उदय और अस्त होते आए हैं युग-युग से। बदला नहीं नारी और पुरुष का आकर्षण। इरा के गिर्द घूमती है फ़िल्मी दुनिया। सुषमा की मूर्ति है इरा।

शीघ्र ही इरा ने सफेद साड़ी की साड़ी में महाश्वेता के समान प्रवेश किया। मुख पर स्वीकृति की मुस्कान जो इस बात की सूचक थी कि मनुष्य की क्षमता ही चरम सार्थकता की पहली शर्त है। और फिर एकाएक हँसकर बोली कहते हैं बिथोविन को संगीत रचना में अटक लगती तो वह सिर पर नल की टोंटी खोलकर बैठ जाता था। आप क्या करते हैं?

शंकर असमंजस में चुप हो रहा। इरा ने पास रखे ग्रामोफोन पर बिथोविन का एक रिकार्ड लगा दिया, और हाथ से ताल देने लगी। उसकी आँखें मानो शंकर से कह रही थीं—मैं जानती थी मेरे जीवन में एक-न-एक दिन आएगा उल्लास-कौतूहल का गीत। और वह दिन आ गया। कहो क्या करते हो? क्या सब देते हो? मीना-बाजार में अभिनय करना छोड़-छाड़कर विरक्त हो जाऊं? यह बात मन में आती तो है पर ऐसा करने को साहस नहीं जुटा पाती। बोलो क्या

मदन बाबू की बातें सुनाते हुए माँ के मुख पर करुणा की रेखाएँ उभरीं। आँखों में आँसू आ गए। जीवन भर यहीं पड़े रहे। कुछ काम नहीं किया। कुछ करने की जरूरत भी नहीं पड़ी।

इरा उठकर डैडी के चित्र के सामने खड़ी हो गई। गाल को लगा यह सब अभिनय है।

फिर इरा रो पड़ी। वह भीतर चली गई।

'क्या ऐसा नहीं हो सकता बेटा ?' माँ ने समस्त करुणा उड़ेलते हुए कहा, 'कि मेरी इरा को भी जीवन-साथी मिल जाय ?' आवेग से माँ का कण्ठ-स्वर उन्मत्त हो गया था, 'यह कोई अपराध तो नहीं बेटा ! ऐसे तो बहुत हैं, जो मेरी इरा को मुझसे छीन ले जाना चाहते हैं। पर कितने अच्छे थे मदन बाबू ! आए और यहीं रह गए—हमारे हो गए। पिछला इतिहास भूल गए। नया इतिहास बना गए। कभी-कभी मैं सोचती हूँ बेटा ! वह इतनी जल्दी क्यों चले गए ! और जानते हो बेटा ! मदन बाबू की एक ही बात ने मेरी नाव किनारे लगा दी थी।

वह क्या ?

एक दिन जब सब लोग गाना सुनकर उठ गए, मदन बाबू बैठे रहे। मैंने हँसकर कहा—क्या संगीत में गुमराह हो गए ? वह बोले—संगीत के बिना भी गुमराह हो सकता हूँ। मैंने कहा—वह कैसे ? वह बोले—सात का चक्कर चलता है। यह सदा से चलता आया है, चलता रहेगा। मैंने कहा—यह क्या गूढ़ पहेली है। तब वह बोले—

जब मेह तब घास !
जब घास तब प्रजा सुखी !
जब प्रजा सुखी तब ऐन !
जब ऐन तब जुल्म !
जब जुल्म तब कहर !
जब कहर तब सोका !
जब सोका तब मेह !

यह ठीक महसूस थे न करा! मैंने ऊपरी मन से कहा था—तुम्हारी बात मेरी समझ में नहीं आई भग्न बाबू! वह मुस्करा दिए। फिर वह चले गए। बहुत दिन तक न आये। फिर वह लौटकर आये तो घर से सब नाते तोड़कर। और हमने शादी कर ली। मुजरा तो अपना काम ठहरा। बन्द न रखा। बन्द रखता? वह भी क्या जमाना था! पचास रुपये मुजरा से लेकर एक हजार रुपये मुजरा तक मिलने लगा था। ठुमरी की तालीम पाई थी। उस्ताद कहते—मना तेरे गले में जादू है। कई उस्ताद आये और गये। फिर एक उस्ताद ने कह दिया—मना सब सीख गई! कई तरह के लिबास साथ रखने पड़ते थे और कपड़ों के साथ मेल करने वाले जेवर भी जरूरी थे। दोबारा मुजरे की फरमाइश की जाती तो मैं फिर से घर तक लिबास और जेवर बदलकर मुजरा करती थी। कहते-कहते माँ रुक गई। कथा की पृष्ठभूमि में माँ की मुस्कान पर मानो किसी मुजरे की कोई याद अंकित हो गई थी। मुझे लगा जैसे कोई फ़िल्म चल रहा हो।

माँ ने फिर कहना शुरू किया—आदत के हाथ में ढलने पर सब चलता रहता है। इन्दौर-नरेश होली बहुत धूम धाम से मनाया करते थे। हिन्दुस्तान भर की तवायफ़ें उन दिनों इन्दौर में होली के जलसे पर महाराज की मेहमान हुआ करती थीं। मैं भी जाती थी। गौहरजान तो मैं भला कहाँ बन सकती थी! वह तो कभी इस मौके पर इन्दौर न गई। एक महफ़िल में वहीं मुझे भी गौहरजान के साथ बुलाया गया था—मन ही गौहरजान की बनी ही मानती थी—इन्दौर-महाराज ने पूछा—सारे हिन्दुस्तान की तवायफ़ें इन्दौर आती हैं होली पर, तुम क्यों नहीं आती गौहरजान? तब बोल उठी गौहरजान—आपने मुझे बुलाया कब? महाराज बोले—यह हमारा दस्तूर नहीं कि हम तवायफ़ों को न्योता दें। न्योता बराबर वालों को दिया जाता है। इसके जवाब में गौहरजान बोली—तब तो मैं भी मजबूर हूँ। मेरा भी बिन-बुलाए कहीं जाने का दस्तूर नहीं। और बेगम मरते दम तक

गौहर ने हामी भर इन्दौर का रुख नहीं किया था। मैं गौहर न बन सकी।

दास ने पूछ लिया, 'गाना सीखने में तो बहुत कष्ट सहने पड़े होंगे?'

'क्या नहीं? शुरू-शुरू में तो यह हाल रहा बेटा कि ज़रा-सी भूल पर उस्ताद भरी महफिल में मुँह पर तमाचा मार देते थे। नाच रंग की महफिलों में उन दिनों गाने वालियों में मुकाबले हुआ करते थे। एक दिन लेकर सभी तवायफें अपने अपने ढंग में गातीं और सुनने वाले धन्नगील तर्ज का फैसला करते। ऐसे मौका पर अगर ज़रा-सी भी भूल हो जाती तो तबलची उठकर सबके सामने मेरे मुँह पर तमाचा जड़ देता। और मज़ा कि कायदा था मैं गुस्सा होने की बजाय उलटी शुक्रगुज़ार होती। उसी तालीम का नतीजा था बेटा कि पचास रुपये मुजरा से एक हज़ार मुजरा तक पाने लगी थी।' कहते-कहते माँ जैसे अपने अतीत में खो गई।

इरा ने आकर कहा, 'खाना तैयार है माँ!'

'तो लगवाओ। हम आते हैं।'

माँ के मुख पर फिर चमक आ गई। 'मेरी कहानी बहुत लम्बी है बेटा! उन दिनों तवायफ को खड़े होकर गाना पड़ता था। सुनने वाले आराम से बैठ जाते थे। भला हो जद्दन बाई का। उन्होंने तवायफों में बैठकर गाने का तरीका चलाया। शादी-ब्याह में तवायफों का आना ज़रूरी था। नवाब रामपुर एक जश्न करते थे। जब तवायफें जश्न में भी साथ जाती थीं। जद्दन बाई को या बाज़ीगरों की तरह निकलने में तवायफों की हतक महसूस हुई। आँखों-देखी बात सुनाती हूँ। उन्होंने तजवीज़ रखी कि हम जश्न में निकलने से इन्कार कर दें। जब जुलूस का समय आया, तो सब डरकर चल पड़ीं। मैं पीछे रह गई जद्दन बाई के साथ। नवाब साहब को हमारी इस हरकत का पता चल चुका था। बाद में हम सामने गए, तो उन्होंने मुँह फेर लिया। जद्दन बाई ने मेरे

कान में कुछ कहा। मैंने हाँ में सिर हिलाया। हम दोनों भिन्नाकर उलटे पाँव लौट आए। पीछे-पीछे आ पहुँचा नवाब साहब का हुक्मनामा— पौ फटने से पहले रियासत की सरहद से बाहर निकल जाओ! और हम रातों रात वहाँ से चल आये थे बेटा! वह भी क्या जमाना था!

हरा ने हँसकर कहा वह भी क्या जमाना था! और यह भी क्या जमाना है!

भोजन के बाद हरा चलने लगा तो माँ ने गम्भीर होकर कहा 'जब भेंट तब घाम!'

हरा गम्भीर होकर बोला यह किसी सेठ का विचार नहीं यह तो हमारे डंडों का मान है।

नौ



शरद ने इरा की कथा सुनी तो पहले उसे ग्लानि-सी हुई। फिर क- माना इस कथा को तर्कसंगत सिद्ध करने के लिए मन ही-मन वह उठा—कमल कीचड़ में खिलता है। कमल से इरा की तुलना उसकी कल्पना को छू-छू जाती।

गोविन्दन को किसी प्रकार पता चल गया था कि इरा से बड़ी अधिक बूढ़ी गायिका मना ही शरद के संगीत पर मुग्ध हो गई है। उसने शरद को समझाया इन लोगों के चक्कर में मत फँसना। पहली बात तो यह है मना को कभी यह सहन ही नहीं हो सकता कि कोई इरा को ब्याहकर ले जाय। दूसरी बात यह कि मना को बहुत दिनों से एक घर-जमाई की तलाश है। छि छि एक वेश्या के घर में घर-जमाई बनकर रहने पर लाख-लाख धिक्कार! मैं कहता हूँ शरद तुम भले ही इन लोगों से मिलो पर अपना काम निकालने के लिए। इरा तुम्हें काम दिला सकती है अच्छे लोगों से मिला सकती है। तुम होशियार रहना। तुम्हारी बुद्धिमानी इसी में है कि साड़ी के कन्धों पर पैर रख रखकर ऊँचे चढ़ते जाओ न कि सीढ़ी से ब्याह करके घर-जमाई बन बैठो। उस रूप में तो तुम मिट्टी के माधो ही बन जाओगे। खबरदार! यह मैं कह रहा हूँ! मैं हूँ गोविन्दन अवतार! बम्बई के फिल्म-जगत् का अवतार जिसकी आज पूछ नहीं तो कल जरूर होगा। इस लम्बे भाषण के उत्तर में शरद ने एक भी शब्द न कहा। केवल मुस्कराकर

आँखों-ही आँखों में कहा—मैं इतना मूर्ख नहीं।

बम्बई में हर कोई दौड़ रहा था। अपनी अपनी एंगेजमेण्ट का चक्कर। एक मित्र दूसरे को हलो कहता और अगले ही पल देखता कि मित्र आगे निकल गया हलो पीछे छूट गया। दास को इतना सन्तोष तो था कि गोविन्दन उसके लिए बड़ी-से-बड़ी एंगेजमेण्ट छोड़ सकता है।

उवनी ने कह-सुनकर दो-तीन और ट्यूशनों का प्रबन्ध कर दिया था। जब तक फ़िल्म-जगत् में कहीं पर नहीं जमते ट्यूशनें तो ज़रूरी थीं।

नीलू इस प्रयत्न में थी कि दास को फ़िल्मी संगीत की दलदल में फँसने से बचाकर अपने विद्यालय में संगीताचार्य की पक्की नौकरी दिलवा दे भले ही वह जानती थी दास जीवन भर गोविन्दन के चक्कर से नहीं निकल सकेगा जिसके जीवन का उदय यहीं हुआ अस्त भी यहीं होगा। पर यह तो नीलू भी चाहती थी कि गुरुदेव की जीवनी पर फ़िल्म बने तो उसमें दास का संगीत रहना चाहिए।

नाम की कल्पना का कोई ओर छोर न था। उवनी को अपनी कथा से अवकाश न था। उसके पति की अगले मास के प्रारम्भ तक आ जाने की सम्भावना है, अब देर नहीं होगा। संगीत में उवनी का मन नहीं लगता। बातें करते थकती नहीं। कभी किसी नीग्रो गायिका की सम्मति प्रस्तुत करते हुए कहती कि भारतीय और पश्चिमी संगीत में लय की पद्धति एक ही प्रकार की है। कभी आँखें मटकाकर यह दावा करती कि उस नीग्रो गायिका के लिए भारतीय रागों की वृन्दवाद्य द्वारा प्रस्तुत रचनाएँ सुनवाने का श्रेय उसीको मिलना चाहिए। बातें-ही-बातें। बातों की मस्त घुमाती थी उवनी। कई दिन तो नाना गायिका का चक्कर चला। दास सुनते-सुनते ऊब गया। भारत आने से पूर्व नीग्रो गायिका ने अमरीका में भी भारतीय संगीत सुना था। अमरीका में उसने रवीन्द्रनाथ ठाकुर के दर्शन किये थे। तब वह बच्ची थी। तभी से भारत आने

के लिए वह लालायित रही। नीग्रो गायिका ने यह बात बलपूर्वक कही थी कि जैसे हम लोग यहाँ पश्चिमी संगीत सुनाने आते हैं वैसे ही अमरीका और पश्चिमी देशों में ऐसे सुअवसर मिलने चाहिएँ जब भारतीय संगीताचार्य और गायिकाएँ भारतीय संगीत का प्रदर्शन करें। उर्वशी देर तक यह चर्चा न बैठी कि क्यों जैसे भारतीय संगीताचार्य को विदेशों में जाकर अपने देश का नाम ऊँचा करना चाहिए। यहाँ न बाहर जाने की उत्सुकता न दिखाई तो उर्वशी यह प्रसंग ले बैठी अमरीका में नीग्रो लोगों की जो हेय स्थिति है उसके फलस्वरूप वहाँ नीग्रो संस्कृति पर परलोकवादी छाप लग गई है। इस लोक के अन्याय से मुक्ति पाने के निमित्त नीग्रो परलोक की कामना करता है। इस भाव धारा के नीग्रो गीत समूह-गान के रूप में विकसित हुए हैं। सबसे अधिक लोकप्रिय यही गीत हैं। समूहबद्ध होकर नीग्रो स्त्री-पुरुष ये गीत गाते हैं तो फूट-फूट पड़ता है उनका आवेग वातावरण में तिर तिर जाती हैं। उर्वशी ने आँखें मटकाकर यह वक्तव्य कुछ इस प्रकार किया जैसे वह आँखों-देखा हाल बता रही हो।

उर्वशी को दुख था तो यही कि जिस समय बम्बई आया जब वह नीग्रो गायिका लौट गई थी। बम्बई के पत्रों में उस गायिका का विस्तृत परिचय प्रकाशित हुआ था। एक फाइल से निकालकर उसने एक समाचारपत्र की कटिंग सामने ला रखी

इटली के प्रसिद्ध संगीतज्ञ स्वर्गीय आतुरो टास्कानीनि ने अमरीकी नीग्रो गायिका मिस नारा फिशर का संगीत सुनने के पश्चात् उसे देवलोक की किन्नरी की उपाधि दी थी। एक सुविख्यात जर्मन संगीतज्ञ ने उसकी मधुर आवाज़ का यह कहकर अभिनन्दन किया था— सौ वर्षों में भी ऐसी आवाज़ बड़े भाग्य से सुनने को मिलती है।

'नारा फिशर की मधुर आवाज़ सर्वप्रथम न्यूयॉर्क में एक नीग्रो मंच में सुनी गई थी, जहाँ वह एक शिशु-मण्डली में गाया करती रही थी।

नोरा को सफलता तक पहुँचने के लिए लम्बा मार्ग पार करना पड़ा। अनथक लगन उसे माँ से विरासत में मिली थी। पिता से मिला था दृढ़ संकल्प। पहला वायलिन खरीदने के लिए वह पड़ोस के एक सम्पन्न परिवार में झाड़ने-पोंछने का काम करके कई महीनों तक पैसे जुटाती रही। तब वह दस वर्ष की ही थी।

दक्षिण अमरीका की इस सुप्रसिद्ध गायिका ने जीवन की डगर पर चलना शुरू किया। मुड़-मुड़ बाधाएँ आईं। मुड़-मुड़ उसने साहस से काम लिया और कला के उच्चतम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए उसने अपनी साधना रागिनी को चुन लिया। सरलता और विनम्रता की मूर्ति नोरा निरन्तर आगे बढ़ती गई। उसकी कटु आलोचना भी हुई पर इससे भी उसने बल प्राप्त किया। माता-पिता-विहीन नोरा ने संगीत में ही माता-पिता का स्नेह उपलब्ध किया। कठिनाइयों ने नोरा को सोने की तरह तपाया और शुद्ध किया।

संगीत के छोटे कार्यक्रमों में भाग लेकर और वह भी बहुत थोड़े पैसों में नोरा अपनी शिक्षा और जीवन-निर्वाह को जारी रख सकी। यह एक चमत्कार है। जब मिस नोरा की स्नातकीय शिक्षा पूरी हुई, तो कालिज के प्रिंसिपल ने एक विख्यात संगीतज्ञ के सामने मिस नोरा के गान की व्यवस्था की। प्रेस कान्फ्रेंस में यह बताते हुए कि उस संगीतज्ञ ने बड़ी कठोरता से कह दिया था अतिरिक्त छात्र-छात्रा के लिए मेरे यहाँ बिलकुल गुंजाइश नहीं। तुम्हारा संगीत सुनने के लिए मैंने जो बहुमूल्य समय दिया वही सचमुच तुम पर भारी कृपा है। यह बताते हुए मिस नोरा का गला भर आया था।

फिर नोरा ने बताया कि संगीतज्ञ के कठोर उत्तर के बावजूद उसने 'गट्रा नदिया' नामक पुरातन गाथा गान गा सुनाया। संगीतज्ञ मन्त्रमुग्ध-सा रह गया। नोरा को प्रवेश मिल गया। अब यह समस्या थी कि शिक्षा के लिए खर्च कहाँ से आए। एक धनी परिवार की महिला ने कुछ मित्रों के साथ मिलकर नोरा के संगीत का आयोजन

लिया। उससे जो धन आया सब खर्च निकालकर सात सौ डालर बच रहा।

उससे अगले ही वर्ष नोरा को 'युवाक के' संगीतज्ञों ने सर्वश्रेष्ठ गायिका घोषित किया।

फिर तीन वर्ष बाद फिलाडेल्फिया ने नोरा को दस हजार डालर का बोक पुरस्कार प्रदान किया। पर नोरा ने इस राशि से एक पुरस्कार कायम करके उदारता का परिचय दिया।

नोरा ने पूरे यूरोप की तीन बार यात्रा की है और अनेक विश्व विद्यालयों ने उसे डाक्टर ऑफ म्यूजिक की सम्मानसूचक उपाधियाँ प्रदान की हैं। इस सिलसिले में बम्बई विश्वविद्यालय भी पीछे नहीं रहा।

उर्वशी ने स्वयं नोरा का जीवन-परिचय पढ़कर सुनाया। घास के मुँह से निकला — स्वयं अपने ही देश के कलाकारों का सम्मान देने में बम्बई विश्वविद्यालय को देर लगती। पर कोई बात नहीं। हम इन्तजार कर सकते हैं।"

"नोरा जाते-जाते एक बात कह गई थी।

"क्या ?"

"नोरा ने कहा था कि अमरीका में फ़िल्मी संगीत की कोई पृथक पद्धति नहीं है और न ही फ़िल्मी संगीत को तिरस्कार की भावना से देखा जाता है। — कहते-कहते उर्वशी रुक गई। और फिर सम्भलकर बोली — मैं नोरा को 'सारंग' और 'बजू बावरा' फ़िल्में दिखाने ले गई थी। ये फ़िल्में देखकर नोरा को कितनी निराशा हुई, इसका अन्दाजा आप नहीं लगा सकेंगे।

"ठीक है!" कहकर घास ने इस प्रसंग को यहीं समाप्त कर देना चाहा।

उर्वशी मुस्कराई — "मैंने गुरुदेव की आत्मकथा का स्क्रीन-प्ले लिखना शुरू कर दिया है, यह तो आपको बताया ही नहीं।"

'ठीक है।

क्यों इससे आपको खुशी नहीं हुई ?'

'सब ठीक है। चलता है।

निराश होने की बात नहीं। नीलू कल आई थी। वह कह रही थी कि वैसे तो डाइरेक्टर प्रोड्यूसर सान्याल भी गुरुदेव की जीवनी पर फ़िल्म बनाने को तैयार हैं पर जयन्त भाई अपनी कम्पनी से पहली फ़िल्म के तौर पर ही इसका निर्माण करें तो और भी अच्छा होगा। मैंने हाँ कर दी और यह कहकर उसे चौंका दिया कि जिस दिन पुस्तक की प्रति मेरे हाथ में आई, मैंने इसे पढ़ना शुरू किया और समाप्त करते ही स्क्रीन-प्ले लिखने बैठ गई, जो आधे से ज्यादा लिखा जा चुका है। बढ़िया चीज़ बनेगी। क्यों ?

'ठीक है।

उपमा को हाम का 'ठीक है' कहना बहुत अखरा। वह चुप हो गई।

हाम ने ठण्डी साँस भरकर कहा, अब पैसे का सवाल है। पैसे को पैसा कमाता है

'उसमें गुरुदेव का रोल मुक्तिनाथ करेंगे। मैं कल उनके घर गई थी। मैंने हँसकर कहा—कबूतर तो बहुत पाल लिये। अब फिर बाहर निकलो। बोले—तुम कहोगी तो क्या इन्कार है उन्हें! मेरा तो बचपन दगा है मुक्ति काका ने! मैं तो उनसे ही कराये बिना न टलूँगी।

'यह तो बहुत अच्छा हुआ।

सगान आपका रहेगा।

यह सब फैसला तुम अपने आप ही किये जा रही हो! जयन्त भाई का तो मान लो।

'उनकी तरफ़ से मुझे सब अधिकार है। और एक बात बताऊँ। आपको विश्वास नहीं होगा।

क्या ?"

हम का तो सपना पूरा हुआ है। मैंने इस की माँ का सुना है। गुरुदेव

की पत्नी अन्नपूर्णा का रोल मैना करेगी। कमाल हो जायगा। मुक्ति बोध और मना का यह मेल कसा रहेगा?'

'ठीक है।

उर्वशी खीझ उठी ठीक है' के अलावा भी उत्तर हो सकता है सगीताचार्यजी! खुश नहीं होंगे। पसे मिलेंगे जितने मुह से मांगोगे। बोलो आज की डेट से ही कान्ट्रैक्ट करते हैं?

'मुझे अपना मोल स्वय मालूम नहीं।

मोल दे भी कौन सकता है? खाली पत्रम्-पुष्पम् देने की बात है।

वसे तो बात ठीक है। गुरुत्व पर फिल्म बने तो मैं उससे पसा कमाने की बात तो सोच भी नहीं सकता। फिर भी गोविन्दन से भी सलाह कर लूगा।

गोविन्दन से क्या सलाह करनी है? उर्वशी हँस पड़ी मैं कहती हूँ आज ही और अभी फसला कर लो। मुक्तिनाथ और मना के कान्ट्रैक्ट कल ही हुए हैं। आज आपका कान्ट्रैक्ट भी हो जाय। बनियागीरी मुझे भी नहीं आती। मैं चाहती हूँ जयन्त के आते ही काम शुरू हो जाय। स्टूडियो का प्रबन्ध भी कर रहे है। अब आप बम्बई में है कलकत्ता में तो नहीं। यह फिल्म शानदार बन जाय और साथ ही गुरुत्व की परम्परा के अनुरूप सगीत चमक उठे तो आपका भविष्य उज्ज्वल है। अब केवल एक कवि की चिन्ता है। कवि भी एसा जो यह जिद न करे कि वह पहले गाने लिखे और आप उन पर सगीत फिट करें बल्कि ऐसा कवि जो आपकी धुनों के अनुसार शब्द फिट करे।

दास कुछ न बोला।

उर्वशी देर तक इधर-उधर की बातें करती रही। सूर्यास्त हो रहा था।

खिड़की में सागर की लहरों पर सुनहरी आभा नजर आ रही थी। पहले चाय आई।

फिर उर्वशी ने जल्दी जल्दी कान्ट्रैक्ट टाइप किया और दास के सामने

रमनर बोला "लीजिए। पाँच हज़ार की बजाय मैंने सात हज़ार ही लिख दिए। मैं भला जयन्तजी का ही पक्षपात क्यों करने लगा? कलाकार का भी मूल्य लगती है। यह और बात है कि यदि मैं आपकी जगह होती तो ऐसा सुअवसर पाने के लिए सात हज़ार पाने की बजाय पल्ले से सात हज़ार न डालता। गोविन्द यह कान्ट्रैक्ट देखेगा तो कहेगा कि सबकी उदार है। "तो लीजिए, इस कान्ट्रैक्ट पर सही कीजिए। आज ही मैं अपना महत्ना नोरा डिक्सार को भी इसकी सूचना दे रही हूँ।

जय ने बहुत देर तक सम्पना न उठाई। फिर उसने काँपते हाथों से हस्ताक्षर कर दिए।



दस

जयन्त के हाथ में 'मिरर' मैगजीन का ताजा अंक था, जिसमें एक संगीतकार की महान् प्रतिभा दरसाने वाली यह टिप्पणी छपी थी :

एक बार एक संगीत प्रेमी युवक सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ मोजार्ट के घर गया और बोला, 'सिम्फनीज़ के नोटेशन कैसे लिखे जाते हैं ?'

इस पर मोजार्ट ने उत्तर दिया, 'अभी तुम लड़के हो। पहले 'बैलड' के नोटेशन लिखो। उसमें सफल हो जाओ तो आगे बढ़ना।'

'आप तो दस वर्ष की अवस्था में ही सिम्फनीज़ के नोटेशन लिखने लगे थे।'

'सो तो ठीक है। पर मैं किसी से पूछने तो नहीं गया था, तुम्हारी तरह।'

पढ़ते-पढ़ते जयन्त को सिहरन-सी हुई। फिल्म जगत् को ही लो। कुछ लोग इसमें वर्षों से धक्के खा रहे हैं, फिर भी किसी ठिकाने पर नहीं पहुँच सके। कुछ किसी प्रकार गाड़ी ठेलने योग्य हो पाए, फिर भी उन्हें सफल तो नहीं कह सकते थे।

तीन साल बाद लौटा था जयन्त। अच्छी फिल्म बनाने के हजारों करतब सीख डाले। यूरोप की भी खूब यात्रा की। कोई स्टूडियो छोड़ा नहीं। बड़े-बड़े डाइरेक्टर प्रोड्यूसरों से भेंट की। उनके अनुभव का पानी घूँट के समान पी लिया।

उसके पास अपना इतना सामान न था, जितना फिल्म-सम्बन्धी

साहित्य । अनेक पत्रों की कटिंग अनेक पुस्तकें । दुनिया भर के फिल्म सम्बन्धी नुसखे । और बहुत सी ऐसी पुस्तकें भी थीं जिनका फिल्म-जगत् से सीधा सम्बन्ध तो न था फिर भी उनसे मदद मिल सकती थी।

बम्बई पहुँचकर उसे पता चला कि उसने बहुत काम कर लिया। गुरुदेव की कहानी के पात्र चुनने में तो उसने कमाल ही कर डाला था। मुक्तिबोध तो अब पुराना सिक्का था घिसा पिटा। उस फिल्म में गाने की बात अनोखी थी। वह तो वर्षों से कबूतर पालन में ही अपनी कला दिखाने लगा था। इसलिए यहाँ वह कला के कबूतर उड़ायेगा। इरा की माँ मैना पहली बार आ रही थी।

शायरन—उन्हें तो जयन्त भूल ही गया था! कहाँ पच्चीस हज़ार कहाँ सात हज़ार! ट्यूशन के फन्दे में उसने उसे खूब फँसाया। बेचारे का पहला कान्ट्रेक्ट है। उसे क्या पता बम्बई की मार्केट में म्यूज़िक डाइरेक्टर का क्या मोल है। कान्ट्रेक्ट पर साइन कर दिया। अब तो वह बँध गया। अब कहाँ जायगा?

आज कला साबोटेज का मुहूर्त है। जयन्त के आनन्द का पारावार नहीं। उसका स्वप्न साकार होने जा रहा है।

उसके सवेरे में 'गुरुदेव की आत्मकथा' की मारक्को बाइंडिंग वाली प्रति लिए बैठी थी। जयन्त कई बार उठकर उसके पास गया। मुस्कान-से-मुस्कान टकराई। नयनों ने दाद दी। धन्य है उसकी! एक डाइरेक्टर प्रोड्यूसर की पत्नी को इतना ही समझ होना चाहिए। पूरा स्क्रीनप्ले लिख चुकी है। फिर से पुस्तक पढ़ रही है। शायद कहीं कोई नया नुस्खा हाथ लग जाय। महनत का फल है। सफलता और सिद्धि इन्दिरा का नाम है! टोना नहीं सफलता कोई मन्त्र नहीं। यह सब तो साधना पर निर्भर है। जयन्त को लगा उसने स्वयं भी कुछ कम साधना नहीं की थी। छोटी उम्र से ही वह फिल्म में दिलचस्पी लेने लगा था जब मात्र दस वर्ष का उम्र में ही सिम्फनीज़ के नाम्बर गिनने लगा था।

"सिगनचर टयून सुनोगे ? उवशी मुस्कराई।

'ज़रूर सुनेंगे।' जयन्त बोला 'आज तो कुछ मिलेगा दायें हाथ की हथेली खुजला रहा है।'

पर मेरी तो बाईं हथेली खुजला रही है। उवशी हस पड़ी सफलता निश्चित है! और उसने उठकर टेप रिकार्डर लगा दिया।

'वाह-वाह! जयन्त झूम उठा दास का स्वर भी खूब है। पिछले दस वर्ष में मैंने ऐसी धुन नहीं सुनी।

हालीवुड में भी नहीं ?

नहीं।'

यह तो बताओ सिगनेचर ट्यून के रूप में यह कसी रहेगी ?

अभी यह बताना क्या बाकी रह गया ? बहुत ही बढ़िया धुन है। कला मोवीटोन की कन्या तो तुम्हीं हो उवशी! इस पिक्चर से हमारी धाक बढ़ जायगी। हम फिल्म इण्डस्ट्री का स्टण्डर्ड एकदम ऊंचा उठा देंगे।"

उवशी मटक चिड़िया की तरह चहक उठी। जैसे सुहागरात की शहनाई बज रही हो। आज उसकी सिगनेचर ट्यून को जयन्त ने पसन्द कर लिया था। सिगनेचर ट्यून तो पूजा प्रसाद है! उवशी ने दोबारा टेप रिकार्डर चलाते हुए कहा एक बार तो संसार झूम उठेगा। बातों ही-बातों में दास ने यह धुन सुनाई। मैंने बहुत प्रशंसा की। आर्टिस्ट की प्रशंसा ठीक स्थान पर की जाय तो बात बनती है।

'यह तुम्हारे दिमाग़ का चमत्कार है।

मेरी प्रशंसा तो ज़रा थोड़ी ही करो।

क्या तुम क्या आर्टिस्ट नहीं हो ?

'एक बात कहूँ ? पहले सुन लो। फिर कहीं भूल न जाऊँ। इस फिल्म में एक सिचुएशन ऐसी ज़रूर निकालेंगे जहाँ यह गाना आ सके' कहते कहते उवशी रुक गई। फिर सँभलकर बोली 'अरे छोड़ो। शायद तुम हँस दोगे जयन्त!

गाओ तो।

'वह एक गीत है न!'

'कौनसा?'

रसिया ह्वाइ गई मोर मखतिया पिया के लागि गई नजर!
उर्वशी ने लोकगीत को पूरा गाकर दरसाने का यत्न किया।

'अरे वाह! तुमने यह धुन कहाँ सीखी?'

'बस यूँ ही। तुम हालीवुड और यूरोप में घूमते रहे। हमारा भी अपना हालीवुड है।'

'क्यों नहीं।'

'हाँ तो हमारे देश में बहुत-कुछ है जिसे अभी एक्सप्लायट ही नहीं किया गया। हम बहुत-कुछ दे सकते हैं संसार को!'

'क्यों नहीं, क्यों नहीं। पर रसिया मखतिया वाले गीत को तुम कहाँ फिल्माना चाहती हो? क्या इसी गुरुत्व वाली फ़िल्म में?'

'अवश्य!'

जयन्त ने मुस्कराकर कहा, 'हमें मुहूर्त से एक घण्टा पहले स्टूडियो पहुँच जाना चाहिए। तीन घण्टे रहते हैं। एक घण्टे में तो तुम जाकर कहीं तैयार होगी।'

'मैं तो दस मिनट में तैयार हो सकती हूँ। अभी लो!' उर्वशी ने रिकार्ड लगा दिया—'कर ले सिंगार गोरी, कर ले सिंगार!'

लेकिन इस 'कर ले सिंगार गोरी!' ने पचास मिनट ले लिये। गोरी सिंगार करती रही। सिंगार खत्म ही नहीं हो रहा था।

'अच्छा बस! कर ले सिंगार गोरी!' जयन्त हँस पड़ा, 'सारा सिंगार क्या आज ही कर लोगी?'

उर्वशी शीशे के सामने खड़ी निरन्तर लगी रही थी!



ग्यारह

स्टूडियो बहुत सजा हुआ था। जयन्त और उर्वशी गेट पर खड़े अतिथियों का स्वागत कर रहे थे।

मुक्तिबोध आ चुका था पर मैना अभी तक नहीं आई थी। मनोज सान्याल तो यों चहक रहे थे जैसे यह उन्हीं की फिल्म का मुहूर्त हो।

हीरा का कहीं पता न था। बार-बार लोग उसी को पूछ रहे थे। फिर किसी ने कहा — हीरा तो आजकल शास्त्र के चक्कर में है।

यह सब गलत बात है। मनोज ने बलपूर्वक कहा — लोगों ने न जाने हीरा को क्यों इतनी मूर्ख समझ रखा है? वह तो बड़ी चलती रकम है।

'होगी चलती रकम! फिर किसी ने कहा — समय आने पर सब बुद्धि धरी धराई रह जाती है। मनोज बाबू, आपकी हीरा तो आपके हाथ से गई।

मनोज हँस पड़ा — हीरा तो अपनी माँ की है। उसे जो पैसा मिलता है वह सब मैना की जेब में ही तो जाता है।

मुक्तिबोध भी चुप न रह सका — मैना को अपने जमाने की बहुत बड़ी नायिका है। मैना ने जितना कमाया उतना तो हीरा क्या खाकर कमाएगी? और अब देखने जाइए। मैना देवी फिल्म में उतरने जा रही हैं। मेरा तो ख्याल है कि वह नया स्टैण्डर्ड कायम करेंगी।

और आप अपनी बात भी तो कहिए मुक्तिबोधजी! मनोज ने

पूछी ना 'क्या आप फिर से न्यू थियेटर्स वाली आग जगा सकेंगे ?

क्यों नहीं ? काम करने वाले पर नहीं यह तो काम लेने वाले पर निर्भर है। हम तो इतना ही कहेंगे मुक्तिबोध अभी जिन्दा है और वह मरेगा नहीं। वह तो कला से ही जी रहा है और अब वह कला से ही अमर हो जायगा।

कई ओर से ऐसी आवाजें आई कि इरा शायद जान-बूझकर नहीं आई। पर मना भी तो अब तक नहीं आई थी।

फिर किसी ने कहा 'जयन्त भाई आपके म्यूजिक डाइरेक्टर कहाँ रह गए ?

सात हजार वाला म्यूजिक डाइरेक्टर मुहूर्त पर भी अवश्य पधारे यह कुछ जरूरी तो नहीं। मनोज ने मुक्तिबोध के समीप आकर कहा।

मुक्तिबोध ने यह किस्सा छेड़ दिया कि जिस जमाने में मना देवी ने गाना सीखा और मुजरे में नाचने का अभ्यास किया तो उस्ताद लोग बड़ी मुश्किल से कोई गुर बताते थे। मना देवी ने एक बार आपबीती सुनाई थी कि पहली बार मुजरे में गलत कदम उठने पर तबले वाले ने सबके सामने उनके गाल पर तमाचा जड़ दिया था। कहते-कहते मुक्तिबोध ने विचित्र-सा मुँह बनाकर कहा वह भी क्या जमाना था !

इसके उत्तर में किसी ने कहा मगर तबले वाले हैं ये लोग इन्हें कुछ न कहो !

मनोज बाबू बोले अब हमारे जयन्त भाई मना बाई पर तो फिल्म बनाने से रहे।

उसकी समझ नहीं पा रहा थी कि दास कहाँ रह गया। मना नहीं आई इसका तो उसे बहुत अफसोस नहीं था। फिर भी वह घबराई नहीं। यह तो बल्कि जयन्त से कह रही थी 'मुहूर्त में जितने लोग आये उनसे कम लगते हैं जो नहीं आ पाए, उनकी कोई मजबूरी रही होगी।

मुहूर्त की धरती में सफलता का बीज फूटता है। जयन्त ने उपस्थित मित्रों का धन्यवाद किया 'एक जमाना कहता है—किसी की

पीठ पर हाथ फेरो उसका दिमाग मासमान पर चढ़ने लगता है। माप
मिश्रा का मनेक धन्यवाद ! आपने हमारी पीठ पर हाथ फेरा आपने
हमारे दिमाग का मासमान पर चढ़ने का मौका दिया।

इस पर सबने तालियाँ बजाइ मौर उन सबकी नजरें मिठाई नमकीन
मौर चाय की तरफ जा पड़ी।

चाय मारम्भ हो गई। किसी न कहा मना देवी क न माने स हम
घाटे म रहे। वह मानी तो हम उनस उनकी प्रिय रागिनी जयजयवन्ती
मवश्य सुनत।

उवनी न टप रिकाडर लगाते हुए कहा यह है हमारी इस फिल्म
की सिगनेचर टयून ! इसके बारे म माप लोग जरूर अपनी राय दें।

एक-दूसरे की मोर देखकर सबने मौला-ही मागों म सिगनचर टयून
की प्रशंसा की।

'बलिहारी ! मुक्तिबोध चहक उठा 'मंगलाचार की प्रतिमा
भी महान।

जयन्त की खुशी का कोई मोर-छोर न था। उसकी बतायी कड़ी
जा रही थी। उसे मना की मब भी प्रतीक्षा थी। कहीं रास्ते म कार
एक्सीडेन्ट न हो गया हो! उसने उवनी के समीप होकर कहा।

सफलता भी क्या चीज है मनोज बाबू ? मुक्तिबोध ने प्रशंसा
का कबूतर उड़ाया जिन्दगी भर हम सफलता के पीछे भागने फिरते
हैं। हम कहीं ठिकाना नहीं मिलता। मौर जब मिलन पर माता है तो
झट मिल जाता है।

मटरिया प गिरा रे कबूतर मापी रात। किसीने चुटकी ली
क्यों मुक्ति बाबू इस गीत का क्या मतलब है ?

मुक्तिबोध ने झेंपन की जरूरत न समझी। सभी जानते थे कि
पिछले कई वर्षों स उसे कबूतर पालने का शौक है। वह मपनी हो बात
कहता चला गया 'कबूतर किसी मनजानी प्रेरणा के वशीभूत होकर
गगन म दूर-दूर तक उड़ता है। नहीं तो बताइए मापके पास क्या हुक्मनामा

है ? और अगर ठीक आधी रात के समय प्रेमिका की ही अटारी पर पहुँचकर प्रेमी को चिट्ठी पहुँचा देता है कबूतर तो इसमें बुराई भी क्या है ?

मुहूर्त के शोर में सभी बातें दब गईं। इतने में मना इरा और दास ने एक साथ प्रवेश किया।

सबने तालियाँ बजाकर उनका स्वागत किया।

इरा का दास के साथ देखकर मनोज सान्याल का रंग फीका पड़ गया।



बारह

नीनू नृत्य-कला के विकास की उस सीमा तक पहुँच जाने को उत्सुक थी जहाँ परम रस की अनुभूति हो सके। उसकी साधना चल रही थी। जीवन का सारा सुख दुःख नृत्य में उड़ेल दे, नृत्य में ही तिल तिल करके घुल जाय यही उसकी साध थी। विधिपूर्वक अर्जित कला का बम्बई के मीना-बाजार में कोई मान न हो सकता था। वहाँ तो विचित्र अराजकता का युग चल रहा था। उसको नृत्य का भोंडा उपहास ही कहा जा सकता था। चटक रंग, विलासमयी भाषा और अविवेकपूर्ण मुद्राएँ—यही तो फिल्मी नाच-गान की गाड़ी को आगे ले जा रही हैं। आगे या पीछे—यही नीनू हतप्रभ-सी सोचती रह जाती। फ़िल्मों में प्रत्येक नाच में रसिकप्रिया ही चाहिए यह क्यों? वहाँ तो अपरिपक्व कला की ही पूछ है। कला का शुद्ध व्यापक रूप कभी नहीं चलता। खोटा सिक्का चलता है असली नहीं। मीना-बाजार वाले ढंग विद्या में धनी हैं। निरुद्देश्य उछल-कूद को नाच कहकर आगे ठेल देते हैं। मीना-बाजार में रहने वाले मेरी दूकान को यहाँ नहीं न जा सकते। यह सब सोचते-सोचते उसे गोविन्द का ध्यान आया जिसे आज चाय पर बुलाया था।

उसके हाथ में सोवियत कविता पर लिखी गई छोटी-सी पुस्तक थी। विद्वान् लेखक ने यह सिद्ध कर दिखाया था कि स्वतन्त्रता के प्रति आग्रही कविता में जो छटपटाहट मिलती है उसका अन्यत्र कहीं जवाब नहीं।

नीग्रो-जनता ने गुलामी के दिनों में कविता को मुक्ति-संघर्ष का हथियार बनाया। उसने एक पन्ने पर छपी चार पंक्तियों के नीचे लाल पेंसिल से निशान लगाया—

> दास बनने की अपेक्षा
> मैं कब्रों में गड़ जाना चाहूँगा।
> मैं भगवान के घर जाकर भी
> स्वतन्त्रता की माँग करूँगा।

फिर उसने नीग्रो कवि पाल लारेन्स डनबर (१८७२-१९०) के सम्बन्ध में दी गई कुछ पंक्तियाँ पढ़ीं जिनमें बताया गया था कि वह एक लिफ्ट चालक था और लिफ्ट के ऊपर-नीचे आने-जाने की अवस्था में ही उसने अधिकांश कविताओं की रचना की थी। पाल लारेन्स डनबर की एक कविता की चार पंक्तियों पर उसने नीली पेंसिल से रेखाएँ खींचीं—

> हम मुस्कराते हैं प्रभु ईसा !
> किन्तु हमारी व्यथित आत्माओं की पुकार
> शायद तुम तक नहीं पहुँचती
> हाँ संसार कुछ और ही समझता है।

पुस्तक की भूमिका में बताया गया था नीग्रो-कवि क्लाउड मैके की कविता 'अगर मरना ही है तो' नीग्रो जाति के स्वतन्त्रता-संघर्ष का युद्ध-गान बन गई थी। उस कविता की इन पंक्तियों को माधू ने फिर लाल पेंसिल से रेखांकित किया—

> हमें अगर मरना ही है तो
> सूअरों की मौत नहीं मरना चाहिए
> जिन्हें गन्दे घरों में बन्दी बनाकर मारा जाता है।
> अगर हमें मरना ही है तो
> आओ साथियो हम शानदार मौत मरें।

माधो-कविता के संपादक ने विस्तार से बताया था कि कैसे नीग्रो

जाति को धीरे-धीरे राजनीतिक और सामाजिक सुविधाएँ प्राप्त होती गई और आज के नीग्रो-कवि का स्वर भविष्य का आशामयी आँखों से निहार रहा है—

अब हमारे सामने आने वाला कल है
जो दीपक के प्रकाश जैसा उज्ज्वल होगा।
बीता हुआ कल तो वह रात है
जो बीत चुकी है।

नीलू ने ये पंक्तियाँ बार-बार पढ़ीं। फिर उसने अपने बुक-शेल्फ से 'भारतीय कविता' का एक संकलन निकाला और बंगला कवि प्रेमेन्द्र मित्र की एक कविता का अनुवाद पढ़ने लगी जिसकी कुछ पंक्तियों को उसने लाल-नीली पेंसिल से जहाँ-तहाँ अलग-अलग रंगों से रेखांकित किया था—

मैं उन सब लोगों का कवि हूँ
जो जुटे हुए हैं धन्धों में
मन विलास को नहीं चुना
अपने शब्दों में छन्दों में
मैं उनका कवि हूँ जो—
लोहे लकड़ी मिट्टी में गढ़ते हैं
मैं उनका कवि हूँ
तरह तरह की चीज़ों को जो गढ़ते हैं
मैं मेहनत और पसीने के स्वर गाता हूँ
मैं अपने शब्दों को विलास को
मरयू नहीं दे पाता हूँ
धरती व्याकुल है
हल को ढोकर धान को
सागर की लहरें व्याकुल हैं
हास को समान को

पत्थरों के भीतर सोहा सोच रहा है जो
कोई यसनासी खोद खादकर
मम निकाल नहीं लेता क्यों ?
नदियों की इच्छा है
कि कोई उनकी छाती पर पुल बांध
फिर कसे समर्पित है कि कलम
मेरी बंधन गोभा साथ ?
म उन सब लोगों का कवि हूँ
जो जुट हुए ह पत्थरों में
मन विलास को नहीं चुना
अपन शब्दों में, छ ों में ।

नीनू न घडी देखी गाविन्न अभी तक नही आया । शायद भूल गया हो । उस यह सोचकर हँसी आ गई कि बम्बई क मीना-बाजार में खाना मिलना ही चलता है । गुरुव दत्तम् का शिष्य है ग्रास जिसन गुरुव क चरणों म बैठकर संगीत-साधना की । गाविन्द तो घर से भाग आया था । वह तो मशीन में बच्चा है । पर मीना-बाजार म अब भी म्यूजिक डाइरेक्टर की दूकान खोले बैठा है जैस उसम और दाग म कोई अन्तर ही न हो ।

त्रिवेणी अन्ना संगम क चौपाटी क समीप स्थित नय भवन म ही नीनू एक कमरे म रहती थी । छुट्टी का दिन था । उसन खिड़की स सागर का दृश्य देखा । उस लगा यहाँ तो सागर पालतू-सा प्रतीत होता है । सागर का असली हृदय तो जुहू में है । जुहू में सागर के साथ-साथ अमीरों क बंगल बन गए हैं । वहाँ बम्बई के नव ब्याह जोड़े सैर करने आते हैं । सुर सागर-तट पर दूर तक घूमते रहो । आपने थोड़ा ध्यान न रखा तो सागर की लहरें आपके कपड़ों को भिगो जायेंगी । सागर की लहरें अपन नाच म कभी छुट्टी नहीं लेतीं ।

खिड़की में खड़े-खड़े उसने पीछे मुड़कर दर्पण में अपना मुखड़ा

देगा। आज वह गुड़िया-सी सजी रहती थी। गोविन्दन अपना ही आदमी सही अपने घरवालों का पुराना मित्र सही फिर भी उसके स्वागत में नये वस्त्र क्यों न पहनती, जूड़े में फूल क्यों न लगाती? उसे ध्यान आया कि आज तो वरक्कला चला जाय। गोविन्दन का जाम सही छूटते ही यह प्रस्ताव रखूंगी कि उसे मेरे साथ वरक्कला जाना ही होगा।

नीचे से दरबान ने आकर बताया गोविन्दन बाबू चले गए हैं हमें देर हुई। नीलू वन से माफी मांगना।

और कुछ नहीं कहा? अकेले थे या साथ में कोई और भी था?"

अकेला नहीं था। तीन आदमी साथ था। बोला हम नीलू वन के पास आध घण्टे बाद आयगा।

नीनू 'अच्छा' कहकर चुप हो गई। दरबान नीचे चला गया।

आज उसे केरल की याद सताने लगी। अप्रैल का महीना करल में 'विशु' कहलाता है। आज के दिन केरल में नववर्षोत्सव के रूप में विशू उत्सव मनाया जाता है। कितनी श्रद्धा और आस्था चली आई है इसके पीछे! नारियल के झुरमुट भी खुशी से नाच उठते हैं। मंदिरों में हाथियों की सज-धज, सुनहले वस्त्रों से किया गया उनका शृङ्गार। गाजा-बाजा मन प्राण को पुलकित कर जाता है। आज से कोई सवा ग्यारह सौ वर्ष पूर्व त्रावणकोर के एक राजा ने 'मलयालम्' वर्ष चालू किया था।

उसकी आँखों में वरक्कला का चित्र उभरता चला गया। वरक्कला की सड़कें साफ-सुथरी हो गई होंगी विशू की खुशी में। घर आँगन गोबर से पुत गए। इमली से साफ कर लिए गए पीतल के बर्तन। बच्चों ने सागर-तट से सीप चुन-चुनकर कई दिन से बटोरना शुरू कर दिए थे। घर के बड़े-बूढ़ों ने कितना मना किया फिर भी कई दिन से नन्द सुथरों पर यह भूत सवार रहा कि घर के कोनों को कुरमंडियों और मशालों से सजाया जाय। पिछले वर्ष तो मैं भी वरक्कला में थी, विशू के दिन। किसान खेती-बाड़ी से छुट्टी पाकर मेले की धूमधाम देखते हैं।

सूर्यास्त होते ही नवयुवक अन्धेरे की बाट जोहने लगते हैं। मीलों तक ध्वाओं की आवाज़ें सुनाई देने लगती हैं। घर घर स्त्री पुरुष नारियल के पत्तों का जलती मशालें थाम लेते हैं। प्रतिक्षण कवि का नाम ले लेकर मशाला को ऊपर-नीचे घुमाते हैं। इस याद से नीलू पुलकित हो उठा। पिछले वर्ष तो वह भी गली के युवकों के साथ-साथ मशाल उठाए उन वृक्षों के पास गई थी जो पुराने होने पर भी फल प्रदान करने में असमर्थ रहे। नीलू ने पुलकित होकर सोचा—मैंने भी तो उन वृक्षों को मशाल दिखाई थी। वे गाछ लज्जित हो गए होंगे और अब के उनमें भी फल लगे होंगे। पूरे तीन घण्टे तक मैं युवकों के साथ मशाल लिए घूमती रही थी।

उसे माता पिता का स्मरण हो आया। पिछले वर्ष की तरह ही माँ ने घर के भीतर अपनी पद्मासिना की देखा-देखी छोटा-सा मन्दिर बनाया होगा। गोबर से पोतकर पवित्र किया होगा। इस मन्दिर में पीतल के कई दीपक रखे जायेंगे। उन दीपकों में विषम संख्या की बत्तियाँ रखेगी माँ। विधि के अनुसार सब सामग्री रखी रहेगी—धरती चावल नारियल धान के गहने चाँदी के सिक्के रामायण या महाभारत। पास में होगा सुब्रह्मण्य या विष्णु का चित्र। कटे हुए खीरे के दो टुकड़े भी रखेगी माँ! कन्हन आम और कच्चे चने और कलात्मक ढंग से सजा दिए जायेंगे। गुलहल-नील फूल भी तो सजाकर रखे जायेंगे। अच्छी तरह धुला हुआ सुन्दर किनारी का सफेद वस्त्र तह लगाकर फैलाया जायगा।

फिर उस गोविन्द पर ध्यान जाने लगा—अभी तक नहीं आया। अब आप क्या पीयेगा ? अब आया भी तो गाना गाएगा।

पर अकेला ही बैठकर ध्यान पीने लगा। उसे याद आया आज तो ब्रह्म-मुहूर्त में तीन बजे प्रातःकाल से ही घरवालों के गर्मी दान यजन लग होंगे। अगरबत्ती और भात की धुनिया के बीचों-बीच मन्त्रों का उच्चारण होने लगा होगा। उसका जो हुआ आज तो उस भी घर

समा में ही होना चाहिए था। आज रात प्रज्वलित मशालें वरकला के रास्तों पर पंक्तिबद्ध हो जायेंगी, भक्तगण अपने अपने घर के मन्दिर को उठाकर जुलूस निकालेंगे घर घर घूमेंगे।

उसे यह बात भी स्मरण हो आई कि विषु-कनोतम के समय गृह-स्वामी का होना परमावश्यक है। एक दिन पहले ही रुपए छोटे सिक्कों में भुना लिये जाते हैं जिससे उपहार बाँटने में सुविधा रहे। उपहार बाँटने का काम मामा चालू करता है जो घर के प्रत्येक सदस्य का नाम लेकर पुकारता है और हर किसी को एक एक सिक्का देता जाता है। वसे उपहार चवन्नी का भी हो सकता है और पाँच रुपये का भी। फिर यह बात याद आने पर कि गभ के सात चार मास से ऊपर के बच्चे को भी उपहार का भागी समझा जाता है वह मन-ही मन मुस्कराई। गोविन्दन उसे छेड़ता रहता था— नीलू तुम तो एक सा दा ही नहा होगी और दो से तीन तो फिर भला कैसे होगी।

चाय पीते-पीते नीलू का ध्यान वरकला पर घूम गया। विषु का आविर्भाव तो पहले-पहल ग्रामीण ज्योतिषी 'कनय्यन' के यहाँ ही होता है। वरकला तो गाँव नहा नगर है छोड़ देता है। गाँव की तरह वहाँ तो एक ज्योतिषी से काम नहीं चलता। वरकला के ज्योतिषी अपने अपने इलाके के घरों के लिए रात में देर तक बठकर भविष्यवाणियाँ तयार करते हैं जिनमें आगामी वर्ष का लेखा जोखा दर्शाया जाता है। अना वृष्टि महामारी अथवा ग्राम-देवता के कोप सरीखे सम्भावी कष्टों के निवारणार्थ यथेष्ट उपचार की आशा भी तो लगी ही रहती है और इस तरह वरकला के ज्योतिषियों के लिए विषु साल का सौभाग्य बनकर आता है।

नीलू की कल्पना में वरकला के किसान घूम गए जो विषु दिवस पर हल से खेत जोतने का श्रीगणेश करना शुभ मानते आए थे। विषु के दिन बीज बोने पर अच्छी फ़सल की आशा की जा सकती है। मानो वरकला बात रहा हो। और फिर वह यह सोचकर मानो किसी नशे में

झूम उठी कि आज रात वरकला के किसान ताड़ीखाने से गाते झूमते अपने घरों को लौटेंगे।

गोविन्दन अभी तक नहीं आया था। नीनू तनकर बैठ गई। आगे को कभी गोविन्दन को नहीं बुलाऊँगी चाहे वह सोने का आदमी ही क्यों न बन जाय।

नीचे 'कविता' खुली पड़ी थी। उसकी दृष्टि इन पंक्तियों पर पड़ी—

अब हमारे सामने आने वाला कल है
जो दीपक के प्रकाश जैसा उज्ज्वल होगा।
बीता हुआ कल तो वह रात है
जो बीत चुकी है।

फिर वह अगले कवि के इस विचार पर गौर करने लगा—

पत्थरों के भीतर लोहा सोच रहा है, जो
कोई मतवाली तोड़-ताड़कर
मुक्त निश्वास नहीं लेता क्यों?

इतने में गोविन्दन झूमता-झामता आ पहुँचा और पहले से माफी माँगकर उसने नीनू का मुँह बन्द कर लिया।

त्रिवेणी क्या संगम का मतलब छोड़ दो नीनू! वह गम्भीर होकर बोला, ये कविता तुम्हारी कला का मोल नहीं दे सकती।

तो त्रिवेणी को छोड़कर कहाँ जाऊँ?

मीना-बाज़ार में और कहाँ?

संगीत नृत्य और नाट्य—ये तीनों विषय 'त्रिवेणी' के आधार स्तम्भ थे। त्रिवेणी की नृत्य-अध्यापिका के रूप में नीनू ने दक्षिण में काफी ख्याति पाई थी। वह पूरब के कई शहरों में अपनी संस्था के विद्यार्थियों की कला का प्रदर्शन करने गई थी। देश के बड़े-बड़े नगरों में सभी प्रान्तों में उसने त्रिवेणी का पताका फहराई थी। फिर भी गोविन्दन को यह शिकायत थी कि वह 'त्रिवेणी' को 'वन्दन-कमला' को 'कलिका' कहकर तंग किया। यह बात नीनू को बहुत अखरी।

उसने छूटते ही भाषण आरम्भ कर दिया

तुम्हारा यह विचार एकदम गलत है गोविन्दन कि बम्बई केवल मीना-बाजार है। एक बम्बई के अन्दर कई बम्बइयाँ हैं। उनमें एक छोटी-सी बम्बई तुम्हारी फ़िल्मी दुनिया भी है जिसे मीना-बाजार कहते हैं। बम्बई की चेतना एक आरकेस्ट्रा है। इसमें उत्तर का भी हिस्सा है दक्षिण का भी पूर्व का भी और पश्चिम का भी। गुजरात की देन अधिक है या महाराष्ट्र की यह झगड़ा हमारे लिए नहीं। इतना तो हम मानते हैं पारसी भी बोलता है बम्बई की भाषा में। एक बम्बई लाल बाग और परेल है जहाँ मजदूर रहते हैं। किसी भी फ़िल्म स्टूडियो को सिर्फ गुजराती या मारवाड़ी सेठों का सट्टे में कमाया हुआ रुपया ही नहीं चलाता। उसे चलाते हैं टेक्नीशियन जो मजदूर हैं। मैं भी गई हूँ वहाँ मैंने अपनी आँखों से देखा है। एक बम्बई वरसोवा है जहाँ तुम इसलिए नहीं जाते कि वहाँ सूखती मछलियों की बदबू आती है।

हाँ हाँ नीलू! गोविन्दन ने खिसियाना-सा होकर कहा मैंने कब कहा था कि तुम मीना-बाजार को बिलकुल ही नहीं जानती?

फिर तुम कहना क्या चाहते हो?

गोविन्दन ने हँसकर कहा तुम कब तक शुद्ध और पवित्र कला के चक्कर में फँसी रहोगी नीलू? कभी तुमने यह भी सोचा कि आदमी को एक जीवन-साथी भी चाहिए।

'तुम्हारा मतलब क्या है?

'यही कि मेरा के लिए भी एकमी आठ गोविन्दन बरदार हाजिर है!

नीलू एकदम चिढ़ गई। वह कुछ नहीं बोली।

गोविन्दन ने स्थिति समझकर कहा 'मुझे माफ़ कर दो नीलू! तुम समझी नहीं! मैंने तो यह कहा था कि तुम्हारे साथ सच करने के लिए आज मेरी सेवाएँ हाजिर हैं।



तेरह

गोबिन्द को भैरव में गाये जाने वाले ये शब्द बहुत प्रिय थे और यह यह ध्वनि दोहराता पुनर्मिलन-सा हो उठा—दीपक की ज्योति घटी शशिमन की मजना ।

रात अभी शेष हो रहा था जब गोबिन्द ने समीप आकर भैरव का ठाट जगाया और आलाप लेकर वह राग के बोल पर आ गया

जागिए गोपाल लाल भोर भई अँगना ।
बाट को बटोही चलत पंछी चुगत चुगना
दीपक की ज्योति घटी शशिमन की मजना,
जागिए गोपाल लाल भोर भई अँगना ।

अभी वह जा के साथ सम पर आया ही था कि दादा ने आँखें खोल दीं ।

'वाह गोबिन्द, खूब गाया !' वे मुस्कराये, 'मैं तो सोच रहा था तुम्हें अपने गाने से चिढ़-सी हो गई है । तुमने तो भैरव की आत्मा जगा दी आज !'

'जागो ब्रज के पूत न सोयो !' गोबिन्द हँस पड़ा, 'जानते हो, यह भी उन्हीं भक्त गोबिन्द मतवार ने जिनसे नाम मैंने लिया था ?'

'पहेलियाँ तो न बुझाओ ।'

'सच्चा मैं हो कहता ऐसा हूँ । नानू ने मेरी बहू यहाँ का कि 'बिन्दु' इसके का मजा आ गया ।

'अच्छा तो कौन विनू' था ? बम्बई कब आया यह भी याद नहीं रहता कि विनू कब आता है और चला जाता है।

अभी तो और भी कई जाओगे बम्बई में। बस तुम्हें इरा मिल जाय, बस। और हमने भी अपनी इरा ढूंढ ली जिसके साथ हमने लव किया।

नीलू ? मैं ठीक हूँ आजकल ? नाथ उछलकर उठ बैठा, पर अगर मैं नीलू का मन पढ़ पाया हूँ तो याद रखना वह कभी तुम्हारे फन्दे में नहीं आयगी। मैं उसकी इज्जत करता हूँ।

पर श्री एस० आर० गोविन्दन अवतार तो नीलू की इज्जत नहीं करते। वह तो उससे प्यार करते हैं, प्यार! गोविन्दन हँस पड़ा, और देख लेना शायद तुम्हारी और इरा की जोड़ी बनने से पहले ही मेरी और नीलू की जोड़ी बन जाय। उम्र का अन्तर कम है या अधिक यह देखना मेरा काम नहीं।

तुम्हारा काम क्या है ?

वही जो तुम्हारा काम है। बस इतना अन्तर है ज़रूर, तुमने अपना काम पहले शुरू किया मैंने बहुत पीछे। या यह कहो कि तुमने यह रहस्य पहले समझ लिया और मुझे इसमें देर लगी।

कुछ कहोगे भी ?

'कह तो रहा हूँ। स्त्री चाहती है कि पुरुष दबाकर उसकी प्रशंसा के पुल बांधे। क्या मैं कुछ झूठ कहता हूँ ?

'बात तो सच्ची है। पर नीलू को समझने में तुम बिलकुल भूल कर रहे हो।

'मैं तुम्हें अपना जादू दिखा दूंगा। कल मैंने नीलू की बहुत प्रशंसा की। उसने भी मुझ पर रोब डालने के लिए नीलो-कविता सुनाई, फिर बंगला कविता का अनुवाद पढ़कर सुनाया। दोनों ही बकवास थीं। पर मैंने भी खोलकर नामू में 'टस्ट' की प्रशंसा की। मुँह और आँखों से उसे बधाई दी। उसने मुझे पपीता खिलाया। मक्खन और चीकू बच

म लगे हुए। मजा आ गया। यह एक कहानी पढ़कर मुझे सुनाने लगी। तमिल की कहानी है। नाम है 'संध्या की वेला'। लेखक हैं रंगनाथन।

तो तुमने उस कहानी की भी प्रशंसा की ?

क्यों न करता ? पर कहानी बुरी नहीं थी।

गोविन्दन ने वह पत्रिका खोलकर दिखाई जिसमें संध्या की वेला का अनुवाद छपा था। कुछ पंक्तियाँ नीचे पेंसिल से रेखांकित थीं जिन्हें दास ऊँची आवाज से पढ़ने लगा

हर साल उस देहाती नाटक में नकली दाढ़ी-मूँछ लगाकर हाथ में छड़ी ले और कुबड़े की चाल-ढाल दिखाकर ब्राह्मण नायक का पाठ लेने का हक गिरिजा के घर के मुख्य कुटुम्बन का ही था। यह चिन्नप्पन मानो कम्मती के भय के लिए ही जन्मा हो। प्रतिवर्ष नाट्य का पात्र वही लिया करता था और लो चोकर तमाशाइयों के दिल द्रवित करने में तो वह उस्ताद हो था। आसपास आठों गाँव तक उसका आलापालाप अपनी धाक जमा चुका था स्त्रियाँ उस पर ऐसा फबता कि कम सोच-समझ सहज उठतीं। चेहरा भी ऐसा खूब फूलन कि लोग एक अत्यन्त सुन्दर युवती ही समझ लेते।

यहाँ नीनू का भ्रमण थम गया और दोनों मित्र आनन्द से ही यह कहानी पढ़ने लगे।

दक्षिण भारत की यह सहज-सुन्दर झाँकी उन्हें पुलकित कर गई। ये नाटक-अभिनय दास को विरासत में और उनका बचपन इसी कला के आँगन में बीता था।

और क्या-क्या बातें हुईं नीनू से ? दास मुस्कराया।

'बस इन दिनों घूम। पहले मुशिदाबाद से यहाँ पहुँच। यहाँ दास की चाय पी। यहीं नगर मजिस्ट्रेट अपनी पत्नी रेवा के साथ बदल गए होंगे तो। मुशिदाबाद को उन्नत करने की प्रेरणा से पुरस्कृत रहा थी।

'और क्या न रे ?

नालू तो वरसोवा जाने की जिद कर रही थी।

मुखती मछलियों की बम्बू सूखन। और क्या रखा है वरसोवा में?

वह कह रही थी एक बम्बई में कई बम्बइयाँ हैं और उनमें एक छोटी-सी बम्बई है हमारी फिल्मी दुनिया यानी बम्बई का मीना-बाजार। वह मुझे वरसोवा ले जाकर दिखाना चाहती थी कि एक बम्बई यह भी है।

वह तो तुम वरसोवा जाये बिना ही मान सकते थे। क्या तुमने इससे पहले वरसोवा देखा ही नहीं?

देखा क्यों नहीं वरसोवा? और इसीलिए मैं साफ इनकार कर गया। मैं समझ गया नीलू को वरसोवा का सागर याद आ रहा है और मैं उसे छुट्टी दे गया।

'बहुत मजा आया होगा।

मैंने उसकी प्रशंसा का वह स्वाँग भरा कि लगता था उसे भी विश्वास होने लगा हो। तुम्हें याद होगा त्रिवेणी की ओर से पिछले दिनों नृत्य-नाटिका मधुमा और जल-परी' पेश की गई थी। हम तो उसे देखने नहीं जा सके थे। वह कहती रही—मधुमा शान्ति और सन्तोष का प्रतीक है और जल-परी ठहरी ऐश्वर्य और वैभव की देवी। जल-परी ने मधुमा का अन्तरात्मा छीन ली। फिर क्या था बेचारा वैभव और विलास के चक्कर में पड़ गया। शान्ति गई, सन्तोष गया प्रेम गया। और उनकी जगह आई पल-पल की व्याकुलता, क्षण-क्षण की अतृप्ति और हमेशा का हाहाकार। इस नृत्य-नाटिका की कहानी की मुख्य मद है कि मधुमा अपने पन्न जीवन को पाने के लिए व्याकुल हो उठता है। यही सम्पूर्ण इस नाटिका की जान है। मैं आराम से सुनता रहा। जल-परी तो तुम्हीं बनी होगी?—मैंने पूछ लिया और उसे मुस्कराते देखकर मैंने कह डाला—वाह! मधुमा मैं बना होता!

'तब तो वह प्रसन्न हो गई होगी?

क्यों कहा ? सुना नहीं चापलूसी से मित्रता और सचाई से शत्रुता उपजती है। कल रात मुझे पता चला कि चापलूसी नारी का आहार है।

आज तो तुम बड़े दार्शनिक हुए जा रहे हो। यह मत भूल जाओ गोविन्द कि किसी ने ठीक ही कहा है—प्रेम नाराजगी के समान छोटी बातों को बड़ी बनाता है। पर एक का बड़ा बनाना गगन के तारों को दूरबीन से देखने के समान है तो दूसरे का राक्षसों को खुर्दबीन से बड़ा बनाने के समान ! समझे ?

मेरे हाथ में तो दूरबीन थी मुस्कान कहा। नीनू का रूप मैं दूरबीन से ही देख सका। यह दूरबीन है चापलूसी जिससे नारी तुम्हारी तरफ सरकने लगती है। कहने-कहने गोविन्द हम पहले पहले मैं भी एकमो माठ गोविन्द अवतार था अब नीनू का प्रेमी। समझे ?

और क्या कह रही थी ?

कह रही थी—गोविन्द तुम मीना-बाजार वाला नकली चेहरा लगाकर मेरे पास मत आया करो। तुम तो उसके बिना ही अच्छे लगते हो। मैंने कहा—ऐसा ही सही नीनू ! मेरी खुशी तो तुम्हारी खुशी में है।

फिर क्या बोली ?

मुस्कराती रही।

और फिर तुम भी कुछ न बोले ?

तुम जानते हो यार ! तुमने प्रेम किया है। जब सागर हँस रहा हो जब प्रेमी सागर-तट पर घूम रहे हों जब जीवन में विश्वास आ रहा हो जब आँखों की भाषा काम करने लगे जब एक धड़कन में दूसरे धड़कन की आवाज सुनाई दे तब तो फिर कुछ कहने का नहीं रह जाता। सागर हँस रहा था जैसे कह रहा हो—मैं तुम्हारा साक्षी हूँ मित्र ! गुजार प्यार करो और वचन दो कि तुम एक-दूसरे का साथ सदा दोगे।

मेरे जीवन म भी आए हैं ऐसे क्षण गोविन्दन ! हमारी आकाक्षा को स्वर कौन देता है ?—प्रेम। हमारी चेतना म सहानुभूति का रग कौन भरता है ?—प्रेम।

लहरा का सगीत सुनते बाँह म बाँह डाले हम कुछ सागर-तट पर घूमते रहे—इधर स उधर उधर से इधर।

फिर क्या हुआ ?

नीनू वह गीत गाने लगी—बगाल का वही बाउल गान।

हाय बोला वही न—तोमार पथ ढाकाइया छ ! मैंने भी सीख रखा है उनस वह बाउल गान। वह तो मुझ को बहुत अच्छा लगता है। जैसा कि नीनू ने बताया गुनगुनाने के स्वर पर बगाल का बाउल परमावस्था म बालक गायक और नर्तक बनकर स्वय अनहद का प्रतीक बन जाता है। मदन बाउल रचित यह गान तो सुना है रवीन्द्रनाथ ठाकुर भी मस्त होकर गाया करते थ।

गाओ तुम भी हमारे साथ हाज डाक्टर !

यह मन पड़ा। मैं यहाँ क्या करता ? मेरे प्रमिया व बीच न मन्दिर बनना अच्छा है न मस्जिद। अपने-अपने नाग गम्भीर मुद्रा बनाकर बठ गया और गाने लगा

तोमार पथ ढाकाइया छे
मन्दिरे मस्जिदे।
तोमार डाक सुनि साँई
चलते न पाई
रुखाइया दाँडाय
गुरु ते मुरशिदे।
डुबाइया पाने यय अडाय
धस तो गद कोथाय दाँड़ाय
तोमार अभद साधन मरलो भदे।
तोमार दुयारे नानान तालां

पुरान कोरान तसबी माला
भेख पलट न प्रधान ज्वाला
कोंदेई मग्न मरे सदे।
[तुम्हारा पथ ढक दिया है
मन्दिरों ने मस्जिदों ने।
तुम्हारी पुकार सुनकर, साईं !
मैं चल नहीं पाता।
रोककर खड़े हो जाते हैं
गुरु और मुर्शिद।
जिसमें डूबकर मन जुड़ जाना चाहिए
उसीसे यदि जगत जलने लगे
बोल, गुरु ! फिर हम कहाँ खड़े हों
तुम्हारी अभेद साधना अब भाव से मारी गई।
तुम्हारे द्वार पर है अमल ताला
पुराण कुरान तसबी माला
भेष और सम्प्रदाय ही तो है प्रधान ज्वाला
सब से रो रो मरता है मदन ।]

गोविन्द बाबा तुम्हें विश्राम नहीं होगा आज ! नीनू की बड़ी बड़ी आँखें डबडबा आईं। उसने यह गीत एक से अधिक बार गाया। बाउल के लिए जैसे प्रेम ही जीवन है प्रेम ही संसार और प्रेम ही भगवान्। प्रेम में स्वयं को खो देना ही बाउल की साधना है। उसने एक और गीत भी गाया था। और वह अपनी डायरी खोलकर गाने लगा

तुमि सागर आमिई नदी
तुमि सबाधार मांझि।
कूल ना दिया डुबाओ यदि
ताओ आमि राजि।

[धोगो] तोमा हइत कूल कि
बड मरम कि आमार।
[तुम सागर हो तो म हू नया
तुम्हीं हो उसे खन वाले मांझी।
किनारे न लगाकर तुम मुझ डुबाना चाहो
तो भी मैं राजी हू।
तुममें खो जान की अपेक्षा किनारा अच्छा है क्या?
क्या यह मेरा बडा भ्रम ह?]

दास की आँखें डबडबा आइ। बोला हम इस भावना स बहुत दूर निकल आए हैं। देखा जाय ता यही सच्चा प्रेम है। पर हम तो इरा और नीलू क पीछे भटक रहे हैं। जिस मीना-बाजार म हम रहत हैं वहाँ बाउल गान की अनन्द पुकार हम पर असर नहीं करती। मीना-बाजार तो हमारे मन म दूसरी ही तरह की मस्तियाँ बो-बो जाता है गोबिन्दन! कभी-कभी मैं सोचता हू हम कहाँ ठिकाना मिलगा?

तो सन्यासी हो जाय। इरा स विवाह का विचार छोडो। मैं भी नीलू का ध्यान बिसार रहा हूँ। पर यह कैसे हो सकता है? मैं तो कर्मयोगी बनना चाहता हू। तुम्हें इरा मिले न मिल मुझे तो समझो नीलू मिल गई। थोडी कसर बाकी है वह भी पूरी हो जायगी। कुछ म वही सागर है जो बरपना म है। मेरे मना एव मन यही सागर हमारे प्रम का साक्षी होगा।

दास बोला बातें बातें बातें। ये बातें क्या कभी खत्म नहीं होंगी? चलो चलकर कहीं मजेदार झाँकी भी जाय। यह कहकर मुंह-हाथ धोने चला गया।



चौदह

डूरा को याद आ रही थी नाग की बात जो उसने जाने किन महापुरुष का हवाला देकर कही थी— लक्ष्मी का आना नाचघर में भीड़ इकट्ठी होने जैसा है उसका जाना भी भीड़ के बिखर जाने जैसा ही समझो। असल हो तो आत्मा निर्धन होने पर भी धनी रहेगा और अगर असल नहीं तो धन-दौलत के रहते भी वह एकदम कंगला है! उस रात नाग को पाकर वह निहाल हो आयगी!

वह सौन्दर्य की मूर्ति के सामने खड़ी कंघी करती जा रही थी। दर्पण में उसकी रूप-माधुरी स्वयं उसे भी आज कितनी प्रिय लग रही थी। बनाव सिंगार तो जरूरी है यह सोचकर वह मुस्कराई। स्त्री में नारी की जीत है। दर्पण झूठ नहीं बोलता। एक मोहक स्वीकार में जरा मुस्कराऊँ बस इसी पर नाग मस्त हो उठता है। टांगें उठाकर वेनस्थिता में उसको मार दूँ और फिर पोज सजाकर आँखें झुका लूँ फिर तो गजब हो जाता है। मैं देख रही हूँ जनाब! कोई ऐसी वैसी औरत नहीं! यह तुम्हारी खुशकिस्मती है मिस्टर नाग कि मैंने तुम्हें दिल दे डाला। जरा ठीक हो जाय सारा बदन। फिर देखना किस तरह कितना अखबार और मैगजीन स्याह खबरें उछालता है। दरअसल नाम जाना हो तो पहले बदन दो! तुम्हें कोई अवतार न होगी। मैं तुम्हारी कनीज बनकर रह के तो आदमी मुश्किल में हो। डायरेक्टरों और प्रोड्यूसरों का गुस्सा सहना था। जल्दी होना मेरी मुस्कानें सारा के बाद भी उनका तरह

लपटेंगी पतंग की तरह ही! फिर न बुरा मानना जनाब! मीना-बाजार में ऐसा ही होता रहेगा।

एक उचटती-सी नजर से माँ-बेटे की मूर्ति देखकर वह फिर कुछ सोचने लगी। उसकी स्मृति की खिड़कियाँ खुलती गईं। पास वाली अलमारी में उसके चाहने वालों के असंख्य पत्र पड़े थे फाइलों में सँभालकर रखे हुए। उसके अभिनय की प्रशंसा में दुनिया के हर कोने से पत्र आते रहते हैं। उसने सोचा विवाह के बाद भी इन पत्रों की कड़ी तो बन्द नहीं होगी। फ़िल्म के पर्दे पर मैं वैसे ही मुस्कराया करूँगी। वैसे ही लोग मुझे पसन्द करेंगे। वैसे ही कहेंगे—क्या रूप पाया है! क्या नखरा है! ये नाज ये अदाएँ ये सब इसी पर खत्म हैं! कम्बख्त शोख इतनी! जादूगरनी! अंगड़ाई लेना तो कोई इससे सीखे! उसने कभी करते करते मन-ही-मन अपने इन प्रशंसकों को सम्बोधित किया—शादी करने पर भी मेरा अभिनय मरेगा नहीं। मेरा रूप तो और भी निखर जायगा। अभिनय जादू है तो शादी के बाद भी वह उसी तरह सिर चढ़कर बोलता रहेगा। ओ मेरे प्रशंसको मेरा अभिनय तुम्हारी पूजा में पग घुँघरू बाँध नाचेगा जैसे मीरा नाची थी अपने गिरिधर के सामने! पर मेरे प्रशंसको मुझे माफ कर देना। मैं शीघ्र ही विवाह करने जा रही हूँ ताकि हमारा प्रेम एक गप बनकर ही न रह। किसी ने कहा है न—अपनी भूलों को ही लोग अनुभव का नाम दे दिया करते हैं! पर मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ मेरे प्रशंसको! मैं कोई भूल करने नहीं जा रही हूँ। विवाह को मैं भूल नहीं कहूँगी जीवन भर! और उसकी दृष्टि माँ-बेटे की मूर्ति पर जम गई।

कमरे की ठण्डी-ठण्डी हवा थम रही थी। उसने खिड़की से बाहर की ओर देखा। नरीमान पॉइंट तक उसकी दृष्टि फिसलती चली गई। उसे लगा जैसे कोई प्रशंसक पूछ रहा है—'आप की तो इस? और वह मुस्कराकर कुछ कहती रहा। दर्पण झूठ नहीं बोलता। इस तुम सचमुच अत्यन्त सुन्दर हो। जैसे यह दर्पण भी नहीं, किसी प्रशंसक की

आवाज़ हो—तुम कितना भुलक्कड़ हो इरा ! अरे तुम्हें इतना भी पता नहीं चलता कि चाय का वक्त हो गया।   और फिर उसे लगा कि उमर किसी दूसरे अहसास का आवाज़ उसके कानों के पर्दों पर थाप लगा रहा है

ऐंड इन ऐंड आउट, एबव एबाउट बिलो
इटस नथिंग बट ए मैजिक शैडो शो
प्लेड इन ए बाक्स, हूज कैंडिल इज दि सन
राउंड विच वी फैन्टम फीगर्स कम एण्ड गो !

उमर खय्याम की रुबाई का यह अनुवाद इरा को बहुत प्रिय था। पर इस समय जब वह मन में विवाह करने की बात सोच रही थी रुबाई की भावभूमि उसे अस्पष्ट सी लगी—और अन्दर-बाहर ऊपर नीचे कहीं और जादू के एक छाया-नाटक के सिवाय कुछ नहीं है जो खेला जा रहा है एक बक्स में जिसमें सूरज का दीया रोशन है जिस के चहुँ ओर हम छाया आकृतियों-से घूम घूम जाते हैं !   क्या प्रेम भी मात्र एक छाया है ? नहीं नहीं नहीं ! इरा आज चिल्लाकर कहना चाहती थी—प्रेम तो महा सत्य है। बाँसुरी-सी बज-बज उठता है प्रेम गीला !   उसकी कल्पना में उसके प्रेमियों की छाया आकृतियाँ घूमने लगीं। आकृतियाँ बात रही थीं—तुम इरा हो। हम जानते हैं तुम हर सता-सा घूम घूम उठती हो !

इरा ने हँसकर कहा—तुम झूठ नहीं बोलते ! अन्त घुमा-फिराकर उसने चाय बाग स्मृति में अपना मन का पिछला भाग लगा। यह है दो दशकों का जादू। उस समय अतीत और वर्तमान की दो दशकों का जादू है। गाता है गर्जित है ! वर्तमान के स्पर्श से अतीत को देखा जा सकता है। अतीत का सारा ज्वार-भाटा जितना जुड़ता अन्दर के भाव-नाद बने रूप नवदिन-नाद और उन्हें डुबाकर सागर की लहरों में खेलता रहा। इसी तो क्या है। क्या अतीत क्या वर्तमान ! अतीत के कीर्ति चिह्न तो सामने की दूध-गाछ है। सारा विश्व कीर्ति-चिह्न में

वनमान शुरू है मिस्टर दास ?—यह सवाल तो दरा पूछ ही सकती है। देखना विवाह के बाद मुझे अभिनय छोड़ने को मत कहना। कमल पोखर के पास हम चलेंगे, पोखर के जल पर मुस्कान बिखेरते कमल तो हम फिर भी देखा करेंगे। फिर भी तुम एक कमल मेरे जूड़े में खोंस सकोगे। पर मिस्टर दास मुझे अभिनय छोड़ने को न कहना। अभिनय ही मेरा जीवन है। अपने प्रशंसकों को मैंने जो वचन दिया उसे तो मैं निभाऊँगी ही।

मशीन का पुरजा बिगड़ सकता है मिस्टर दास ! हमारी गाड़ी ठीक चलेगी। शादी तो एक ही बार की जाती है !

वैसे तो मैं जानती हूँ कि तुम्हारे जैसा पति मुझे मिल ही नहीं सकता दास ! हम एक से दो हो जायेंगे और दो से तीन

मुझे किसी डाइरेक्टर या प्रोड्यूसर के साथ हँसते देखकर अपना दिमाग मत बिगड़ने देना। झगड़ा मत करना। अनाप-शनाप जो जी में आये बकना मत। खुशकिस्मती समझो मैं तुमसे शादी करने जा रही हूँ। मेरी मीठी हँसी के लिए तो बम्बई का मीना-बाजार तरसता है। अब वह तुम्हारे लिए ही होगी। पर ऊपर से तो सबके लिए मुस्कराना होगा। यही तो दुनिया चाहती है। खफा मत होना। मुश्किल से मत रहे मिस्टर दास ! फिर तो गाड़ी चलेगा नहीं तो हम दोनों ही रोयेंगे आँखों पर हाथ रखकर। हम रोयेंगे नहीं। हम दुनिया को अपने ऊपर हँसने नहीं देंगे।

हम मिलकर सुख-दुख की बातें किया करेंगे गिन गिन जीवन का रस लेंगे। मुझे किसी के साथ हँसते देखकर कलेजे को मत फटने देना। लोगों को छी-छी मत कहने देना। क्या मिस्टर ! पहले से समझ लो। शादी कोई जोर-जबरदस्ती तो नहीं है। मिजाज ठण्डा रखना जरा अब है। तुम्हारे शान्त स्वभाव ने ही तो मुझे मोह लिया है।

पैसा तो अभिनय करने से ही मिलेगा। पैसा जरूरी है। पर ये

बिना गाड़ी नहीं चलती। कमायेंगे नहीं तो खायेंगे क्या? खायेंगे नहीं तो जीयेंगे कैसे? जीवन है तो प्रेम है!

कभी करते-करते उसके हाथ रुक गए। फिर वह साफ पर बैठकर अपनी डायरी पढ़ने लगी जिसमें कुछ पन्ने उसी दास ने अपने हाथ से लिखे थे और कह गया था कि वह देश-देश के महापुरुषों की इन सूक्तियों को पढ़कर उनके विचार समझ सकती है

—अच्छी स्त्री के साथ विवाह जिन्दगी के तूफान में बन्दरगाह है बुरी स्त्री के साथ बन्दरगाह में तूफान!

—विवाह से पहले अपनी आँखें खूब खुली रखो शादी के बाद आधी बन्द।

—विवाह जरूर करना। अच्छी पत्नी मिलेगी तो सुखी होगे और खराब तो तत्त्वज्ञानी। यह भी क्या खराब है?

—आज हम जिसे विवाह कहते हैं वह विवाह नहीं उसका आडम्बर है। जिसे हम भोग कहते हैं वह भ्रष्टाचार है।

—नारी संसार का सार है।

—नारी पति को मारती नहीं है पर नारी का मिजाज पति पर हुकूमत करता है।

—यह एक राय थी जिसे साधु पुरुष की मैं नहीं जानता कि दुनिया में केवल एक अच्छी स्त्री है और उसकी सलाह थी कि हर विवाहित आदमी को सोचना चाहिए कि उसकी पत्नी ही वह स्त्री है।

—प्रेम त्याग का रास्ता है।

—सब-कुछ प्रेम की खातिर और बदले में कुछ नहीं।

—प्रेम में हम सब समान स्तर में मुक्त हैं।

—प्रेम की भाषा आँखों में है।

—जिस प्रेम को प्रकट न किया जा सके वह सबसे पवित्र है।

—दूसरों से प्रेम करना स्वयं अपने से प्रेम करने के बराबर है।

—प्रेम और घृणा छिपाए नहीं जा सकते।

—प्रेम समय को गुजार देता है और समय प्रेम को।

—प्रेम झोंपड़ी को सोने का महल बना देता है।

—जीवन एक फूल है प्रेम उसका मधु।

—प्रेम वह सुनहरी जंजीर है जिससे समाज परस्पर बंधा हुआ है।

—सफलता का मार्ग बुद्धि से नहीं प्रेम से ही सूझता है।

—प्रेम प्रत्येक बात में विश्वास करता है आशा रखकर प्रत्येक दान सहता है किन्तु प्रेम कभी असफल नहीं होता।

—प्रेम में असम्भव सम्भव हो जाता है।

—प्रेम सबसे कर विश्वास थोड़ों पर कर नुकसान किसी को मत पहुँचा।

—प्रेम की भाषा सबकी समझ में आती है।

—अगर तुम चाहते हो कि लोग तुमसे प्रेम करें तो तुम प्रेम करो और प्रेम किए जाने योग्य बनो।

—धनवान होना अच्छा है बलवान होना अच्छा है पर बहुत से मित्रों का प्रेम-पात्र होना और भी अच्छा है।

ये सूक्तियाँ किसी एक पुरुष या स्त्री ने लिखी नहीं थी ये तो सभी के लिए थीं। किसी एक देश के विवेकशील प्राणियों ने ही इनमें अपना अनुभव नहीं उँडेला था इनमें तो देश-देश का युग-युग का विवेक बोल उठा था।

माँ की आवाज आई इरा नाश्ते के लिए नहीं आयेगी?

चाय की मेज पर इरा अनहोना हँसती रही। माँ चौकन्नी-सी होकर बोली आज कैसी दोस्ती हाथ आ गई?

फिर नीचे से दास जोना चढ़ता-चढ़ता हाँफता हुआ-सा आ पहुँचा।

हम भी नाश्ता चाहिए यह बोला।

नाश्ता लेते समय वह एकटक इरा की ओर देखता रहा। आज उसे लोनेपन में इरा बहुत सुन्दर लग रही थी। कानों में सोने के झुमके झाग डोल जाते जैसे वे इरा के विचारों पर ताल दे रहे हों।

इरा तो बार-बार उसकी ओर देखकर उसके प्रेम का उत्तर दे रही थी।

इरा आज तो तुम बहुत सुन्दर लग रही हो।

इरा हँस पड़ी।

माँ बोली अपनी सम्भावना आप करो बड़ा बना! हिम्मत मर्दा मदद खुदा!

और नरेन चीज़ छीनकर खाने लगा।

चीज़ के अच्छा खाई पर कहा वह मुस्कराया 'मुश्किल यही है कि इसे भी छानना पड़ता है। वैसे मन भी तो छिलके के नीचे छिपा रहता है।

इस पर इरा और माँ एक साथ हँस पड़ीं।



॥६९॥

श्याम का दिमाग एकदम ऊँचा उठ रहा था। इरा का प्रेम उसका स्वागत कर रहा है यह बड़ी बात थी। प्रेम का तत्काल पता चल जाता है। प्रेम हर विचार को सँवार निखारकर पेश करता है। सुंदर आकृति और भी सुंदर लगने लगती है। इरा संगमरमर की मूर्ति-सी हो रही लग रही थी। उसका मुखमण्डल कमल जैसा खिल उठा था। इरा की उपस्थिति में उसे कितना रस आता! इरा उसे मिलनसार समझती है उसकी समझ में यह बात तो कब की आ चुकी थी मानो वह उसके और अपने प्रेम को तराजू में रखकर तोल चुका हो। मुझे अब अपना तन-मन इरा को ही समर्पित कर देना चाहिए यह सोचता। इरा सच्चा है सौ में नहीं हजार में भी उस जैसी सुन्दरी मिलना कठिन है।

मानो सब रागिनियों में इरा ही परम सुन्दरी हो। उसकी गम्भीर और व्यावहारिक मनोवृत्ति ने उसे मोह लिया था। कहीं भी तो कृत्रिमता अथवा कुरुचि का इंगित न था। सब-कुछ सुरुचिपूर्ण था। रहन-सहन आतिथ्य सम्बन्ध—यानी खानदानी जायदाद ख्याति—इरा के पास सब-कुछ था।

मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा की जाती है। इसमें तो कोई असंगति नहीं। प्रेम मन का परम संस्कार है। प्रेम से ही मूर्ति की प्राण प्रतिष्ठा होती है। प्रेम ही परम आनन्द है परम उद्दीपन है। यह इस प्रसंग पर श्याम ही सोच रहा था जैसे उसकी सधी हुई अँगुलियाँ वीणा पर चलती थीं।

इरा में कितना उत्साह है, कितनी स्फूर्ति! आनन्द-विभोर हो-हो उठती है, तालियाँ बजाती है, आँखों में आँखें डालकर देखती है। काले-काले बाल लम्बे और घुँघराले, जूड़ा बाँधती है तो मेरा दिल हाथ से निकलने लगता है। सौन्दर्य की मूर्ति ने उसे मोह लिया। यह सब इसीका जादू है। चिरंजीवी इरा, तुम धन्य हो! उसे इरा के ओंठों की याद आ गई। इरा का मन्दस्मितानन कितना आह्लादमय है! गाती है तो बाँसुरी-सी बज-बज उठती है।

नरीमान-पॉइंट पर पूनम के ज्वार आने का खेल देखता नन्द बहुत देर तक बराबर बना रहा। जो रागिनी हमें अच्छी लगती है, उसे ही हम गाते और सुनते हैं, उसने सोचा। सौ चमत्कारों का एक चमत्कार यही है कि इरा मुझे अच्छी लगती है। उससे सुन्दर कोई दूसरी कन्या नहीं होगी बम्बई में। वह स्वयं मुझसे प्रेम करती है। चमत्कार! रागिनी स्वयं गायक से प्रेम करती है। सौन्दर्य प्राण प्रतिष्ठा करता है।

उसे याद आया, आज सवेरे जब वह इरा के यहाँ गया था तो इरा ने अपने हाथ से एक बादाम छीलकर उसके मुँह में डाला था।

सागर की लहरें नरीमान-पॉइंट से टकरा रही थीं। नन्द सोच रहा था, इरा के पलंग की बत्तियाँ जल रही हैं। वह अपने कमरे में बैठी पुस्तक पढ़ रही होगी। शायद वह यही पढ़ रही होगी कि चाँद की किरणें सागर में मग्न होने की कामना रखती हैं। वह पढ़ रही होगी कि जब मनुष्य प्रेम करता है तो वह किसी देव-मूर्ति से कम नहीं होता। वह पढ़ रही होगी कि दिल की आग में दिमाग को घुलना पड़ता है। सागर से बड़ी चीज़ है आकाश, आकाश से भी बड़ी चीज़ है मनुष्य की आत्मा—यह सूक्ति भी तो इरा ने अवश्य पढ़ रखी होगी। आज सवेरे जब मैंने किसी का यह शेर दुहराया—दुनिया में जुड़वाँ आत्माएँ नहीं हैं! तो उसने चौंककर मेरी ओर देखा, जैसे वह अपनी असम्मति प्रकट कर रही हो। तो क्या वह अपनी और मेरी आत्मा को जुड़वाँ समझने लगी है?

आज सवेरे चाय पीते-पीते मैंने इरा से पूछा, क्या तुम्हें किसी

विवशहीन प्राणी का यह बात पसन्द नहीं—'एक आनन्दमय मनुष्य से मिलना सो रुपये का नोट पा जाने से अच्छा है ! तो वह गम्भीर मुह बनाकर बैठी रही जैसे यह बात उसके गले न उतर रही हो।

मैंने कहा—इच्छा से दुख आता है ! वह हसकर बोली—क्या मेरी इच्छा पालन की बड़ है ? मैंने कहा—जो लोग इतिहास के प्रसंग बनते हैं उन्हें इतिहास लिखने का अवकाश नहीं होता। वह कनखियों से देखकर बोली—आजकल सूक्तियाँ रटी जा रही हैं तोते की तरह ?

आज दिन के समय मेरे साथ घूमते हुए इरा ने कह दिया कि उसका प्रेम मुझे समर्पित है। मैंने भी खोजती आँखों से उसके मन में झाँकने का यत्न किया था। तो क्या मैंने इरा को जीत लिया ? यह मेरी जीत है या मेरे संगीत की ?

पूनम रश्मियों से सागर की लहरों में जो उथल-पुथल हो रही थी उससे कहीं अधिक मादक-सी अनुभूति इरा के दिल और दिमाग को झकझोर रही थी। प्रेम भी विलक्षण वस्तु है। 'जीवन की सबसे प्रबल भावना है प्रेम !' यह बात इरा के मुह से निकल गई आज। और इसके उत्तर में मैंने कहा प्रेम करना मैं कब सहज था न आज। वह फिर बोली प्रेम के कारण ही इन्सान का भविष्य है ! प्रेम के बिना कुछ नहीं क्योंकि प्रेम के बिना न जीवन है न भविष्य !

आज न जाने क्यों इरा मेरे बचपन की बातें पूछती रही और यह भी मालूम करती रही कि मेरे पिता कहा मॉन्टेसेट की पीतल की मूर्ति कैसे बनाते हैं। यह भी पूछती रही कि गोविन्द इतना चतुर क्यों है और मैं कैसे भोली प्रकृति का हूँ। वह गुरुत्व के बारे में भी दूर तक पूछती रही। उनकी आत्मकथा की साहित्यिक विशेषताओं पर तर्क वितर्क करती रही। शायद वह मुझे समझने के लिए ही यह सब पूछ-सुन रही थी। कभी मेरी संगीत-साधना की प्रशंसा में खो जाती कभी यह यह कहकर गम्भीर हो जाती— 'राग रात आते हैं हमसे भी हैं ! फिर वह मुझे समझाती रही— मेरा दिल पत्थर का नहीं है। बाहर से मैं सदा

हँसती रहती हूँ भीतर से मैं रोती हूँ। मैं हँसता हुआ रागिनी नहीं रोता हूँ रागिनी हूँ। मैंने हँसकर कहा — तुम्हारे रोने से मेरे राग भी रोने लगेंगे।

हीरा का आम-विश्वासयुक्त माँसल मुख मण्डल इस समय उसकी कल्पना को छू जाता था। उसने पूनम के चाँद की ओर देखा सागर की लहरों का गर्जन-तर्जन सुना। यह दृश्य तो बहुत बार देखा था। इस ढंग मारवाड़ी और गुजराती सेठों का ध्यान आया जो सट्टे के बाजार में रुपया कमाते थे और फिर इस रुपये से बम्बई के मीना-बाजार में फिल्म-कम्पनियों की रंगशाला में पड़ाव डालते थे। पैसे का जोर नोट सेठ का काम था। एकटूना का रूप-माधुरी के रसिया ये सेठ। मीना बाजार की गप-शप में सेठ का नाटक न कैसे न रहता? हीरा ने भी यह बात पूरी कही न! कि सेठों की बातें ज़बान पर आती हैं।

तुम्हें देखकर तुम्हारी बातें सुनकर मेरी मन-वीणा के तार बज उठते हैं! हीरा ने आज कह ही तो दिया। मैंने सब सुन-मन लिया। कह रही कहना चाहती थी कि सेठों की बातें किसी सेठ की तरह ज़बान चलाती नहीं है।

हीरा आज बहुत प्रसन्न था। गत रागिनियों की ... में उतरने के लिए आज उसने ... की थी। आज से पहले कभी उसने राग-रागिनियों के बारे में इतनी दिलचस्पी नहीं दिखाई थी। आज उसके यार दोस्त ... में बँधे हुए थे। आज उसकी ... कितनी सुन्दर लग रही थी! उसने कैसा लिया है कि मैं ... की तरह चतुर नहीं। मुझसे गोविन्द ने कहा ... ना होता तो ... ने मुझे ठुकरा दिया होता।

आज शहर का जन-स्थान ... पैर पसार ... पर ... । आज की साँझ क्या मैं ... हूँ? हीरा का ... मुझे मुग्ध कर ... । ... कहूँ ... उसमें सुना है ... मिली

भौर साना की प्रेम-कथा क्या मैं कभी भूल जाऊंगा ?

दोपहर के समय धारी मियाँ और सोना की कथा सुनाई दरा ने। साहनी रागिना के रसिया थ धोरी मियाँ जो आधी रात की रागिनी है। वह मस्ती चली गई थी धारी मियाँ मुलतान म थ और उन्होंने टप्पा ईजाद किया था। लखनऊ की नतकी थी साना। मुलतान स चलकर धारी मियाँ लखनऊ आय। साना की ख्याति सुनकर आम थ। उसम मिल तो प्रेम हो गया। लोगो न साना स कहा—धोरी मियाँ तुम्ह दिल स प्यार करते हैं तो तुम उनसे कहो अपने सीने पर गरम-गरम तवे बाँधकर परीक्षा दें। धारी मियाँ न यह बात मान ली। गरम-गरम तव बाँधत ही व मर गए। उनके पीछे साना भी पागल हो गई। बहुत स लोग यह मानत हैं कि साहनी के ये पजाबी भाषा क बाल धारी मियाँ क ही रच हुए हैं जिन्हें उत्तर भारत के गायक आज भी गात हैं।

उसन सोहना क बोल मेरी डायरी म नोट कर लिए थ

जा व मियाँ केहीयाँ कीतीयाँ
तू साडे नाल बुराइयाँ !
असाँ हस्स हस्स तडडे नाल
यलडीयाँ लाइयाँ ! जा वे मियाँ
[जा रे मियाँ, कसी की
तमन हमारे साथ बुराइयाँ !
हमन हस हसकर तुम्हारे साथ
प्रीत लगाई ! जा रे मियाँ]

आधी रात का समय ता नहीं हुआ था। पास बैठा सोहनी का यह बोल गुनगुनाता रहा। डायरी म दोनों के बोल उसन लिख लिए थ। अब ता लगता था जस वह अपनी ही भाषा म रागिना गा रहा हो।

यह सोचने लगा—दरा ने आज धोरी मियाँ और सोना की कथा मुझ क्यों सुनाई ? शायद वह यही समझाना चाहता था कि अब गरम गरम तवे मन से बाँधकर परीक्षा दने का युग बीत गया। मैं भी ता

अपने साथी मियाँ का पाला चाहता हूँ ऐसा जीवन में !

वह मन्त्रमुग्ध-सा बैठा रहा।

पूनम का चाँद मुस्करा रहा था। सागर की लहरें मानो अपना माया में बह ना रही हों—यह कहता ऐसा सागर में याद्र निकली था !

उसे इरा का याद सताने लगा। उसने घूमकर इरा के फ्लैट पर नज़र डाली। वहाँ अँधेरा था। क्या इरा अभी सो गई नहीं? इरा भी क्या यही सब सोच रही होगी जो मैं सोच रहा हूँ? इरा के बाल रेशम के लच्छे हैं। मैंने उन्हें छूकर देखा है। वह चाहती है हम एक से दो हो जायँ और दो से तीन... वह आगे कुछ न सोच सका। पूनम की किरणें मुस्कराती रहीं। सागर की लहरें उसी तरह नरीमान-पॉइंट के पत्थरों से टकराती रहीं।

इरा के स्वर में आज कितना उतार चढ़ाव था जब वह एलिफन्टा गुफा की त्रिमूर्ति के सामने खड़ी मुझसे बातें कर रही थी। और भी दर्शक मौजूद थे। आज इरा कितनी सुन्दर लग रही थी उसकी आँखें कुछ और ही भाषा बोल रही थीं।

मैंने आप-ही-आप कह दिया—इरा, मैं तुम्हारे जितना निश्चित नहीं हूँ। शायद मैं तुम्हारे योग्य सिद्ध न हो सकूँ।

वह बोली—निराशा एक ही तरह की नहीं होती। तुम अपनी निराशा की कमी पूरी कर चुके हो नरेन!

मैंने कहा—हम जल्दी न करें। पूरा विचार कर लें।

वह बोली—मैंने तो सब विचार लिया। सारी बात सोच ली। हम एक से दो होकर दुनिया नयी बसा रचना। हमारा प्रेम निश्छल है।

मैंने कहा—सुन्दर चीज़ तो सुन्दर ही रहती है।

वह बोली—सुन्दर भी और पवित्र भी। मैं तुम्हें अच्छी तरह समझती हूँ नरेन! क्या तुम मुझे नहीं समझते?

मैंने कहा—समझता क्यों नहीं, मैं तुम्हें खूब ही समझता

है इरा, जैसे मैं किसी रागिनी को समझता हूं। और जब भी रागिनी में शुद्ध स्वर लगाये जाते हैं तो वह पवित्र होती है।

यही तो मैं भी समझती हूँ। चिरकाल तक चलेगी हमारी कहानी। हम एक-दूसरे के साथ न्याय करेंगे। हम निर्माण करेंगे जिन मतवाले हाथों ने और विवेकशील दिमाग ने कभी यह त्रिमूर्ति बनाई थी।

मैंने कहा—क्या यह सच है इरा कि प्रेम आदमी को निर्माणशील बनाता है? यह कैसी अनुभूति है? सच्चे प्रेम में कभी तू-तू मैं-मैं की नौबत भी आ सकती है? यह मेरा दिल न मानता इरा! यही देखना होता है कि रागिनी में उसीके सच्चे सुर स्वर लग रहे हैं।

वह बोली—भविष्यवक्ता होती है सच्ची रागिनी। वैसा ही प्रेम है।

मैंने कहा—अभी और देख लो इरा! कहीं अन्धेरे में भूल न हो जाय।

वह बोली—मैं किसी फिल्म के साउण्डट्रैक पर साइन तो नहीं कर रही। मैं कोई रोल नहीं पढ़ रही।

यहाँ और पूनम की चाँदनी थी। सागर अपनी मस्ती में बोल रहा था। उन लहरों से बातें करने लगा—इरा का स्वर अति मधुर है। और इस के मधुर स्वर में एक राग गहरा है सागर की लहरो! बहुत जल्द हम एक से दो होकर रहेंगे।

उसने चाँद की ओर देखा।

चाँद मानो स्वीकृति में मुस्कराया।

सागर की लहरें हँस पड़ीं।

'क्या मेरी बातों में तुम्हें कोई असंगति दिखाई दी सागर की लहरो?"

सागर की लहरें फिर हँस पड़ीं।

मैं इरा से प्रेम करता हूँ सागर की लहरो! इस मानो-व्यापार

हूँ इरा जब मैं किसी रागिनी को समझता हूँ। और जब भी रागिनी में शुद्ध स्वर लगाये जाते हैं तो वह पवित्र होती है।

यही तो मैं भी समझती हूँ। विश्वास तब बनेगी हमारी कहानी। हम एक-दूसरे के साथ न्याय करेंगे। हम निर्माण करेंगे जब कलाकारों हाथों ने और विवेकवान दिमाग ने कभी यह त्रिमूर्ति बनाई थी।

मैंने कहा—क्या यह सच है इरा कि प्रेम आदमी को निर्माणशील बनाता है? यह कभी अनुभूति है? सच्चे प्रेम में कभी तू तू मैं-मैं की नौबत भी आ सकती है यह मेरा दिल नहीं मानता इरा! यही लगता होता है कि रागिनी में उसीके सच्चे खरे स्वर लग रहे हैं।

वह बोली—भविष्यवक्ता होती है सच्ची रागिनी। वैसा ही प्रेम है।

मैंने कहा—अभी और देख लो इरा! कहीं जल्दी में भूल न हो जाय।

वह बोली—मैं किसी फिल्म के कान्ट्रेक्ट पर साइन तो नहीं कर रही। मैं कोई सौदा नहीं पटा रही।

चहुँ ओर पूनम की चाँदनी थी। सागर अपनी वाणी में बोल रहा था। श्याम लहरों से बातें करने लगा—इरा का स्वर अति मधुर है। और इरा के मधुर स्वर में एक खास गहराई है सागर की लहरो! बहुत जल्द हम एक मन हो होकर रहेंगे।

उसने चाँद की ओर देखा।

चाँद मानो स्वीकृति में मुस्कराया।

सागर की लहरें हँस पड़ीं।

क्या मेरी बातों में तुम्हें कोई असंगति दिखाई दी सागर की लहरो?

सागर की लहरें फिर हँस पड़ीं।

मैं इरा से प्रेम करता हूँ सागर की लहरो! इरा मानो-बाजार

म रहती हुई भी मीना-बाजार म खो नहीं गई। वह उसस अलग है। हमारे बीच कोई दीवार न होगी—न बनावट न धोखाधड़ी। हमारी भाषा दाम्पतीत को पकड़न का जतन करेगा। एक-दूसर को धन्यवाद दन की जरूरत न होगा। इतिहास के पदचिह्न कोई नहा मिटा सकता। साधना फलवती होकर रहती है, ऋतु-चक्र की तरह चलती है। सुन रही हो न सागर की लहरा ?

सागर की लहरें फिर हस पड़ी। रात आधी स ज्यादा बीत चुकी थी। गाब उठकर खड़ा हो गया और अलसाई आंखा और थके परों से मरीन ड्राइव की ओर चल पड़ा।



सोलह

जयन्त ने पुण्य का भागी होने की ठान ली थी। इरा और दास की जोड़ी बनने में अब अधिक देर न हो इसके लिए उसने एक स्कीम बनाई। उसकी कोशिश थी कि बात सभी सुनें जब विवाह हो जाय।

इरा हमारे मेहमान तब तक रहेगी डार्लिंग! उसने अपनी पत्नी से कहा हमारा तो लाभ-ही-लाभ है। यह जोड़ी हमारी फिल्म कम्पनी का ही पहल किया करेगी।

पर हम स्वार्थ की दृष्टि से ही क्यों देखें?

स्वार्थ की आरती उतारने वाले हम अकेले तो नहीं। बिजनेस की बात तो देखनी ही पड़ती है। वह आत्मा के पागर में लिपा है यह कमन डार्लिंग!

आत्मा के पागर की भी एक ही रही! उसकी हम पर्वा नहीं छोड़ो यह बात। हम अपनी पिक्चर का काम अब धूमधाम से शुरू कर देना चाहिए।

पिक्चर का नाम तो मैंने सोच लिया।

क्या?

जालन्धर।

जालन्धर तो पंजाब का एक नगर है न!

तो तुमने नहीं सुनी जालन्धर की कहानी? यह एक अति पुराना कभी प्रकाश हुआ है। शिव के तृतीय नेत्र की अग्नि में उसका जन्म

रखा था।"

'वह कैसे ?'

शिव के दर्शनार्थ एक बार इन्द्र कैलाश गये। वहाँ एक भयंकर पुरुष बैठा देखा। इन्द्र बोले—तुम कौन हो? उत्तर न पाकर इन्द्र ने उस पर वज्र प्रहार किया। इस प्रहार से उस पुरुष का कण्ठ नीला पड़ गया।

क्या स्वयं शिव ही था वह पुरुष ?

बिलकुल ठीक। हाँ तो वज्र-प्रहार से शिव का भाल स्थित तृतीय नेत्र भी खुल गया और अग्नि की ज्वाला निकलकर इन्द्र को भस्म करने लगी। इन्द्र अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना करने लगे।

'बड़ी मुश्किल से बचे होंगे। पर तुम तो जालंधर की कथा सुनाने चले थे।

'सुनो तो। शिव ने वह अग्नि सागर में फेंक दी। उससे एक बालक उत्पन्न हुआ। बुरी तरह रोने लगा वह बालक। सारा संसार बहरा होने लगा। बालक की रक्षा हेतु ब्रह्मा आये। ब्रह्मा ने उसे गोद में लिया। बालक ने इस जोर से ब्रह्मा की मूँछ खींचनी शुरू की कि ब्रह्मा की आँखों में पानी आ गया। ब्रह्मा ने उसका नाम जालंधर रखा और वर दिया कि शिव के अतिरिक्त उसे कोई नहीं मार सकेगा।

जय जालंधर ! उवगा हँस पड़ा।

एक मत यह भी है कि जालंधर की उत्पत्ति गंगा तथा सागर के संगम में हुई था। पैदा होते ही जालंधर अत्यन्त भयानक स्वर में रोने लगा। ब्रह्मा ने उसे असुरों का राज्य दिया। फिर जालंधर ने इन्द्र को परास्त करके वृन्दा नामक कन्या से विवाह किया।

'जैसे धावन इरा से विवाह करेगा। उवगा फिर हँस पड़ा।

'जालंधर के अत्याचारों से तंग आकर देवताओं ने विष्णु से प्रार्थना की। लक्ष्मी रोकती रही पर विष्णु गये। बहुत दिन तक युद्ध चला। अन्त में प्रसन्न हो विष्णु वरदान लेकर घर आए। यहाँ

म जालन्धर की कथा म एक मोड आता है। जालन्धर न नारद स पार्वती की सुन्दरता सुनी और उसके मन में यह इच्छा बलवती हो उठी कि पार्वती का छीन लिया जाय। निशुम्भ शुम्भ कालनेमि आदि राक्षसों को साथ ले जालन्धर ने कैलाश पर धावा बोल दिया।

विवाह की इच्छा कितनी बलवती होती है!

शिव की सना म पार न पाकर गान्धर्वी विद्या से शिव को मोहित कर स्वय शिव रूप धारण कर जालन्धर पार्वती क पास गया। पार्वती को पता चल गया कि यह राक्षस है। वह गुप्त होकर विष्णु की शरण म चली गइ। जालन्धर को वरदान था कि जब तक उसकी पत्नी का पतिव्रत धर्म कायम है कोई उसे मार नहीं सकेगा। विष्णु ने जालन्धर का रूप धारण करके जालन्धर की पत्नी का सतीत्व नष्ट किया। पता चलने पर वृन्दा न विष्णु का शाप दिया कि त्रता युग म उनकी पत्नी रावण द्वारा अपहृत की जायगी और वह वन-वन भटकते फिरेंगे। वृन्दा न अपने पति को प्राप्त करने के लिए एक स्थान पर बठकर घोर तपस्या की। उस स्थान का नाम वृन्दावन हो गया। एक बार वृन्दा को जालन्धर के ध्यान हुए और अन्त म विष्णु न चक्र स जालन्धर का सिर धड स अलग कर दिया। जहाँ जालन्धर गिरा वहाँ सर अपूर्व तेज प्रकट हुआ। वह तेज भी शिव के तेज म मिल गया। वृन्दा अग्नि म प्रवेश करे इसके सिवा वह बचारी कर ही क्या सकती थी? कहो कैसी रहेगी यह कथा हमारी अगली फिल्म के लिए?

'तो तुम भी पौराणिक फिल्म बनान की सोचन लगे? यह काम तो और बहुत स लोग कर रह हैं। मैं पूछती हूँ इसम सिद्ध क्या होगा?

पसे आयेंगे धडाधड। और क्या सिद्ध करना चाहती हो?

'अभी पत्नी धर्म आने। इसम दरा को वृन्दा की भूमिका म पन करोग क्या? मैं तो सोच भी नहीं सकता कि धर्मपत्नी इस तरह की फिल्म म संगीत तन को राजी होगा।

क्या जय जालन्धर' नाम क्या रहगा? खाली जालन्धर तो

ठीक नही रहेगा।

नाम का सवाल नही। नाम तो लिफाफा है। मैं पूछता हू लिफाफे के भीतर चिट्ठी क्या होगी ?

तो तुम्हारा क्या सुभाव है ?

सुभाव मेरा नही इरा का है।

वह क्या कहती है ?

'कल रात एक जगह मिल गई थी इरा। बता रही थी कि वह दास के साथ एलिफण्टा देखने गई थी। कह रही थी कोई पहली बार तो नहीं देखी एलिफण्टा पर इस बार बहुत आनन्द आया। और वह कह रही थी—जयन्त भाई को अब ऐसी पिक्चर बनानी चाहिए जिसमे बम्बई की कथा बोल उठे यानी बम्बई का गत दो सौ वर्ष का इतिहास—कैसे बम्बई का जन्म हुआ कैसे वह बडी हुई।

बात तो ठीक कहती है इरा। पर सवाल तो पैसे का है डार्लिंग। पीछे भले ही यह पिक्चर हाथ में ले सकू। पहले तो 'जय जानेश्वर' ही बनानी होगी।

डार्लिंग पौराणिक दलदल में एक बार फंस गए, तो फिर इससे बाहर नही निकल सकोगे। क्यो नहीं बम्बई की कहानी में फिरगी को शैतान के रूप मे दिखाते ?

बिना यह समझे कि इस बात में कोई तुक भी है या नही पति पत्नी हस पडे। फिर उर्वशी ने नौकर को आवाज दी कि वह खाना लगाए।

पक्की रही न यह बात ? उर्वशी ने हसकर कहा कल इरा मिसिज दास बनेगी।

कृष्ण पक्ष की रात में सागर की लहरें उतनी चचल नहीं रह गई थीं जितनी पूनम की रात को थीं।



सत्रह

मैना के मन में धुकधुकी-सी हो रही थी कहीं सचमुच इरा को कोई फुसलाकर न ले जाय। सवेरे से ही उसकी दाईं आँख फड़क रही थी। उसे राम बुरा तो न लगता था पर मनोज और राम का क्या मुकाबला! सात हजार का कान्ट्रेक्ट करके राम ने लुटिया ही डुबो दी थी। इससे तो यही अच्छा था कि मुफ्त ही सखा-समिति का सदस्य कर डालता। उसे उसकी पर मां बहुत क्रोध आ रहा था—बनिये की बनियाइन! उसने मन-ही-मन उसको धिक्कारा—सेठ की सेठानी बनने के ये लच्छन! कोई बात हुई भला! बेचारे राम को ठग लिया!

वह इरा के कमरे में गई। इरा बाहर जाने की तैयारी कर रही थी। नाक से ऊपर तक आज इरा को गोरे रंग की गुड़िया बनी देखकर मैना बोली, इरा यह क्या स्वाँग रचा है आज?

इरा हँस पड़ी।

हँसो नहीं, ठीक-ठीक बताओ।

आज एक जगह शूटिंग है। मैंने सोचा वहाँ जाकर हीरोइन बनने के बजाय यहीं सारा मेक अप कर डालूँ!'

मैना खुश हो गई। उसने अपने मन को समझाया। मैं तो यों ही डर गई था। इरा मेरी है, मुझसे पूछे बिना यह कहीं नहीं जा सकती। फिल्म में सौ बार हीरोइन बना है। यह तो धन्धा है। फिल्म का मेक अप यही चाहता है। मैं भी तो पहले फिल्म के पर्दे पर उतर आई हूँ।

भला ठीक है।

उसने इरा का मन जानने के लिए गस की प्रशंसा शुरू कर दी।

इरा ने नाक-भौं चढ़ाकर अभिनय किया।

'क्यों गस तुम्हें पसन्द नहीं ?'

'बिलकुल नहीं।'

'क्यों उसमें क्या बुराई है ?'

'उसका चाल भी देखने लायक है। मैं उसके साथ हर राज तो नहीं चल सकूंगी। देखा नहीं था उस दिन मुहूर्त के मुहूर्त पर। किस तरह सारा हमारी तरफ आँखें फाड़ फाड़कर देख रहे थे।'

मना का मन-मयूर नाच उठा। उसे यह समझते देर न लगी कि इस जन्म में तो गस उसका इरा पर जादू नहीं डाल सकेगा। इरा मेरी है मेरी ही रहेगी। फ़िल्म की रंगीनियाँ बनी रहें। फ़िल्म की रंगरलियाँ ही एक एक्ट्रेस की सफलता की सीढ़ियाँ हैं। फ़िल्म के मौज-मेलों में ही हमारे लिए बरकत का सामान है। फ़िल्म की दुनिया खुल-खजाने खुशियाँ बाँटती है।

'तुम्हारे मन पसन्द का आदमी है मनोज। क्यों इरा ?'

इरा लजाई नहीं। दर्पण के सामने खड़ी मेक अप करती रही।

'मेक अप का भी एक हिसाब रहता है न! ऐसे ही हमारी परम्परा है। किसी की घर वाली बनकर एक्ट्रेस बनना कठिन है। घर-गृहस्थी चलाये या ऐक्टिंग करे।'

इरा मुस्करा दी जैसे माँ के उपदेश पर स्वीकृति की मुहर लगा रही हो।

'यह कान्ट्रैक्ट डेढ़ लाख का किया है। अगला दो लाख से कम न हो। तुम्हें तो यही रखना चाहिए। एक मैं हूँ। पचहत्तर हजार का कान्ट्रैक्ट मुश्किल से मिला। उम्र-उम्र की बात है। मैं समझती हूँ कि मैंने फिर भी कुछ कमाया इरा।'

इरा ने नाक भौं चढ़ाई जैसे माँ का वार्तालाप उसे खल रहा हो।

माँ का प्यार तुम्हें अब भारी लगने लगा ! मना न व्यंग्य के बाण-रूपी बाण छोड़े तुम मुझसे अलग रहने की बात सोच रही हो बहुत दिनों से यह मैं देख रही हूँ।

'शायद !' इरा मुस्कराई।

'शायद क्या यही बात है। मैं साफ देख रही हूँ।

'तो मेरा सिंगार तुम्हें अच्छा नहीं लगता माँ ?'

'यह बात नहीं है बेटी !' माँ ने आवाज में नरमी लाकर कहा 'सुना नहीं ! माँ मारे भी और रोने भी न दे।'

'मैं तो अपनी राह चली जा रही हूँ माँ ! तुम मारो चाहे प्यार करो। राह मुझे बुला रही है। राह की पुकार मैं कैसे अनसुनी करूँ ?'

माँ ने इरा की ठोड़ी उठाकर प्यार जताया जाओ शूटिंग में देर हो रही है बेटी !'

ड्राइवर तैयार था।

इरा नीचे जाकर कार में बैठ गई।

'कौनसे स्टूडियो में चलना है ?'

'पहले जयन्त दमाई के घर चलो—मलाबार हिल !'

कार शीघ्र ही हवा से बातें करने लगी।

इरा ने आगे की राह तय कर ली थी। पीछे की बात पीछे आगे की बात आगे। बचपन में माँ कहा करती थी न—तेरा दूल्हा आयेगा लाल घोड़े पर चढ़कर ! अब मैं दुलहिन बनी स्वयं अपने दूल्हे के पास जा रही हूँ। अपना ही दूल्हा चुन लिया गया। मीना-बाजार में हर चीज मिलती है—दूल्हे की भी क्या कमी ? नीले घोड़े पर चढ़कर दूल्हा उसके घर नहीं आ पाया था। कार पर चढ़कर दुलहिन ही दूल्हे के पास जा रही है ! और इरा मन-ही-मन कह रही थी—ब्याह के गीतकार गायक तेरी जय हो ही जय ! ओ री ओ ब्याह की शहनाई तेरी मंगल रागिनी की जय हो जय !



अठारह

ड्राइंग-रूम आज पूरी तरह सजाया गया था।

जयन्त दिल से नहीं चाहता था कि उसके घर कोई ऐसा-वैसा नाटक खेला जाय।

पर उर्वशी ने उसे मना लिया था कि इरा और यश की जोड़ी बनने में सहायता देकर उन्हें अपने काम में भी आसानी हो जायगी। इरा हमारे अहसान तले दब जायगा। उर्वशी मुस्कराई।

और यश ?

'वह भी यही सोचेगा कि हमारे ही घर उसे उसकी इरा मिली।'

जयन्त को इस व्यापार में लाभ-ही-लाभ दिखाई दिया।

बाहर आँगन में वेदी सजाई गई थी। पण्डित विवाह की तैयारी कर रहा था। उसने फिर आवाज दी, दुलहिन अभी तक नहीं आई ?

सब बड़े हैरान थे। यश का चेहरा तो बहुत उतरा हुआ था। कहीं इरा ने अपना इरादा बदल तो नहीं लिया ? बड़ी भद्द होगी। उसने सोचा किस झंझट में पड़ गया। इससे कहीं अच्छी बात होती कि मैं बरकना चला जाता और पंचानन को संगीत सिखाता।

तुम घबराओ मत ! गोविन्दन ने यश की ओर देखा, इरा तो अब तुम्हें मिलकर ही रहेगी। इरा पीछे हटने वाली लड़की नहीं। सारी बात उसके फैसला करने की थी, वह उसने कर लिया। तुमने मेरा बात नहीं मानी। मैंने तुम्हें अपना आशीर्वाद दे डाला। मैं हूँ

गोविन्दन अवतार ! वह कहने-कहते हंस पड़ा मेरी बात आज तक झूठ नहीं हुई। मैं हूं त्रिकालदर्शी। मैं देख रहा हूं इरा अपने घर म चल पड़ी है।

उवशी के घर से तीन मकान छोड़कर एक फ्लैट दास के लिए ठीक किया जा चुका था। इस काम म उवशी ने ही मदद दी थी। उसी ने पूरा सामान जुटाने म हाथ बटाया था। यह बात इरा से छिपा कर रखी गई थी। दास का पक्का इरादा था कि वह इरा को चौंका करके उसे अपने उसी मकान पर ले जायगा।

नाच से किसी ने पुकारा।

दास ने नीचे जाकर कार का दरवाजा खोला।

दास का हाथ पकड़े लाल कपड़ों म सजी इरा कार से नीचे उतर आई।

जब वे ऊपर पहुंचे तो गोविन्दन ने हंसकर कुछ कहना चाहा। हाथ के सकेत से इरा ने उसे रोक लिया।

खानकनी से नीचे झुककर इरा ने अपने ड्राइवर से कहा तुम चलो। मैं इन लोगों के साथ स्टूडियो चली जाऊंगी।

ड्राइवर चला गया तो इरा भी दान म जान आई।

गोविन्दन बोला मैं हू गोविन्दन अवतार ! इरा देवी तुमने आने म दस मिनट की भी देर की होती तो विवाह का मुहूर्त टल जाता। और वह अपनी बात पर स्वयं ही हंस पड़ा।

दास कुछ न बोला। वह इरा की ओर देखता रह गया। पहले तो कभी इरा इतनी सुन्दर नहीं लगी थी।

आज तो इरा पूरी दुलहिन लग रही थी !

इरा की एक एक अदा नई थी एक-एक बात नई थी। दास एक टक देखता रहा। अब उस बरबस जाकर पचानन का सगान सिखाने की बात बिसर गई थी। इस रूप-गरिमा के सम्मुख बेचारे पचानन की क्या बिसात ! आज मेरी मां होती यहीं तो अपना बनने वाली बहू को।

दखती ही रह जाता।

उवशी न इरा की ठाडी उठाकर कहा 'घर स पूरा मक-श्रप करक आयागी यह ता हम आशा न थी।

यह रूप यह यौवन! गोविन्दन हस पडा, मैं हू गोविन्दन अवतार! अरे गवना महाराज! क्या सोच रहे हैं श्रीमान ' दुलहिन वही नहा जो बाहर से नजर आ रही है। दुलहिन तो मन के भीतर छिपी बठी है। भोली भाली मिट्टी स उगा है दूल्हा हमारा! और चवन मिट्टी स उगी है दुलहिन। कहते-कहते वह लोट-पोट हो गया।

आँगन स पण्डित न टेर लगाई दुलहिन तो आ गई। अब क्या दर है?

अब कुछ देर नहा। उवशी न उत्तर दिया हम अभी आ रहे हैं। पहल दुलहिन को उसका रूप दिखा दें दपण म।

इरा का मुख ललौहा पड गया। लाज स उसक कानों की लावें तक ललौंही हो गइ।

जयन्त शान्त प्रसन्न मुद्रा म खडा था। वह बिलकुल चुप था।

मियाँ-बीबी राजी तो क्या करगा काजी! जयन्त भी चुप न रहा।

इरा क जूडे पर उवशी न फूल लगाना चाहा। गोविन्दन बोला "मैं हू गोविन्दन अवतार। क्या दुलहिन नग सिर बठगी जो उसक जूडे पर फूल लगाया जा रहा है? दुलहिन का फूल है दूल्हा सा हाजिर है। उगो शास्त्र! अब विवाह म देर नहा। पण्डित का तग मत करो। विवाह का मुहूर्त टल नहा सकता। फिल्म के मुहूर्त से कहीं पवित्र है विवाह का मुहूर्त!

इरा का हसी न आई, न वह मुस्कराई। लाज-लजी-सी दपण के सामन खड़ी रही। उस उसका रूप दिखाया जा रहा था दपण म।

कने क गाछ काट-काटकर जाने कहाँ-कहाँ स लेता आया था गोविन्दन। चौकी सजाने की उसी की जिम्मेवारी थी। दूल्हा-दुलहिन को एक साथ चौकियों पर बिठाकर पण्डित उन्हें आचमन कराने लगा।



उन्नीस

'गुस्य' की शूटिंग चल रही थी। मना को पहली बार फिल्म के परदे पर उतरते शुरू-शुरू में कुछ संकोच भी हुआ था। पर अब तो गाड़ी चल निकली थी।

आज वह जल्दी ही चली गई। जहाँ वह बैठी थी, स्टूडियो में कुछ और लोग भी बैठे थे। पास ही खड़े थे मनोज सान्याल और जयन्त देसाई।

'मनोज बाबू, इरा तो अब आपके हाथ से गई!' सहसा जयन्त के मुँह से निकल गया।

मना ने यह बात सुनी तो पास आ गई। मनोज और जयन्त देर तक बातें करते रहे। मना पर अगले दृश्य की तैयारी में व्यस्त थी।

जयन्त ने छूटते ही यह खबर सुना डाली, 'इरा का ब्याह हो गया।'

'किस के साथ?' मनोज चुप न रह सका।

'हाँ, दत्त के साथ!' जयन्त को कहना पड़ा।

मनोज का रंग फीका पड़ गया।

जयन्त ने यह खबर तो सुना दी, पर पीछे उसे पछतावा हुआ। यह बात तो मना तक जा पहुँची थी और अब स्टूडियो में हर कोई आँखों-ही-आँखों में इसी को दोहरा रहा था। उषा ने जयन्त से बार-बार कहा था कि वह आज शाम की बात आज रात को अवश्य पचा जाए और स्टूडियो में किसी के कान में इसकी भनक न पड़ने दे। मैं इतनी-सी बात न पचा सका। उषा जी सुनेंगी तो क्या कहेंगी?

मना ने पास आकर कहा 'चुप क्या हो गए जयन्त भाई ? सारी बात बताइये न ! कहाँ ब्याह हुआ ? कितनी शहनाइयाँ बजी ? कौन भाग्यवान दूल्हा मिला है मेरी इरा को ?

जयन्त झेंप-सा गया मैंने तो यह खबर उड़ती चिड़िया से सुनी।

'खबर सुनाकर वह चिड़िया कहाँ उड़ गई ?

क्या तुम्हें नहीं बताया था इरा ने ?

मुझे वह क्यों बताने लगा बेटा ! जमाना ही ऐसा है। मुझसे पूछती तो कोई अच्छी राय ही देती।

'यह तो ठीक है। माँ हमेशा बेटी को अच्छी राय ही देती है।

सागर धरती और पहाड़ से कुछ कम बूढ़ा नहीं इन्सान ! जयन्त ने ज्ञान बघारा जितना बूढ़ा है इन्सान उतनी ही बूढ़ी है ब्याह की परम्परा। अच्छा तो यही है कि बेटी माँ से पूछकर यह कदम उठाये। पर वह किसी कारण ऐसा न कर सके तो भी क्या बुरा है ? ब्याह तो जरूरी है। मैं तो हालीवुड में रहा यूरोप का चप्पा-चप्पा छान मारा। हर जगह यही देखा। हर जगह ब्याह की शहनाइयाँ सुनी। शहनाइयाँ नहीं तो कोई और बाजा। सब ठीक हो जायगा। इरा तो बहुत समझदार है। शक्ल बुरी नहीं। दूल्हे के चुनाव में पहला हक तो दुलहिन का ही होना चाहिए। ब्याह ही जीवन का आनन्द है। सारी दुनिया में हर कहीं लड़कियाँ ब्याह करती हैं। हर फ़िल्म में कहीं-न-कहीं यही नुस्खा रहता है। इसके बिना कहानी बनती ही नहीं।

'उसने मुझसे पूछा क्या नहीं ? झूठ बक दिया। बोली—घर से दुलहिन का मेक अप करके जा रही हूँ ताकि स्टूडियो में देर न लगे। मैं क्या जानती थी कि यह फ़िल्म के लिए मेक अप नहीं, वह सचमुच ही दुलहिन बनकर जा रही है।'

मना बातें करते करते उदास हो गई। अब तक इरा मेरी सेवा को अपना आदर्श बनाये बैठी थी। अब वह पराई हो गई। आज तक वह जिस डगर पर चल रही थी, उससे हट गई। नये साथी का प्यार इरा

को मुबारक ! पर मैं क्या करूंगी ? उसकी पीड़ा पाताल तक चली गई।

'बारात को देखकर तो हर लड़की खुश होती है।

सो तो ठीक है।

वह गुड़िया का ब्याह रचाती है।

हाँ जयंत भाई !

तो फिर ?

तो फिर' का ही तो सारा झगड़ा था। माँ की लोरी में दूल्हे की कल्पना घुली रहती है। एक कश्मीरी हाथों से मना ने यह गीत सुना था—ब्याह का गीत जिसमें कश्मीरी स्त्रियाँ गाती थीं हम सड़कों पर तुम्हारे लिए कपूर बिछा देंगी। ऐ इश्क के भौंरे क्या तू आ पहुँचा अपनी लता को लिवा ले जाने के लिए ? यहाँ तो उलटी बात हुई लता अपने आप इश्क के भौंरे के पास चली गई। उसकी कल्पना में मदन बाबू का चेहरा उभरा। वह भी तो इश्क का भौंरा बनकर आये थे मेरा संगीत सुनने। फिर वह हमेशा के लिए मेरे हो गए। एक बार गये भी तो घर वालों से नाता सब रिश्ते तोड़कर आये मेरे होकर रहे। उसी इश्क के भौंरे की निशानी है इरा। उसी की निशानी है दामर। दामर को पता चलेगा तो रो रोकर आँखें सुजा लेगा। वह अपनी दीदी के बिना कैसे रहेगा ? मना को मदन बाबू की बातें याद आती हैं। वह कहा करते थे—स्त्री माँ है। बड़े-बड़े अवतार भी उसी की कोख से जन्मे। मदन बाबू यह भी कहा करते थे—जब मेह तब घास। जब घास तब प्रजा सुखी। जब प्रजा सुखी तब ऐश। जब ऐश तब जुल्म। जब जुल्म, तब कहर। जब कहर तब तोबा। जब तोबा तब मेह ! गाड़ी का चक्कर चलता है। यह सदा से चलता आया है चलता रहेगा। मदन बाबू के साथ मना का ब्याह हुआ था। वह भी बैठी थी मदन बाबू के दायें हाथ वाली चौकी पर ! उसने भी अग्नि के सामने भाँवरें ली थीं। पण्डित ने आशीर्वाद दिया था। मदन बाबू के

सामने मैं वसे गान में लिपटकर बठी थी नाज नजी-सी, जसे दूल्हे ने इससे पहले दुलहिन का कभी नहीं देखा था। वह सब क्या था ? एक अच्छा-खासा नाटक ! वसा ही नाटक अब मदन बाबू की बटी ने किया। पर उसने अपनी माँ की तरह नहीं किया। वह उलटी चाल चली। सदा सुहागिन रहो बटी ! युग-युग बना रहे तेरा सुहाग ! पर माँ स पूछ लिया होता। माँ के मुँह पर तमाचा मारकर तो न गई होती ! कसे कह दिया मुँह बनाकर—स्टूडियो में दुलहिन का टक' है आज ! दुलहिन का टेक है ! दुलहिन ! अब दुलहिन बनन का मजा चख लेगी—दूल्हा की गुलाम ! उम्र भर की गुलाम ! आँखों पर हाथ रख रखकर पहले का आजादी को याद करेगी। न करे तो मेरा नाम मना नहीं !

स्टज पर अगल दृश्य की तैयारी पूरी हो चुकी थी और शूटिंग चल रहा था। मना अभिनय कर रही थी पर मन की रग भूमि पर सघप चल रहा था। मुक्तिबोध ने गुरुदेव रुद्रपदम् का मेक अप करने म कमाल कर दिया था। एक ओर गुरुदेव का शिष्य खल बठा वीणा पर नित नित का अभ्यास कर रहा था। खल की रोल एक नय युवक को दी गई थी। और अन्नपूर्णा के मेक अप म मना भी स्टेज पर चली गई। मना को अपना डॉयलाग पूरी तरह याद था। यह वह प्रसग था जहाँ गुरुदेव की पत्नी अन्नपूर्णा यह शिकायत करती है कि अपने बेटे गोविन्दन को तो उन्होंने पूरा प्यार न देकर घर स भगा दिया और इस पराय पुत्र खल पर व्यथ ही माथा-पच्ची कर रह है। और इस पर गुरुदव का यह उत्तर— एक परम्परा को पुत्र आगे बढाता है एक को शिष्य ! बेटे न सगीत नहीं सीखा तो क्या शिष्य भी न सीखे ? और फिर अन्नपूर्णा की त्रिया-हठ और खल्लों के विष में बुझे बाण !

इर तक फाइनल रिहसल चला फिर असली शूटिंग शुरू हुई। मना सोच रही थी—इरा गिरा तो किस पर गिरा ! उधर टक' की आवाज पड़ी इधर मना बहोश होकर सेट पर गिर पड़ी।



तीस

इरा और शरद सवेरे-सवेरे माँ से मिलने आये। सात दिन पहले हुआ था इरा का विवाह। वे माँ के सामने जाने डरते थे। मन पर माँ के बेहोश होकर गिरने की खबर उनसे छिपाकर रखी गई थी। डाक्टरी न आज गाजियाबाद से यह खबर नाग तक पहुँचाई। नाग न यह खबर इरा को दी।

माँ को देखने के लिए इरा का दिल तड़प उठा। सात दिन से माँ बीमार है, पलंग से उठी ही नहीं। इरा सोच रही थी कि इसके लिए वही दोषी है।

ड्राइंग रूम में नाग को बिठाकर इरा बोली, 'तुम अभी अन्दर मत चलो। माँ की तबियत शायद बहुत खराब है।

इरा को देखकर माँ ने मुँह फेर लिया। नागर बहुत उठा दादी तुम आ गई! जाजाजी नहीं आये?

इरा ने शकर के कान में कहा 'वह बाहर बैठे हैं। तुम उनके पास चले जाओ।' और नागर बाहर चला गया।

इरा ने माँ के पैर दबाने की चेष्टा की। माँ ने पैर खींच लिए।

माँ की हालत दयनीय था। माथा गरम हो रहा था। आँखों में जल भाग रहा था।

धीरे धीरे इरा ने माँ का माथा सहलाना आरम्भ किया।

नौकर से बर्फ मँगवाई और बर्फ की पट्टियाँ सिर पर रखने लगी। माँ

की तबियत थोड़ी सभल गई।

तुम अकेली आई हो ?

हाँ।'

दास क्या नही आया ? क्या मुझसे डर लगता है ?

वे आना तो चाहते थ पर मैं उन्हें लाई नही।

इतने म शकर न आकर कहा माँ दीदी रूठ जानती है। जीजा जी भी आये हैं।

माँ की आँखें चमक उठी।

इरा उठकर दास को लेती आई। दास ने माँ के चरण छू लिये।

'यह सुहाग घड़ी बनी रह ! माँ न आशीर्वाद दिया यह जोडी सदा बनी रहे। बठो बटा ! मेरे पास बैठो।

माँ को पता लग चुका था विवाह नियमपूर्वक जयन्त दसाई के घर हुआ। उनकी स्वय आकर बता गई थी क्षमा माँग गई थी।

माँ के मुख पर सहानुभूति और प्रीति के फूल खिल उठे। माया अब भी तप रहा था पर मन म ठण्ड पड गई।

सुख को बुलाओ तो सुख पास आता है ! माँ न जसे अपने अनुभव की गठरी खोल दी राग रागिनियों के सुरो वाली बात है। एक राग म और सुर लगते हैं दूसर म और। बँधे-बँधाये सुर लगते हैं हर राग म। हालाँकि वही सात सुर हैं। फेर-बदल करके अलग अलग सुरो के जोडे बनाये उस्तादों ने। अनेक लडके हैं अनेक लडकियाँ। जोडा किसी किसी की ही बनती है। मन-मरजी की बात है। दुनिया को बकने दो। कौन किस पर खुश है यहाँ ! जितने मुह उतनी बातें। तुम सच्चे तो सारा जहान सच्चा। '

ज्यादा न बोलो माँ ! इरा न समझाया माथा फिर तप जायगा।

दास ने मुस्कराकर इरा की हाँ में-हाँ मिलाई।

अब क्या तपेगा माथा ? पर एक बात है दास बटा ! यह घर

तो मुझे खाने को दौड़ता है। या तो मैं उधर आ जाऊं या फिर तुम लोग इधर आ जाओ। इरा के बिना मैं नहीं रह सकती। मनर की आंखें नहीं देखा ? जिस दिन से इरा गई है इसके आंसू नहीं थमे। रोता ही रहा। दीदी के घर चलो माँ—यह रट रही इसकी। बच्चा है कौन इसे समझाये ?

इरा की आंखों में आंसू आ गए। वह माँ का दुखी नहीं देखना चाहती थी फिर भी कुछ कहते उसे सकोच हो रहा था।

इरा ने एक बार दास की ओर देखा।

दास को इरा के ये स्वर बिलकुल न भाये। वह यह बात पसन्द नहीं कर सकता था कि इरा फिर वहां चली जाय और वह भी इरा के साथ रहकर घरजमाई बन जाय।

बीच-बीच में तुम उधर आ जाया करना माँ! दास ने सोच सोचकर कहा यह घर भी तो तुम्हारा है माँ!

सो तो ठीक है बेटा! अब तो सब जवाबदेही तुम्हारे ही सिर पर है चाहे उधर रहो चाहे इधर। बाबर को आयव बजाना भी तुम लोगों का काम है। मेरा क्या है और इरा ने झट माँ के मुंह पर हाथ रख दिया।

माँ अपनी बात कहने से कब टलने वाली थी ?

आज नहीं तो कल। कौन जाने मेरी आंखें कब बन्द हो जायें! मरने से क्या डरना ?

सात बरस तुम्हारी उम्र हो, माँ! इरा मुस्कराई।

"हाँ सात बरस!" दास ने भी स्वर भरा।

माँ की आंखें चमक उठीं। एक पल को एक महीना माना जाय एक दिन को एक बरस तो यह हिसाब ठीक बैठ सकता है। हिसाब की बात ही तो है न बेटा! तुम तो जानते ही हो। संगीत विद्या में भी सभी हिसाब का खेल है सारा। हिसाब ही से चलता है तार!

इरा मुस्कराई, जैसे मुस्कान ही अब जीवन की टेक हो। इरा की

मुस्कान को वहीं रोक नहीं। यह मुस्कराती ही रही। बुद्धि से बड़ा है प्रीति! मनमानी खुशियाँ देती है प्रीति। किसमें इतनी हिम्मत कि प्रीति की खिल्ली उड़ाये! प्रीति नये घर बसाती है। प्रीति की धूप में मुस्कान के फूल खिलते हैं। ब्याह की शहनाइयाँ तो प्रीति के ताल पर ही बजती हैं। ब्याह के बिना तो इस मीना-बाजार में मन ऊब जाय। जिस अभिनेत्री का ब्याह नहीं हुआ उस पर लाख-लाख भौंरे मँडराते हैं। उसकी कोई इज्जत नहीं। लहू रगों में दौड़ता है दौड़ता दौड़ता आग-सी जला जाता है। इस आग को ठण्डा करती है प्रीति! मीना-बाजार में ब्याह की खबरें आये-दिन उड़ा करती हैं। ब्याह की खबर! यही तो वह दाना है जिसे मीना-बाजार में सपनों का कबूतर चुगता है!

क्या सोच रही हो बेटी!

कुछ नहीं माँ!

शाल मुस्कराया।

नंबर ने रेडियो लगा दिया। यह कोई लोक-गीत था जिसके सुर धीरे-धीरे डोल रहे थे। रत्ताइ रत्ताई रे गाई पुअरत्ता। आऊरो रत्ताई जे धर्म-देवता! यह कोई उड़िया लोक-गीत था—'लाल रंग का है रे लाल रंग का। गाय-पूत है लाल रंग का! उससे भी अधिक लाल है धर्म-देवता!' गीत की पृष्ठभूमि में मानो आगे-पीछे जुड़े छकड़े बढ़े चले जा रहे हों जंगल के मार्ग पर! बड़े-बड़े गाछ झूम रहे थे। गाड़ी वालों का बैल हाँकने का स्वर बीच-बीच में उभर रहा था। माँ बड़े ध्यान से सुनती रही।

'हम भी छकड़े के बैल हैं।' माँ ने गम्भीर मुद्रा बनाकर कहा यह सब बोझ तो ढोना ही होगा। गाय-पूत की धर्म-देवता से तुलना की जायगी बार-बार! उससे क्या फर्क पड़ता है? बोझ तो बोझ है वह तो ढोना ही होगा। मदन बाबू आये। उनका बोझ मैंने ढोया! या शायद मदन बाबू ने मेरा बोझ ढोया। अब बेटा अब तुम्हारा बोझ

रोएँगी मन्न बाबू की बेटी इरा ! या यह कहो कि तुम दोनों चलोगे मदन बाबू की बेटी इरा का बोझ !

'ज्यादा सोचना तो ठीक नहीं माँ !' इरा ने चेतावनी दी।

माँ की आँखों में अब भी कोई आग जल रही थी।

रेडियो से अब उस्ताद फ़ैयाज़ ख़ाँ की गाई हुई ठुमरी आ रही थी—'बाजूबन्द खुल-खुल जाय !' यह ठुमरी माँ को पसन्द थी। मन्न बाबू इस ठुमरी की अक्सर फ़रमाइश किया करते थे। 'हालाँकि मैं फ़ैयाज़ ख़ाँ जैसा नहीं गा सकती बन्ना ! पर मन्न बाबू यह ठुमरी मुझसे सुने बिना न मानते थे।

माँ की आँखों में आँसू आ गए। इरा ने हाथ बढ़ाकर माँ के आँसू पोंछ लिए।

माँ बोली, 'जाकर अपने बाबू की फ़ोटो तो उठा लाओ, बेटा !'

इरा वह फ़ोटो उठा लाई। फ़ोटो में मन्न बाबू की बड़ी-बड़ी आँखें मानो 'बाजूबन्द खुल-खुल जाय' सुनकर ही नाच उठी थीं। माँ बोली, 'देख लो मन्न बाबू ! अपने जमाई को देख लो। यह तुम्हारी इरा का दूल्हा है। नामी संगीतकार ! नामी संगीतकार का शिष्य ! उस्ताद [illegible] का शिष्य ! देख लो !' माँ विभोर हो गई। इरा ने मन्न बाबू की फ़ोटो को प्रणाम किया।



इकतीस

नीलू एक मास से बरकला में था। आज की डाक से 'फ़िल्म इण्डिया' का अंक आया तो उसकी दृष्टि उसके विवाह-स्तम्भ पर पड़ी जिसमें इरा और दास के फोटो के नीचे लिखा था — नव-दम्पती।

पहले तो उसने सोचा कि 'फ़िल्म इण्डिया' का यह अंक अपने पिता से छिपा ले। फिर उसने पहले यह वचन लेकर कि वे बरकला में यह खबर किसी को नहीं बतायेंगे उन्हें वह चित्र दिखा दिया।

नव-दम्पती के चित्र के साथ विशेष लेख प्रकाशित हुआ था। पत्रिका के विशेष संवाददाता ने दास और इरा का अलग अलग इंटरव्यू लेकर यह लेख तैयार किया था।

लेख का शीर्षक था — अन्तिम चट्टान के मछुए को इरा मिल गई!

लेख का आरम्भ एक लोक-कथा से किया गया था जिसका सम्बन्ध कन्याकुमारी की अन्तिम चट्टान से था।

इस लोक कथा का नायक था एक मछुआ।

एक था मछुआ। कन्याकुमारी का वासी। सीधा मनमौजी।

उसमें ज़रा भी झिझक नहीं थी। गाता था मज़े के गीत। सुनने वालों का मन मोह लेता था।

पर मोह न सका वह उस कन्या का मन जिसे वह अपने सपनों की रानी कहता था अपने गीतों में।

अँधियारे में करें उजियारा ऐसे थे उसके गीत।

जाल उठाकर कभी नहीं निकलता था वह मछली मारने। बस वह गाता था। सगीत बन गये मछली-जाल यही थी उसकी अन्तिम साध! कन्याकुमारी की अन्तिम चट्टान पर बैठ बजाता जादूभरी बाँसुरी। वह मछुवा नहीं था। वह था बाँसुरी वाला—गीतों का रसिया।

दु:ख-शाप से ऊपर उठते गए उसके गीत।

बढ़ता गया आत्मविश्वास।

लगती गई प्रतिभा की छाप उसके गीतों पर! स्वर-त्रुटी से बचे गीत अनमोल थे। चाँदनी के खेत में अनजानी पगडण्डी पर गलबाँही प्रीति स्वयं देती थी अपना परिचय दास-दीपिका को!

कहता था उसका गीत सागर-जल उष्ण है! झाग सेज पर मुसकाता था गीत, सपने के तकिये पर सिर रख! झाग-पटी लहरों पर थिरक थिरक चलती शुभ्र चाँदनी! मुख से हँसी नहीं हटाती। स्वर का काँटा चुभ चुभ जाता। गीत का सरगम कुछ ऐसा ही होता था! हौले-हौले खिलती थीं कलियाँ।

बड़ा ही लापरवाह था बड़ा ही बावरा। आप-ही आप बजाते रहना बाँसुरी यही उसकी आदत थी।

कोई भी पूनम ऐसी न जाती थी जब वह गाता न हो कन्याकुमारी की अन्तिम चट्टान पर।

नन्हे मुन्ने शंखों की माला पहने दूर से सुनती थी मछुवे की रंगी अपने प्रेमी के गीत। एक कान से सुनती थी दूसरे कान से निकाल देती थी। गीत की हार। प्रतीक्षा नकचढ़ी थी। ध्यान नहीं देती थी कभी पगले प्रेमी के गान पर!

एक रात आई पूनम चल गया गीत का जादू! रात भर बजती रही बाँसुरी।

सबेरे उठकर लोगों ने देखा अन्तिम चट्टान पर पड़ा थी मछुवे गायक की मृत देह!

तब से किसी चाँदनी में सुनाई न जाती है बाँसुरी। लोग कहते हैं

घाँ-सारों की रागिनी बज-बज उठती है। उस गायक प्रेमी की आत्मा आज भी ढूँढ रही है उस मछुवे की बेटी को जिसे उसने दी थी अपने हाथों से नन्हे मुन्ने शंखों की सुन्दर अनमोल माला!

नीलू ने आगे पढ़ा

कन्याकुमारी की अन्तिम चट्टान के गायक ने आखिर ढूँढ पाई बम्बई में अपनी गुम हुई प्रेयसी। इरा वही प्रेयसी है। दास वही मछुवा गायक। दास इरा का ब्याह। नवदम्पती को सौ-सौ बधाइयाँ।

संगीत ने अभिनेत्री का मन चुरा लिया।

दुश्मनों के सीनों पर इस विवाह से साँप लोट गए। उनकी दुआएँ खोटे सिक्के सिद्ध हुई।

जब से इरा और दास का विवाह हुआ है बम्बई के माना-बाजार में हुल्लड़ मचा है। लोग व सिर-पैर की बातें उड़ा रहे हैं। डाइरेक्टर प्रोड्यूसर जयन्त स्माइड और उनकी हालीवुड-कट पत्नी उर्वशी पर छींटे कसने में लोगों को मजा आ रहा है जिनके घर चोरी छिपे इरा का जीवन मणिलाल की आँखों में धूल डालकर राम के साथ बाँध दिया गया। मनोज सान्याल की पूजा बेकार गई। इरा ने हमेशा के लिए डाइरेक्टर सान्याल के प्रेम को ठुकरा दिया।

इरा की माँ स्टूडियो में काम करते-करते इरा के ब्याह की खबर सुनकर बेहोश हो गई! सात पुश्तों की तवायफ के हाथ से हीरों का थाल छिन गई!

फिल्म-स्टार इरा का वक्तव्य

आखिर मुझे वह पुरुष मिल गया जिसने नीले घोड़े पर सवार होकर मेरे दरवाजे पर आना था। माँ की लोरी में जिसके आने की खबर मैंने पहले-पहल सुनी थी। वैसा ही डीलडौल वैसा ही नाक

मचना। प्रेम के छलकते कटोरे-सा मन। राज नीले घोड़े पर नहीं संगीत के घोड़े पर चढ़कर आया। मुझे लगा वही आ गया जिसका मुझे सदा इन्तजार रहा जिससे मैंने सदा अपनी गुड़िया से ब्याह किया था। राज को पाकर मेरा सपना साकार हुआ।

यह सब वर्णन पढ़कर नीलू बहुत प्रसन्न हुई। उसका जी चाहा कि उड़कर बम्बई चली जाय।



बाईस

'गुरुत्व' रिलीज़ हुए एक महीना हो गया था। अनेक पत्रों ने इसे इस वर्ष की सर्वोत्तम फ़िल्म घोषित किया, पर यह बाक्स आफ़िस हिट न हो सकी। घाटे के कारण जयन्त दूसरों की फ़िल्मों में काम करने को विवश हो गया।

जयन्त देसाई ने सारा क्रोध उर्वशी पर निकाला—कम्बख़्त ही घिसी पिटी चुनी।

सवेरे की धूप में जयन्त को उर्वशी से उनमने देर न लगी, जब हर कोई अपने अपने काम पर निकल रहा था। पहले तो जयन्त को लगा उर्वशी की देह उस साड़ी की तरह है जो रेलिंग पर सूखने को डाली हो। फिर वह उसकी बुद्धि के लिए सस्ती छींट की उपमा ढूँढकर मन-ही-मन उस पर खीझ उठा।

उर्वशी का मधुर स्वर आज जयन्त को काँटे की तरह चुभ रहा था। इस एप्रिल में जयन्त को हॉलीवुड से लौटे एक बरस पूरा हो जायगा। उसे लगा, उर्वशी ने 'गुरुत्व' बनाने का काम हाथ में लेकर मेरा अच्छा-खासा एप्रिल फूल बनाया।

उर्वशी की मुस्कान भी जयन्त को आज अच्छी न लगी। उर्वशी हँसती है तो निरी किन्नरी प्रतीत होती है, कल तक वह यही कहा करता था। सद्भावना जगाने वाली थीं उसकी बातें कल तक, आज नहीं।

'तो तुम्हारा मतलब है मेरी ही कल्पना से सुनकर 'गुरुत्व' में हाथ

बात तो तुम भी मोल की ही कर रही हो नीलू ! मैं इस बात से इन्कार नहीं करती कि तुमने हमारी नृत्य-कला को आगे बढ़ाया है। बम्बई में तुम्हारी नृत्य-नाटिका मधुमा और जलपरी की सभी ने तारीफ की। तुम उससे भी अच्छी नृत्य-नाटिकाएँ पेश करोगी। तुम्हारे नृत्य अभिनय की धाक तो तभी जम गई थी जब तुमने इरा के जन्म दिन पर एक बार अपना प्रदर्शन किया था। उसकी प्रशंसा तो बड़े-बड़े फिल्म डाइरेक्टरों ने की थी। और तुम चाहती तो आज फिल्मी दुनिया में तुमने बहुत नाम कमाया होता और पैसा भी। नाम और पैसा—आदमी ये दो चीजें चाहता है न !

तीसरी चीज है कलाकार के मन का सन्तोष ! नीलू ने बाँहें लहराकर गम्भीर स्वर में कहा मन का सन्तोष न हो तो काँटा-सा चुभता रहता है।

तो क्या उसी काँटे की चुभन ने आज को बम्बई से भगाया ? पूनम हँस पड़ी कलाकार के मन का सन्तोष क्या होता है ?

गर्वीली-गहरी साँस खींचकर नीलू बोली कलाकार की बात तो कलाकार की समझ में ही आ सकती है पूनम ! यह बात बयान की नहीं अनुभव करने की है।

माफ करना दीदी ! पूनम धीमे स्वर में बोली शायद मैंने यह कहकर अपनी मूर्खता बताई। आत्मश्लाघा से तो मुझे नफ़रत है इरा दीदी जानती हैं। हम एक-दूसरे से हमदर्दी होनी चाहिए। मैंने तो देखा है दो टेकनीशियन मिलकर बैठ जायेंगे पर दो कलाकार हमेशा एक दूसरे की गर्दन पर छुरी चलाने की सोचेंगे। बुराई करने में जाने उन्हें क्या मजा आता है ! मैं मानती हूँ ग़लती अपनी है।

इसीलिए तो उन्हें जाना पड़ा। नाम और धन कमाने से ही उन्हें मतलब होता तो वह दूसरों की बुराई करने से संकोच न करता और सफलता उसके द्वार पर दस्तक देती। कहते-कहते नीलू ने इरा की आँखों में झाँकने की कोशिश की क्यों दीदी क्या मैं कुछ झूठ कह

रही हूँ ?

इरा टस-से-मस न हुई।

तुम्हारी बात विचारपूर्ण है दीदी ! पूनम मुस्कराई, छल कपट और धोखे से दूर हैं दासजी। इसीलिए तो इरा दीदी ने उन्हें जीवन साथी चुना। पर क्या कलकत्ता में वह चीज मिल जायगी जो बम्बई में न मिल सकी ? फ़िल्मी दुनिया में सनसनी फैल गई। लोग इरा की बदनामी कर रहे हैं जैसे इरा ने दास को स्वयं भगाया हो।

मैं जानती हूँ इस समय इरा दीदी दास को देखने को कितनी लालायित हैं। कोई दास को लाकर यहाँ खड़ा कर दे इसके लिए वह बड़ी-से-बड़ी कीमत दे सकती हैं।

इरा को अब भी बोलने के लिए विवश न किया जा सका जैसे वह उस दास को भूल जाना चाहती हो जब उसकी ओर दास की नजरें मिलीं।

मीना पास आकर बोली इरा कुछ तो बोलो। दिल का बोझ उतरे। तुम चुप क्यों बैठी हो ?

इरा अपलक देख रही थी।

चाय आई तो इरा ने कोई चीज मुँह से न लगाई।

साँझ बीती जा रही थी।

सड़क पर कारें आ-जा रही थीं। सजीले नशे में एक-दूसरे को थामते हुए लोग सागर के साथ-साथ चहलकदमी को निकल पड़े थे।

शोभा सहेलियों के कहने से इरा ने बड़ी मुश्किल से चाय का कप उठाकर मुँह से लगाया।

इरा के अन्तर की गहराई से एक भी स्वर न निकला।

बातें बातें बातें ! चालू चुप न रह सकी बातों से कुछ सिद्ध नहीं होता। कुछ तो वास्तविक है !

पर इरा की व्यथा को कौन सुनेगा दादा ? पूनम ने टोककर कहा तुम इस दर्द को तो जानते नहीं। हमारी इरा का कितना परवाना में

डाल गया घास ! उस क्या मिला ? यह तो बहूदगी की हद है कि कोई इस तरह घर से भाग जाय। और फिर पास कोई बच्चा तो नहीं है।

उसने भी कुछ सोचा होगा।

तुम इस मामला कहती हो दीदी ! उसने कोई इनाम लने लायक काम नहीं किया। इतनी जग-हंसाई के बाद अब वह नीन भी क्या न माव। जग हंसाई तो हो ली।

हम यह बात यहा छोड दें।

यहां कैसे छोड दें दीदी ? बरकला म क्या दूसरी दुनिया है ? वहां क्या पेट खान का नहा मांगता ? वहां कौनसा नया सवरा नई आशाएं लेकर आया करेगा नित नित ? और सच तो यह है दीदी उसके सगात के बिना क्या हमारी फिल्मी दुनिया का काम रुक जायगा ? हां हमारी इरा जरूर उदास रहा करेगी। फिर इरा भी उन भूल जायगी। पास घाटे म रहगा। मैं कह रही हूं पास पछतायगा। न खुदा ही मिला न विसाले सनम ! टनटनागोपाल। मजा करेगा बरकला म बैठकर ! बर कला वालो को अनलियन का पता चल गया तो व भी हसेंगे उस पर। उस उल्लू कहा।

नीलू ने हाथ और आंखों के इशारे से कई बार पूनम को बोलन से रोका। छोड़ो यह किस्सा तो बहुत हो लिया पूनम ! हम चलें। इरा दीदी से छुट्टी लें।

इरा की आंखों म दुनिया भर की करुणा साकार हो उठी थी। विवशता की मूर्ति-सी वह चुप बैठी थी।



को जागरी ?



एक

दस वर्ष हो गए। गया गया और लौटा नहीं। कदाचित् वह उन मार्गों पर चल पड़ा—का तव कान्ता कस्ते पुत्र—न तेरी कोई पत्नी है न कोई पुत्र है। कोई बन्धन बम्बई की ओर न खींच पाया। इधर का मोह छोड़ दिया।

इरा एक बालिका की माँ बनी।

बालिका का नाम रखा गया जयजयवन्ती। इरा उसे जया कहकर पुकारती है। दस वर्ष की है जया। किसी से डरती नहीं। समय-चक्र रुका नहीं, ऋतु-चक्र भी चलता रहा। जया को देखकर लगता है गया गया नहीं, यहीं है। माँ से रूप मिला, पिता से स्वभाव। जया को देखकर इरा को नशा चढ़ जाता है। जया की मुस्कान मानो शंख की खबर दे जाती है। शंख इसका मज़ा क्या जाने! रहता तो जया से खेलता। देखता कि जया को गाने का भी शौक है। उस जैसा स्वर तो हज़ार में एक लड़की का होता है।

जया हँसती है तो घुँघरू-सा बज उठता है। मना नानी का तन मन सिहर उठता है। जया की हँसी के साथ शंकर के उल्लास की नौका मानो हिल्लोल लेती है। बी० ए० पास कर चुका है शंकर। अब इंजीनियरिंग कालेज में पढ़ने जाता है। कालेज के कमरे में पढ़ते-पढ़ते शंकर को जया की बातें याद आती हैं जैसे गुलमोहर के फूल दूर से ध्यान खींचते हैं। शंकर का ध्यान रहता है, शंख जाजाजा

को पत्र जरूर लिखा जाय। पत्र म जया की बात ही ज्यादा लिखता है। जया के होठों पर जो अस्पष्ट-सी धुन नाचती रहती है उसी की बात लिखता है। कभी-कभी अबोध दृष्टि से देखने लगती है जया। उसके मुख पर मुस्कान खनती है जैसे जगल म सघन वृक्षों की चोटियों पर पूनम का चाँद समीप खिसक आता है। आँखों में विस्मय और कौतूहल जग जग उठते हैं। अकारण चचल हो उठती है। उसे देखे बिना थोड़ी देर उसके साथ खेले बिना वह कालेज नहीं जा सकता। उसके साथ दो बातें करके दिल खिल जाता है। ऐसी ऐसी बातें लिखकर अपने पत्र म शख को भी लिखता रहता है।

एक तरफ़ माँ-बेटे की मूर्ति पड़ी है—पीतल की मूर्ति माँज-माँजकर चमकाई हुई मूर्ति।

एक तरफ़ मग्न बाबू का फोटो है।

दूसरी तरफ पड़ा है शख का फोटो।

इरा बता रही है

वह रहे मेरे डैडी यह रहे तुम्हारे डैडी!

पीतल की चमाचम मूर्ति की तरफ़ हाथ उठाकर जया पूछती है

यह किसके डैडी हैं?

इरा कुछ क्षण तक चुप रहने के बाद कहती है

यह तुम्हारे डैडी के डैडी हैं।

इरा काम पर चली जाती है। जाते-जाते समझा जाती है कि मूर्ति को गिराना नहीं। जया हाँ म सिर हिलाती है। वैसे ही करेगी जैसे माँ चाहती है। मूर्ति को गिरायेगी नहीं। फोटो का शीशा भी नहीं टूटेगा। आराम से खेलेगी।

अपरिचय का परदा-सा उठ गया। जया अकेली है। आज वह बहुत खुश है। मूर्ति और फोटो नये सिरे से जोड़कर रखती है। बोलती जाती है

यह रहे डैडी के डैडी! यह रहे मेरे डैडी! यह रहे ममी के

डडी !

स्पष्ट है कि जया को अपने ही डडी पसन्द हैं। पर उसके डडी कहाँ चले गये ? घर क्यो नहीं आते ? वह पूछना चाहती है किससे पूछे ?

मना अपने कमरे में बैठी है। बार-बार उसके पास आकर जया पूछती है

मेरे डडी कब आयेंगे ?

मना प्यार में जया की ठोडी उठाकर प्यार करती है। सोचती है हमारी परम्परा चलेगी। जया भी एकदम बनेगी।

आज स्कूल में छुट्टी है। जया पढने जाती है। स्कूल की पुस्तक पढने-पढते वह मना के पास आकर पूछती है

मेरे डडी मुझे मारेंगे तो नहीं ?

मना मुस्कराकर कहती है

पहले सबक याद करो। फिर खेलो तब तुम्हारे डडी आकर अपनी जया को प्यार करेंगे।

पुस्तक को बीच में छोडकर जया फिर मूर्ति और फोटो सजाकर रखती है

यह रहे ममी के डडी ! यह रहे मेरे डडी ! यह रहे डडी के डडी !"

जया अभी बच्ची है। गुडिया का ब्याह रचाती है। गुडिया के बिना नहीं चलेगा खेल।

जया सब सीख रही है। वह सब सीखकर रहेगी। नाना-नानी का हिसाब ना लग जायगी। कल्पना-लोक में ऊँची उडान भरा करेगी वह भी। माता-पिता का उमंग-उत्कण्ठा के बीज बोये जायेंगे उसके मन में। फिर वह ना सोच सकेगी सुदूर भविष्य की बात।

फटाफट बातें करती है जया।

यह रहे डडी के डडी ! यह रहे मेरे डडी ! यह रहे ममी के डडी !

मन यही बोलता है। पर तो बात मुँह से नहीं निकलती। स्कूल की पुस्तक में और-और बातें लिखी हैं। मन की पुस्तक पर दूसरी ही बातें

लिखी है—यह रहे डैडी के डैडी ! यह रहे मेरे डैडी !

बड़ी होकर जया घर की सुविधा असुविधा देखना सीख जायगी।

अभी तो जया बच्ची है।

जया बचारी क्या करे ? उसे नींद आ रही है। नानी क पास जाकर कहती है

मुझे नींद आ रही है।

नानी प्यार स जया का मुह चूमकर वही लोरी दने लगती है जिसम कहा गया है कि नीले घोड़े पर चढ़कर आएगा हमारी जया का दूल्हा।

जया को नींद आ रही है। नींद को कौन रोक सकता है !

क्या यह सब अभिनय है ? नानी सोचती है जया बड़ी होकर अवश्य एक्ट्रेस बनेगी।

दपण म देख रही है नानी ! सोचती है मुह की गठन काफी बदल गई। शरीर का रंग भी वह नही रहा। बाल सफेद हो चले। समय चक्र घूम रहा है ऋतु चक्र भी रुकता नहीं। पेड़ के तने पर लिखी रहती है पेड़ की आयु। मनुष्य की आयु भी छिपाय नहीं छिपती। तीस स ऊपर की हो गई मेरी इरा फिर भी उम्र बीच-पच्चीस के बीच ही बतानी पड़ती है। इतना झूठ तो चलता है फिल्म लाइन म ! एक्ट्रेस को तो जवान ही रहना होता है अपने को जवान मानकर ही चलना होता है। जया अभी बच्चा है। वह सो गई खेल-खेलकर सो गई। खूब खेली। डैडी डैडी कहते थकती नहीं 'यह रहे डैडी क डैडी ! यह रहे मेरे डैडी ! यह रहे ममी के डैडी !

नानी के होठो पर मुस्कान खेल गई। उसने मदन बाबू का फोटो उठा लिया। फिर सोती जया की ओर सकेत करक बोली

क्यों मदन बाबू तुम्हे यह अपनी पोती जया पसन्द है न ? वह तुम्हे ममी क डैडी कहती थकती नहीं। एक्ट्रेस बनेगी हमारी जया। अरे क्या बात है मदन बाबू ! दे डालो आशीर्वाद ! इस बेचारी का डैडी तो

ऐसा गया कि फिर लौटा ही नहीं !

इतने में इरा प्रवेश करती है

किससे बातें कर रही हो माँ ?

तुम्हारे डैडी से !

डैडी क्या सुन सकते हैं ? जया सो गई ?

सोती जया का मुँह चूमकर इरा कहती है

मेरी जया एक्ट्रेस बनेगी !

दर्पण में अपना मुख देखकर इरा सोचती है, अभी तो मैं बीस और पच्चीस के बीच की ही लगती हूँ ! मेरी आयु तक पहुँचते तो जया को तीस साल लगेंगे ! दस साल की हो गई जया। देखने में पाँच की ही लगती है।



दो

बम्बई का जीवन-दर्शन मीना-बाजार तक ही सीमित है, यह कहना तो अन्याय होगा। बम्बई आश्चर्यजनक है। कभी वह एक कवि की शिष्ट भाषा में बोलती है, कभी एक व्यापारी की मुख-मुद्रा के साथ महत्त्वाकांक्षियों का आड़ लेती है। कभी प्रश्नसूचक दृष्टि से देखती है बम्बई। संकट में भी मुस्कराती है, हर समय दौड़ लगाती है। काहिल और सुस्त प्राणी को यहाँ ठौर नहीं। समुद्र दूर नहीं। समुद्र की गहराई में पलती है बम्बई की कल्पना, बम्बई की साधना।

गोविन्दन की शिकायत है कि अहल्या की माँ उपदेशों का ढेर बन गई। एक्स्ट्रा में भरती हुई अहल्या। अब उसे साइड रोल मिल जाता है। माँ गोविन्दन की ऋणी है। सात हजार खर्च करके माँ ने अहल्या का ब्याह किया था, अब तो वह दो बच्चों की माँ है। माँ कहती है, गोविन्दन, तुम ब्याह नहीं करोगे? तुम्हारी इतनी उम्र हो गई? गोविन्दन चुप रहता है।

गोविन्दन टिप-टाप बाहर निकलता है—टेनर मेड चाय! जब तक यहाँ रहा, गोविन्दन उसे अंग्रेजी सूट पहनने को कहता रहा। उस भले आदमी ने करने को वेष-भूषा न छोड़ी। गोविन्दन तो बम्बइया छाप म्यूजिक-डायरेक्टर है। प्रोड्यूसर डाइरेक्टर जिस वेष में रहते हैं वही गोविन्दन को प्रिय है।

धन्य है हमारा टेप रिकार्डर माँ! उधर रेडियो पर दुनिया के

किसी भी स्टेशन से गाना आ रहा है। जो गाना हमें थोड़ा काम का लगा टेप पर भर लिया। नया गाना बनाना कौन मुश्किल! एक की टांग एक का सिर। गाने की धुन निकाल दी! कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा भानमती ने कुनबा जोड़ा! ऐसे ही चलता है माँ! बीस-पीढ़िया संगीतकार गोविन्दन! गुरुदेव रुद्रपदम् का सुपुत्र! बम्बई के मीना बाजार का म्यूजिक डाइरेक्टर! चलेगा ऐसे ही चलेगा। हमारी धुनें बिकती हैं। उन्हीं धुनों पर राज राज अनुपम गीत लिख डालता है। इधर हमारा नाम उधर राज राज अनुपम का नाम। दुनिया वाह-वाह कर रही है। कहती है गोविन्दन के संगीत का जवाब नहीं। राज राज अनुपम एक गीत का एक हजार से कम नहीं लेता। वह देता है वह बिजी है। बम्बई का मीना-बाजार उसी के आगे झुकता है जो बिजी है। मैं भी बहुत 'बिजी' हूँ। एक साथ चार-चार पाँच-पाँच फिल्मों में संगीत देना मजाक तो नहीं।

इस लम्बे भाषण के उत्तर में माँ इतना ही पूछती है "तू कब आयेगा बेटा?"

माँ जानती है सच्चा संगीतकार तो घर है। सच्चे आत्मा को बम्बई से भागना पड़ता है। सच्चे आदमी का सच्चा संगीत यहाँ नहीं चलता। माँ गाने लगती है

रेनिया होइ गई मोर सवतिया पिया के लादि नई गइ ना!

उसकी आँखें चमक उठती हैं जैसे कह रही हो—संगीत तो यह था! तुम क्या धुन बनाओगे बेटा नक्काल!

उसको उतारा है।

जयन्त की नोटबुक में दोस्त का उद्धरण पढ़ती है

एक चिड़िया से किसी ने पूछा— तुम्हारे गीत इतने छोटे क्या हैं? तुम्हारी साँस थोड़ी है इसलिए?

नहीं इसका कारण यह है कि मेरे पास बहुत से गीत हैं और मैं उन सभी को गाना चाहती हूँ।

और उर्वशी के मन प्राण सिहर उठते हैं 'गुरुदेव' की सिगनेचर ट्यून लगाती है सुनते-सुनते विभोर हो जाती है।

जो नई फिल्म तुम बना रहे हो जयन्त उसका संगीत तो एकदम रद्दी है।

'काई गुरुदेव' तो अब मैं बनाने से रहा। यह और बात है कि 'गुरुदेव' की आठ-दस साल बाद पब्लिक में कुछ पूछ हो रही है, पर बाजार भाव तो दूसरा ही है।

गुरुदेव ने एक स्टेण्डर्ड कायम किया यह तो दुनिया ने माना। बाजार में कैसी हवा चल रही है, यह बिलकुल अलग बात है।

उर्वशी जानती है कि जयन्त अब हॉलीवुड के नुसखों को जोड़ तोड़कर जो फिल्म बनाता है सब बाक्स ऑफ़िस हिट हो जाती हैं। पर घटिया संगीत से कभी-कभी उसका मन ऊब जाता है। गुरुदेव की सिगनेचर-ट्यून लगाकर कभी-कभी वह कहता है बस इस बात पर मैं गर्व कर सकता हूँ उर्वशी कि कभी मैंने इतना बढ़िया संगीत दिया था। जमाने की मार है! जमाने के साथ चलना पड़ता है।'

इन्सान वह है जो जमाने को अपने साथ चलाये।

ये बातें भी हम इसलिए कर रहे हैं कि रुपया आ रहा है। दीवाला पिट जाय तो सब आदर्श धरे रह जायें।

उर्वशी उदास है यह बात जयन्त से छिपा नहीं।

मेरी हालत उस चिड़िया की-सी है जिसके पास बहुत से गीत थे और वह उन सबको गाना चाहती थी।

तुम्हारे पास घटिया गीत ही ज्यादा हैं जो बाक्स आफ़िस हिट हो जायें!

'जिन्दाबाद गोविन्दन! मेरी चिड़िया तो वही है। जिन्दाबाद राज राज अनुपम जो मेरे लिए गीत लिखता है। जिन्दाबाद प्ले बैक सिंगर

जिनकी आवाज का जादू बोलता है सिर चढ़कर ! इस वक्त का इन्तजाम न रहता तो हमारे बहुत से हीरो बेकार हो जाते तुम्हारी इरा जैसी हीरोइन भी चार कदम न चल सकती ! अब तो इरा भी बुलबुल की तरह गाती है !

तुम इरा को भूल जाओ । उसे मनोज के लिए रहने दो ।

तो तुम्हें भी मुझ पर सन्देह है ! किसी ने ठीक ही कहा है वामन दाई नेम इज जैलसी [नारी तेरा नाम है ईर्ष्या !]

उर्वशी उदास है । बहुत दिनों से उसने इरा की शक्ल तक नहीं देखी ।

मनोज इरा को भूल नहीं सकता ।

वह इरा को घायल चिड़िया समझता है । उस उसकी आँखों में कैसी वेदना घोल गया यह वह आज तक नहीं समझ सका । उसे लगता ब्याह में ब्याह करने के बाद भी इरा कुमारी है । वह जया की माँ है—इस बात की जया की माँ वह बात भी उसके सामने नहीं टिकती । फिल्म में हजार बार दुलहिन बनती है इरा । हर बार वह कुमारी ही होती है यह बात मनोज के दिल में लगती है ।

इरा के प्रेमियों की कमी नहीं । कई बार सोना-बाजार में यह ढिंढोरा पिट चुका है कि इरा फिर से ब्याह रचाने जा रही है और प्यार का वह मक्खी की तरह दूध से निकाल चुकी है ।

मनोज यह बात भूल सकता है कि इरा आखिर एक तवायफ की बेटी है । वह यह बात मानता है नारी से प्रेम करने के लिए परम आवश्यक है कि हम उसके अतीत को भूल जायें ।

जयन्त ने अपनी दूसरी फिल्म में इरा को हीरोइन बना दिया । स्वयं हीरो बना । मम्मव्रत को शरम भी नहीं आती । घर में उर्वशी जैसी अप्सरा पत्नी है फिर भी इरा के पीछे भागता है । एक्टर और प्रोड्यूसर

ने भी इरा और जयन्त की जोड़ी पेश की। जयन्त ने अपनी तीसरी फिल्म में इरा को ऐसा हाथ पर चढ़ाया, प्यार-मुहब्बत के ऐसे-ऐसे दृश्य पेश किये जिनमें अभिनय करते-करते इरा उनमें डूब गई।

मनोज अपने मित्रों में कई बार यह चर्चा ले बैठता है, जयन्त और इरा ने मजे लेने के लिए कुछ ऐसे दृश्य भी फिल्माये जो सक्स अपील और न्यूडिटी [नग्नता] के गरमागरम मास्टरपीस थे। ये सब फिल्म के रसियों को तो न दिखाये जा सकते थे। फ़िल्म में तो वही सीन रहे जिनकी सेन्सर ने आज्ञा दी।

महफ़िल में बैठे मित्र मनोज की ओर सहानुभूति से देखते हैं तो शह पाकर मनोज कहता है इरा की कितनी ही नग्न मूर्तियाँ और फ़ोटो जयन्त ने बनवाये।

इसे आर्ट से दिलचस्पी भी कह सकते हैं। कोई चुस्की लेता है।

पर माई डीयर यह बात भी दुनिया से भूली नहीं कि घण्टों बन्द कमरों में जयन्त और इरा वह इण्टरेस्टिंग खेल खेलते थे जिसे रिहर्सल का नाम दिया जाता है!

इस बीच एक फ़िल्म में जिसका प्रोड्यूसर मनोज ही था मनोज ने इरा को हीरोइन बनाकर जयन्त के दाँत खट्टे करने की पूरी कोशिश की थी। पर न तो वह जयन्त वाले दृश्यों के स्तर तक उभर सका, और न इरा ने ही उतनी दिलचस्पी दिखाई। उधर जयन्त ने शोर मचाया कि इरा पर तो एकमात्र उसी का अधिकार है। इरा को विश्वास हो गया कि फ़िल्म में उसका भविष्य जयन्त के साथ बँधा है। इरा ने जयन्त के साहस को सराहा। उसकी जैसी सुन्दरी का पति होकर भी यह पीछे नहीं हटता। बदनामी का भय जैसे जयन्त को छू तक न गया हो!

मनोज सारी वस्तुस्थिति की खिल्ली उड़ाता है मन-ही-मन। कोई बात हुई भला! अब तो यही भेड़चाल चल पड़ी है। सभी प्रोड्यूसर जयन्त और इरा की जोड़ी ले रहे हैं। रही-सही कसर जयन्त अपनी कला

माबीटोन' म निकाल नता है। इरा को घन ही जयन्त क साथ काम करने को रहती है। प्रोड्यूसर मजबूर होकर जयन्त को लेता है। जयन्त भी अकड़कर इरा क बराबर कीमत माँगता है। धन्य हो गुरु! पूरे चार सौ बीस ही तो हो जयन्त भाइ! जा-बजा अपनी कीमत बढ़ा रह हो।

यह जमाना भी खूब है! अशोक कुमार हीरो तो नलिनी जयवन्त हीरोइन। मतलब यह कि अशोक क साथ नलिनी की कीमत बढ़ती गई। सुरया न दवानन्द को बढ़ावा दिया। दिलीप और कामिनी। उन्हीं क अनुसार कहानी की कास्टिंग करनी पड़ती है।

मनोज सोचता है जयन्त क पास कोइ जादू की अंगूठी तो नहीं जिसके जोर स उसन इरा को मुफ्त हथिया लिया। कोइ महफिल हो कहीं भी फोटो लिया जा रहा हो भीड़ चीर आकर सा-सा चहरा लिय जयन्त आकर इरा के पहलू म खड़ा हो जाता है।

मनोज को जयन्त स यह भी शिकायत है कि वह अपनी पिक्चर में इरा को हमेशा अपने स कम रोल देता ह सारी कहानी अपने गिर्द नचाता है।

मनोज सोचता है परती गान ह एक दिन इरा पलटकर मेरी तरफ देखगी और जयन्त क चक्कर स निकल आयगी। इरा का ध्यान आत ही उसका रग रग म घुघरू बज उठत हैं। वह मन-ही-मन कहता है, इरा करोड़ों दिलों पर राज करती है मेर दिल पर भी!

इरा का ध्यान आत ही मनोज को चेखव क एक पत्र क य शब्द स्मरण हो आत हैं स्त्री का वर्णन इतना सजीव और जानदार हो कि उस पढ़ते ही आप ऐसा अनुभव करने लगें जस आपक जूतों पर पालिश नहीं है जस आपकी टाई की गाँठ ठीक नहीं बधी है, बिलकुल एस ही जस आप वास्तव म किसी स्त्री को देखकर अनुभव करत हैं।

इरा का आदर करता ह मनोज। दिन म एक-आध बार उसस मिल बिना तो उसका काम नहीं चलता। अवसर पा जाय तो दर्जनों उसन साथ बिता देता है। जयन्त वहाँ उपस्थित भी क्यों न हो वह

सिर्फ इरा को देखता है।

सच बात तो यह है इराजी हम एक डाल के पंछी हैं। मजे से एक पिक्चर में काम करने के दो-ढाई लाख मिल जाते हैं।

कभी यह पिक्चर कभी वह पिक्चर। शूटिंग में ही हमारे प्राण छूट जायेंगे। रुपया तो साथ जाने से रहा।

प्रेम को शूटिंग से ही मत नापो। रुपये से ही मत तोलो।

प्रेम ? वह यहाँ कहाँ ? और रुपया किसके हाथ में टिका है ?

दास का पत्र तो आना होगा ?

क्या नहीं ?

जया को देखने नहीं आया दास ?

इसमें मैं क्या बोल सकती हूँ ?

कम्बख्त को कला की पूरी समझ है। पर इस मीना-बाजार का तो बाबा आदम ही निराला है। हमारी इरा को शादी के सफेद वस्त्र पहनने सिखा गया और फिर लौटकर न आया।

आ जायगा जब उसका मन चाहेगा।

उसके संगीत की सबसे बड़ी विशेषता है संयम। सन्तुलन में भी उसका जवाब नहीं। पर लोग तो चुलबुलिया चयाचम गाने ही पसन्द करते हैं। जहाँ झूठ निभ सके वहाँ सच कैसे टिके ? गोबिन्दम का संगीत चलता सिक्का है।

इरा को प्रभावित करने का कोई भी अवसर मनोज हाथ से नहीं जाने देता। आपणबाजी से भी नहीं चूकता। प्रेम की रंगभूमि पर भी क्या प्रॉम्पटर चाहिए ? प्रेमी को घोड़े की तरह हिनहिनाना तो नहीं चाहिए। बम्बई ड्राई हो गई। एक्टरों की आवाज भारी होने का डर न रहा। मन के भीतर के शैतान को छुट्टी दिये बिना प्रेम पनप नहीं सकता। सादगी चाहिए सचाई चाहिए। छल नहीं कपट नहीं। तब जलता है प्रेम का दीया !

बातों के बिना ही ! इरा हँस पड़ती है।

प्रम कोई बनावट नही फ्गन नही। प्रेम तो इसानियत का अमर कहानी ह। प्रम तो पूजा है।

तो मन्दिर म जाकर मूर्ति पर फूल चढाइए। इरा फिर हँस पड़ती है।

इस प्रकार की अनक मुलाकात होती ही रहती हैं। अभिनय मात्र अभिनय। मनोज को इसका दुख है। इरा को वह अभिनय म कहा मूल्यवान समझता है। एक दिन इरा मेरी होकर रहेगी। वह सोचता है फिर मुझ पर मरी बाता पर हँसगी नही। अपनव आँखो स इरा की ओर दखता है इरा न बात किय बिना ही नशा-सा चढने लगता है। दूसरी कोई सुन्दरी मनोज का मन नही मोह सकती ब्याह क चक्कर म पडने का तो प्रश्न ही नहा उठता। अपनी कम्पनी फल हा गइ। दूसरा की कम्पनिया म काम करना पडता है—हीरा का काम। पन्न हीरान्न होती थी इरा। अब तो नई-नई हीरोइनें आ गइ। किसी के साथ मन का मेल नही बठता। मन की कचन-ठुमरी है इरा। युग-युग जीओ इरा। शायद एक दिन तुम मेरी बनना स्वीकार करो। मरे मन मन्दिर की देवी युग-युग मुस्कराओ। गत अब नही आयगा। उसका खयाल छोड दो। जयन्त अपनी उवगी का है उसे भी छोडो। अपनी गाडी चल सकती है मजे से।



तीन

मुक्तिबोध से मिलिए, तो वह अपने अनुभव की पिटारी खोलकर बैठ जाता है। वह बलपूर्वक कहता है

एक दौर में म्यूजिक-डाइरेक्टर को सबसे अधिक पारिश्रमिक दिया जाता था। दूसरे दौर में हीरोइन ही इस तराजू में सबसे भारी तुलने लगी। अब हीरो ढाई-तीन लाख में तुलता है। एक फ़िल्मी पत्रिका के सम्पादक ने ठीक ही लिखा है—दुनिया की कौनसी ऐसी इण्डस्ट्री है जिसमें मुँह रंगकर पचीस-चालीस रोज काम करने का मुआवजा ढाई या तीन लाख रुपया है? छः, आठ या दस लाख की लागत की फ़िल्म का चौथा हिस्सा सिर्फ़ हीरो का ही दे दिया जाय तो मुनाफ़ा खाक आएगा? फ़िल्म निर्माता भी जानता है कि आज अमुक हीरो लोकप्रिय है। बड़ी रकम देने के बाद भी हीरो जो एक साथ छः छः सात-सात फ़िल्मों में काम करता है, एक फ़िल्म की शूटिंग के लिए ज्यादा-से-ज्यादा चार या पाँच रोज ही दे सकता है। जिन फ़िल्मों में कास्ट पर पूरी रकम खर्च कर दी जाती है, उन फ़िल्मों में काम करने वाले दूसरे लोगों को मुआवजा बहुत ही कम मिलता है। फ़िल्म कौन तैयार करता है—आर्टिस्ट या टक्नीशियन? फ़िल्म के विभिन्न विभागों में काम करने वाले लोगों के मुआवजे में इस समय जो लम्बा फ़ासला पाया जाता है वह फ़िल्म इण्डस्ट्री के भविष्य के लिए बहुत भयानक है।'

राज राज अनुपम और शखर एक साथ चाय पी रह हैं।

हिसाब लगाकर देखता हूँ शेखर भाई ! मैंने हजारो गीत लिख डाल पर मुझे उनका मोल क्या मिला ?

आज य बहकी बहकी बातें क्यो कर रहे हो ? शेखर हँस पडता है अगले जन्म म लडकी का जन्म लेना। फिर तुम्ह भी इरा जिवन पसे मिल सकते हैं। लाखो म खेल सकोगे।

इस जन्म म क्यो नही ? जयन्त और मनोज को क्या सुरखाब क पर लगे हैं ?

खर छोडो। आजकल तो जयन्त और इरा का जोडा खूब चल रहा है।

मनाज पीछे रह गया।

मनोज ने अब तक शादी नही की।

इरा को हथियाने का सपना देखता है कम्बख्त !

शायद उसका सपना सच हो जाय। शख ता लौटकर आने स रहा।

जयन्त को मिल इरा चाह मनाज को। हम तो पूरी मजदूरी मिलनी चाहिए।

शेखर पढ़ने डटकर गाविन्दन की चटपटी धुना की प्रशसा करता है। फिर कहता है तुम तो इतने पम मार लत हो कभी हमारे लिए सोचा है !

क्यों तुम्हारा गुजारा ठाक नही चल रहा ?

मजा आ जायगा जब लाखों म तुलने वाल सफद हाथी हमारे अग तुलेंगे। खर छोड़ो। आजकल फ़िल्मी हलका म इस बात पर गरमा गरम बहस हो रही है कि किसी फ़िल्म क लिए एवाड किस मिलना चाहिए।

सत्यजीत राय ने अच्छा किया कि फ़िल्म फेडरेशन ऑफ़ इण्डिया के जलसे में शामिल न हुआ।

मज़ा आ गया गोविन्दन जी! राजकपूर के 'जागते रहो' को चेकोस्लोवाकिया के फ़िल्मी मेले में बेहतरीन फ़िल्म करार दिया गया और सत्यजीत राय की 'अपराजिता' को वीनस के फ़िल्मी मेले में दुनिया की सर्वोत्तम फ़िल्म कहकर इज्जत बख्शी गई। इस पर हमारी फ़िल्म फेडरेशन ऑफ़ इण्डिया की नींद टूटी और उन्होंने जलसा किया। हमारे देश की नींद हमेशा पीछे टूटती है। टगोर की 'गीतांजली' पर नोबल प्राइज़ दिये जाने के बाद ही तो हमने टगोर को पहचाना था।

बात तो सत्यजीत राय की चल रही थी। राजकपूर ने तो मज़े से जाकर अपना सम्मान करा लिया। पर सत्यजीत राय ने लिखा—मैं फेडरेशन का यह सम्मान सिर्फ़ डाइरेक्टर की हैसियत से ही प्राप्त कर सकता हूँ प्रोड्यूसर की हैसियत से नहीं क्योंकि वीनस के फ़िल्मी मेलों में मेरी कलात्मक प्रतिभा को सराहा गया न कि मेरी जेब को!

जानते हो इसके पीछे क्या बात काम कर रही थी?

वही न! दो साल पहले सत्यजीत राय की 'पथेर पांचाली' को भारत सरकार ने सर्वोत्तम फ़िल्म करार दिया था। नेशनल लेबोरेटरी दिल्ली में 'पथेर पांचाली' का एवार्ड सत्यजीत राय ने नहीं बंगाल सरकार के डाइरेक्टर ऑफ़ पब्लिसिटी ने प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू के हाथों से प्राप्त किया हालाँकि सभी मानते थे कि इस फ़िल्म की सफलता सत्यजीत राय की डाइरेक्शन के कारण हुई, न कि बंगाल सरकार की जेब के कारण।

अरे भाई, यह दुनिया है। सब चलता है।

अहल्या के मुख पर मेक-अप का नहीं खुशी का रंग खिल रहा है। माँ एक खुशखबरी सुनोगी?

क्या ?

'हमारे पसे वढ़ जावेंगे।

क्म ?

वड़े-वड़े आर्टिस्टा क पसे घटेंगे तो हमारे पसे बढ़ेंगे यह ता पक्की वात है।

लड्डू मन ही फूट जाय उसम न तुम्हें तो हिस्सा मिलन स रहा।

यह गलत बात है माँ ! यह मजदूर का जमाना है। हम मज दूर ह। यह नहीं चलता कि वड़े-वड़ आर्टिस्ट तो ब्लक म सत्तर-सत्तर अस्सी अस्सी हजार माँगें और हम नफेम भी पाँच सौ पूरे न मिलें।

य बात बनामागा तो इनने से भी जाओगी जो तुम्ह मिल रहा है। यह तो गोविन्दन के कारण तुम्हें साइड रोल मिल जाता है नहीं तो एक्स्ट्रा म भी कोई न पूछ। भगवान् का नाम लो। जो मिलता है ठीक है।

मना की समझ म यह बात नहा आती कि बडे आर्टिस्टा को बडी रकमों के विरुद्ध दामन साहब क्या इतने चिल्ला रहे हैं। बड आर्टिस्टा का ज्यादा-स-ज्यादा मुआवजा मिल तो दामन साहब की जब स कुछ जाता नहीं और अगर बडे आर्टिस्टा का मुआवजा कम हो जाता है तो इसस दामन साहब की जब म कुछ आता नहीं।

मैं कहती हू बटी एक दिन 'फिल्म फ़यर' के एडीटर को पार्टी कर दो। साथ ही दामन साहब को भी जरूर बुलाना।

व लोग तुम्हारा गाना सुनने की जिद करेंगे माँ।

मैं सुना दूगी मन ही मैंने गाना बन्द कर रखा है। तुम्हारी पब्लिसिटी तो इन्हीं लोगा क हाथ में है न बटी ! इन्हें खुश रखा करो।

इरा माँ के पास बठकर फिल्मी पत्रिका म प्रकाशित नरगिस का एक सस्त पढ रही है बड़ ग्रार्टिस्ट बड़ी रकमें ।

रूस म मैं दो बार गई हूँ । रूस जस कुछ एक देशों म आर्टिस्ट लेखक या सास्कृतिक सरगर्मियों में हिस्सा लेने वालो को सबस ज्यादा मुआवजा दिया जाता है । ये लोग स्टेज और सिनेमा म काम करते हुए लाखो रूबल्स कमाते है और उन्हे लाखो रूबल्स देत वक्त कभी किसी को मानसिक कष्ट नही होता । "

हमारी फिल्म इण्डस्ट्री का ढाँचा कुछ अजीब-सा है और हमारे फिल्म आर्टिस्ट की जिन्दगी म तरक्की का दौर सिफ चन्द साल तक रहता है । जिस इण्डस्ट्री म बड़ी उम्र के आर्टिस्टो को नजर अन्दाज किया जाता है और बाज औकात जिन्हे अपनी फिल्मी जिन्दगी के आखिरी दौर म एक एक्स्ट्रा के तौर पर काम करना पड़ता है उस इण्डस्ट्री म कोई एक्टर या एक्ट्रेस बुरे दिनो के खिलाफ अपनी हिफाजत करे तो किस तरह ?

मेक अप रूम कण्टीन स्टूडियो की स्टेज गुसलखाना—गर्जे कि स्टूडियो से सम्बन्धित किसी भी हिस्से को देखा जाय हर हिस्से म घण्टो बठना तो दरकिनार घडी भर क लिए रुकना भी स्वास्थ्य के लिए हानिकर है । जहाँ काम करने म बकायदगी हो जहाँ काम करन क तरीके गैर-यकीनी हो वहाँ एक आर्टिस्ट की जिन्दगी कसे खतर स खाली रह सकती है ? और अपने आपको इस खतरे स बचान क लिए सिफ ज्यादा-स-ज्यादा रुपया कमान की बजाय और कोई तरीका भी तो नहीं ।

बुढापे क लिए कोई पेंशन नहीं । फिल्म के अलावा दूसरे कामो म बड़ी उम्र के आर्टिस्टो की कलात्मक योग्यता स लाभ उठान का कोई प्रबन्ध नहीं ।

मेरी राय यह है कि फिल्म म बडे आर्टिस्ट हो या छोटे फिल्म को उनकी सुविधा स परखना चाहिए । पयेर पाचानी नगर नगर

पायन वाड' और प्यासा आदि फिल्मों की सफलता ने यह बात सिद्ध कर दी है कि बड़ी कास्ट की फिल्म बनाना ज्यादा बहतर है।

हाल ही में गायन आपको याद होगा मदर इण्डिया' में आग के एक दृश्य में मुझे एक हादिसे का शिकार होना पड़ा और मैं बाल बाल बच गई। मुझे यकीन है कि अगर कहीं यह हादिसा मेरी शक्ल सूरत या जिस्म के किसी हिस्से पर जो अमर अन्दाज होता तो फ़िल्मों में काम देना तो दरकिनार कोई फिल्म निर्माता यह जानने के लिए भी मेरे पास न आता कि मेरा क्या हाल है ?

फिल्मों में काम करते हुए नुकसान की तलाफ़ी या बीमा का कोई बन्दोबस्त नहीं।

मैंने हर फिल्म में जी लगाकर काम किया है। मुझे अपने पेशे पर फ़ख्र है। फ़िल्म के सरमाये पर बोझ बन बग़ैर हम फिल्मों गाड़ी को निहायत खूब अस्लूबी से चला सकते हैं।

माँ कहती है कसी-कभी दलीलें दी हैं बहुत बाई की बेबी रानी ने! अच्छा हो कि इस समस्या पर तू भी एक लेख लिखे इरा! हमारे पट पर नाव मारते हैं तुम्हारे दामन साहब! बेटी कभी कभी उन्हें ध्यान पर बुला लिया करो। इन लोगों का मुँह बन्द रखने का सबसे अच्छा उपाय तो यही है। किसी ने कहा है न—दिमाग का जाने वाला रास्ता पेट से होकर जाता है।

इरा मुस्कराती है मेरी राय तो तुम जानती हो। मेरी तो शुरू से ही यह राय रही है कि फिल्म में आर्टिस्टों के साथ-साथ टेक्नीशियनों के साथ ज्यादा-से-ज्यादा न्याय किया जाय।



चार

दामन साहब एक फिल्मी पत्रिका के सम्पादक हैं। नरगिस का लड़
वड़े आर्टिस्ट बड़ी रकमें छापकर उन्होंने अपनी पत्रिका का ढोल बजा लिया।

सम्पादकीय लेखों में दामन साहब आजकल बड़े आर्टिस्टों को दी जाने वाली बड़ी-बड़ी रकमों के विरुद्ध लिख रहे हैं। अपनी विचारधारा के पक्ष में उन्होंने हाल ही में इस का एक लेख प्रकाशित किया है।

दामन साहब की दलील है— इतनी बड़ी-बड़ी रकमों का मुतालबा करने वाले फ़िल्म आर्टिस्ट अपने साथ फिल्म इण्डस्ट्री को भी ले डूबेंगे। सम्पादकीय का शीर्षक है— 'नये चेहरों की तलाश'।

इस सिलसिले में दामन साहब ने निर्देशक शान्ताराम, सोहराब मोदी और दिलीप कुमार के साथ इण्टरव्यू लिया और उनके विचार पाठकों के सामने पेश कर दिए।

शान्ताराम ने अपने उत्तर में कहा

कोई मुझसे पूछे कि फिल्मी सितारों को ज्यादा मुआवज़ा दिया जाता है तो मेरा जवाब है कि नहीं—क्योंकि कम-से-कम मुझ पर ज्यादा मुआवज़ा देने का इलज़ाम नहीं लगाया जा सकता। इसके बर-अक्स मुझ पर तो यह इलज़ाम लगाया जाता है कि मैं बहुत कम मुआवज़ा देता हूँ। दरअसल मैं सितारों के नाम पर अपनी फ़िल्म बेचने की कोशिश नहीं करता। 'झनक झनक पायल बाजे' की फिल्मबन्दी में

पहले मुझसे कहा गया था कि मैं सन्ध्या की बजाय वजयन्तीमाला आदि किसी मजी हुई नतकी को लू । इसी तरह 'तूफ़ान और दीया' के समय भी अनुभवी आर्टिस्टो को लेने का उपदेश दिया गया। पर इन दोना फ़िल्मों म नये लोगों से काम लिया गया और सब जानते हैं कि प्रयोग सफल रहा। इसका मतलब यह है कि हमारे देश म कलात्मक प्रतिभा की कमी नहीं। अगर फ़िल्म-निर्माता मुनासिब तरीके से नये चेहरों को ढूंढ निकालें तो बडे सितारों के पीछे दौड़ने की जरूरत ही नहीं।

सोहराब मोदी ने ये विचार प्रकट किये :

सितारों को हरगिज ज्यादा मुआवजा नहीं दिया जाता। फ़िल्म इण्डस्ट्री म हर प्रतिभावान् व्यक्ति की खुशहाली का दौर काफी लम्बा होता है। मगर फ़िल्मी सितारे ज्यादा-से-ज्यादा दस साल तक चमकते हैं। अपनी खुशहाली के दौर म उनकी आमदनी का बहुत सा हिस्सा टैक्सों की सूरत म निकल जाता है और जब वे रिटायर होते हैं तो उनके सामने अपने लम्बे चौड़े परिवार को पालने का सवाल पैदा होता है। गैर यकीनी भविष्य का यही भय उन्हें बड़ी-बड़ी रकम मांगने पर मजबूर कर देता है। असल में अभिनय का पेशा दूसरे पेशों से मुख्तलिफ है। दूसरे तमाम पेशों म परिपक्वता इन्सान की जिन्दगी में ज्यादा आमदनी लाती है। मगर अभिनय के पेशे म ज्योंही अभिनेता के अभिनय म परिपक्वता पैदा होती है वह महसूस करता है कि अब यह पेशा छोड़ने का वक्त आ गया है। इसलिए सितारे अपनी जवानी म ज्यादा-से-ज्यादा आखिर क्यों न कमायें ?

दिलीप कुमार ने यह वक्तव्य दिया

जब फ़िल्म निर्माता बड़ी रकम पेश करें तो आखिर फ़िल्म आर्टिस्ट उन्हें लेने से क्या इन्कार करें ? यही कारण है कि इस समस्या को किसी और पहलू से देखना चाहिए। फ़िल्म निर्माता सितारों को बड़ी रकम इसलिए पेश करते हैं क्योंकि सरमायादार से सरमाया लेने

और फिल्म की फरोख्त का दारोमदार इस बात पर है कि आखिर उनकी फिल्म में कौनसे आर्टिस्ट काम कर रहे हैं। इसलिए यह कहने की बजाय कि सितारों को ज्यादा मुआवजा दिया जाता है यह बात ज्यादा कहूंगा कि फिल्म निर्माताओं को कम अदायगी की जाती है। इस प्रश्न का एक और पहलू भी है कि जब फिल्मी बजट का सबसे बड़ा हिस्सा फिल्म-आर्टिस्ट ले जायगा तो जाहिर है प्रोडक्शन के दूसरे विभागों पर खर्च करने के लिए फिल्म निर्माता के पास बहुत ही कम रुपया रह जायगा। और चूंकि फिल्म की सफलता में सिर्फ फिल्म आर्टिस्ट का ही नहीं दूसरे विभागों का भी बहुत हाथ होता है इस लिए जो आर्टिस्ट ज्यादा मुआवजा लेता है दूसरे मानों में वह खुद अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारता है। इसके बावजूद कहा जा सकता है—क्योंकि फिल्म आर्टिस्टों का भविष्य गैर-यकीनी है इसलिए वे बड़ी रकमों का मुतालबा करने में हक-बजानिब हैं।

अपनी टिप्पणी में दामले साहब ने यह सुझाव दिया कि नये चेहरों को बनाने में कोई कसर उठा न रखी जाय। साथ ही दामले साहब ने यह चेतावनी दी—नये चेहरे पैदा करने वालों में आत्मविश्वास तो होना ही चाहिए। पर नये चेहरों को लेना जहाँ अकलमन्दी है वहाँ यह कर्म फिल्म निर्माता की नाव को डुबो भी सकता है क्योंकि यह जरूरी नहीं कि नये चेहरे फिल्म को सफल बना दें। यह सौभाग्य की बात है कि शायद ही कोई फिल्म होती होगी जिसमें एक-न-एक नया चेहरा पेश न किया जाता हो। 'मदर इण्डिया' में निर्देशक महबूब ने मजरा के नाम से एक सुन्दर चेहरा पेश किया है। इस फिल्म में नन्हा अभिनेता साजिद भी नये अभिनेताओं की पंक्ति में विशेष स्थान रखता है। हीरो की भूमिका के लिए राजकुमार को भी किसी भी फिल्म में स्थान दिया जा सकता है। चित्रराय 'अपराधी कौन' में लीलीन के नाम से एक नया चेहरा पेश कर रहे हैं। जी० पी० सिप्पी की फिल्म 'नौरोफर' में फीरोज के नाम से एक नया चेहरा हीरो को

भूमिका म पेश हो रहा है। फिल्म निमाता गुरुदत्त अपनी फिल्म 'गौरी' म अपनी पत्नी और प्रसिद्ध प्ले-बैक गायिका गीता दत्त को हीरोइन की भूमिका म ला रहे हैं। अन्त म शमन साहब ने यह सुझाव दिया कि फिल्म निर्माताओं के लिए अधिक-से अधिक नरमाया उपलब्ध करने हेतु किसी कारपोरेशन का निमाण बहुत जरूरी है और यह सारपाराान सरकारी सहायता के साथ खड़ी की जा सकती है।

प्रसिद्ध कहानी-लेखिका और फिल्म निमाता इस्मत चुगताई ने मा 'यह आर्टिस्ट बडी रकम' के सिलसिले म मजेदार बातें निग

नरगिस एक महान अभिनेत्री है और बहुत प्यारी लड़की है पर उन की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं पर या उचटती हुई राय न दें तो और भी प्यारी लगेगी। फिल्म आर्टिस्ट लाखों लेते हैं क्योंकि प्रोड्यूसर देता है जिसे डिस्ट्रीब्यूटर देते हैं जो सिनेमावाले से पैसा वसूल करते हैं जिनके हाथ म जनता के बटुए की डोरी है।

और बेचारा प्रोड्यूसर तो ट्रंग पूग दलाल है। बाजार में जिस चीज की माँग होती है वही थान म सजाकर बैठ जाता है। वह तो व्यापारी भी नहीं सड़क पर चिल्ला-चिल्लाकर बेचने वाला फेरी वाला है।

यह रस और चीन की निंदा मगर नरगिस ने न दी होती तो अच्छा था। ऐसी नाजुक निशाना से बहुत से लरिन्ड घिर जाते हैं। नरगिस तो वहाँ के बड़े कलाकारों से मिली होगी। काश वह उनसे पूछती कि वे कितना रुपया ब्लैक की सूरत म लेते हैं। ब्लैक मे रुपया लेने का यह मकसद होता है कि सरकार को इन्कम-टैक्स न देना पड़े क्योंकि उस देश की कलाकार कोई रसीद नहीं देते। यह प्रोड्यूसर की बात पर नहीं जनता की जेब पर डाका है।

आपको शायद मालूम नहीं कि वह रुपया जो ये नामदार कलाकार ब्लैक की सूरत म लेते हैं प्रोड्यूसर बेचारा उसका हिसाब कैसे बराबर कर करता है। झूठी रसीदें बनाई जाती हैं। जिस दाट

आर्टिस्ट को सौ दिये जाते हैं, उससे पाँच सौ की रसीद ली जाती है। कुछ ऐसे भी बेकार और मजबूर हैं जो एक वक्त की रोटी खाकर रसीदें भ जात है। यह चक्कर इतना पेचीदा है कि इन्कम-टैक्स वाले किसी को पकड़ ही नहीं सकते। आर्टिस्ट ब्लैक का रुपया सफ़ेद रुपये से पहले वसूल करते हैं। और यह रुपया बड़ी होशियारी से वसूल किया जाता है। हजार के नोट को तो ये हाथ नहीं लगाते, न चेक ही कबूल करते हैं कि शायद कुछ पकड़-धकड़ हो जाय। दो चार हाथों म से गुजरकर रुपया कलाकार तक पहुँचता है। कोई रिश्तेदार या सक्रेटरी वसूल करता है और फौरन यह रुपया किसी गोल-मोल तरीके से या तो बैंक के लाकर म पहुँच जाता है या जेवर जमीन मोटरों और बँगलों की सूरत अख्तियार कर लेता है। यहाँ भी खरीद-फरोख्त कलाकार के नाम से नहीं काल्पनिक या किसी रिश्तेदार के नाम से होती है।

कुछ आर्टिस्ट और भी-होशियारी करते हैं। अगर एक लाख पर मामला तय हुआ तो तीस हजार सफ़ेद बाकी सत्तर हजार काले। अब इस तीस हजार म भी तीन कान्ट्रैक्ट होते हैं—एक किसी बहन या भाई का एक किसी और काल्पनिक कलाकार का एक असल कलाकार का। इन्कम-टैक्स वाले पकड़ न सकें इसलिए ये दूसरे लोग जिनके नाम से कान्ट्रैक्ट होते हैं एक झलक परदे पर दिखा जाते हैं। एक लाख पर मामला तय हो तो दो कागज लिखे जाते हैं। एक होता है पूरी रकम का यानी एक लाख का और एक होता है सफेद रकम का। इन पर एकतरफ़ा दस्तखत होते हैं सिर्फ प्रोड्यूसर के। जब ब्लैक का रुपया पूरा अदा हो जाता है तो यह एक लाख वाला कागज फाड़ डाला जाता है। बाकी सफेद रुपये वाला कागज दिखाने को रह जाता है।

कुछ प्रोड्यूसर भी चालबाज हैं। झूठ-सच जोड़-जाड़कर आर्टिस्ट का रुपया गोल कर जाते हैं। पचास हजार का कान्ट्रैक्ट

किया । दस हजार देकर दस दिन की शूटिंग में सारा काम चालाकी से खत्म कर डाला । बहन ने क्लोज अप ले डाले और किसी दूसरे आदमी की पीठ दिखाकर पिक्चर खत्म कर डाली । बाकी चालीस हजार हजम । अब करते फिरें उन पर दावे । और गड़बड़ की तो दीवाला निकाल दिया ।

दुनिया बदल रही है और जिसे जिन्दा रहना है उसे बदलना ही पड़ेगा । छोटे-मोटे काम करने वालों में अब यह अहसास पैदा होता जा रहा है कि सिर्फ बड़े आर्टिस्ट ही नहीं हम भी फिल्म को बनाने और बिगाड़ने की ताकत रखते हैं । मुआवजे में कोई तो सन्तुलन हो । पूरे स्टाफ को एक फिल्म में बीस हजार मिलता है जब कि एक बड़ा आर्टिस्ट ही दो-तीन लाख ले जाता है । वह दिन भी दूर नहीं कि खुद अपना मुआवजा तय करते वक्त यह भी देखना होगा कि दूसरा को कितना मिल रहा है । उस अन्तर को जो एक अभिनेता और लाइटमैन की आमदनी में है खुद दूर करना होगा नहीं तो वह लाइटमैन यह काम अपने हाथ में ले लेगा ।

हम हिन्दुस्तानी अन्धे पुजारी हैं । पत्थर के देवता को सोने के मन्दिर में सुलाकर खुद सड़क पर करवटें बदलते हैं । दिलीपकुमार और नरगिस के दर्शनों के लिए अपने बच्चों का पेट काटते हैं । धूप और वर्षा में क्यू लगाकर खड़े होते हैं । क्या हमारे ये फिल्मी खुदा कठ-पुतलियाँ हैं ? क्या यह निरा अभिनय है ? भावना का बिलकुल दखल नहीं ? क्या नया दौर' में तांगे वाले का रोल अदा करते वक्त दिलीपकुमार ने देश के हजारों तांगेवालों के लिए कुछ महसूस नहीं किया ? क्या मदर इण्डिया में हिन्दुस्तान की माँ की भूमिका में काम करते समय नरगिस ने ममता की कोई लहर न महसूस की ? क्या ब्लैक मार्केटिंग और गुण्डागर्दी के विरुद्ध लड़ने वाले इन्सान की भूमिका में देवानन्द ने फिल्मी काले बाजार के बारे में कुछ नहीं सोचा ? क्या ये महान् कलाकार छोटे मजदूरों की हालत से बेखबर हैं ? क्या वे एक क्षण के लिए

भी सोचते हैं कि कितने स्टूडियो वक्ती तौर पर जब बन्द कर दिए जाते हैं तो इन लाइन्स सभालने वालों पर क्या गुजरती है जो इन अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के सुन्दर चहरों को चमकाया करते हैं जिनकी मेहनत से उन्हें यह स्वर्गीय सौन्दर्य प्राप्त है? ये असिस्टेण्ट जो सिर गाड़ी पर पहिया किये सेट से मेकअप रूम की जमीन नापा करते हैं ये केमरा मैन जो धूप और गरमी में घण्टों मौसम के जुल्म सहते हैं—उन्हें वतन कितना मिलता है? मिलता भी है या माँगने पर पत्ता ही कट जाता है?

आखिर अभिनेताओं और दूसरे मजदूरों में इतना अन्तर कब तक कायम रहेगा? पब्लिक फिल्म में छम छम करती अभिनेत्रियों को देखना चाहती है। इस परदे के पीछे कौन खाक और खून में रुलता है किसीको दिलचस्पी नहीं किसीको परवाह नहीं।

मगर यह फिल्मी दुनिया स्क्रीन पर ही नहीं असलियत में भी बनावट के सिवा कुछ नहीं। प्रोड्यूसर अभिनेता की छींक पर भी तड़प उठते हैं तो सिर्फ उसका लगान के लिए। यही अभिनेता जब उनकी दूकान सजाने के काबिल नहीं रहेगा तो इसकी अरथी को कन्धा भी नहीं देंगे।

अभिनेता को धन ख्याति पब्लिसिटी चाहने वालों की श्रद्धा और पूजा मिलती है। इतना कुछ तो आजकल किसी को भी नहीं मिलता। और बाकी के कलाकारों को वक्त पर वतन भी नहीं मिलता। उनकी मेहनत की दाद नहीं मिलती पब्लिसिटी नहीं मिलती और कोई नहीं सोचता कि क्या?

एक दिन जमींदार भी यही सोचता था कि वह जमीन का खुदा है। आज उसका क्या हश्र हुआ? यही हश्र उस मुनाफाखोर सरमायेदार का होगा जो मजदूरों को भूखा मारकर तिजोरियाँ भरता है। और वह अभिनेता हो या कलाकार जो कोई भी हो इस मनोवृत्ति के साथ इन्सानियत का अलम-बरदार नहीं हो सकता।

फिल्मी दुनिया म भी निन प्रतिदिन जागति पैदा होता जा रही है। नवयुवक शिक्षित वग इस लाइन का ग्रोर बढ़ता ग्रा रहा है। उनम यह ग्रहसास शिद्दत स पदा हो रहा है कि उनक साथ इन्साफ नहा हो रहा है। महनत उन्ह ज्यादा करनी पडती है ग्रौर हिस्सा सिफ कला कारा को ज्यादा मिलता है।

ग्रौर जब यही चेतना रूस ग्रौर चीन क मजदूरा के दिला म पदा हो गई थी तो इनकलाब ग्रा गया। बहतरा इसाम है कि दवतागण जायें क्योकि ग्र या पुजारी ग्राँखें खोल रहा है।



पाँच

प्रिय शंख

रैनिया होइ गई मोर सवतिया पिया को नादि नइ गई हो ! —यह गीत गाकर क्या मैं अपने निर्मोही को वापस नहीं बुला सकती ?

तुम हैरान तो होगे। दस बरस बाद तुम्हें यह पत्र लिख रही हूं। शंकर को तो तुम पत्र लिख सकते हो मुझे नहीं। अपनी जया को प्यार लिख सकते हो मुझे नहीं। अपनी इरा को कभी भूलकर ही याद कर लेते।

क्या अब तक पचानन को संगीत नहीं सिखा पाए ? जया कहती है नानी से नहीं मैं तो डैडी से गाना सीखूंगी। जिसे जया ने केवल फोटो में ही देखा है उस पर वह कितना प्यार करती है ! हंसते-हंसते लोट-पोट हो जाती है तुम्हारी ही तरह। मुझसे सुनी हुई तुम्हारी बातें करती है। आकर सुन लो। स्त्री की निगाह दूर तक नहीं जाती क्या तुम अब भी यही कहते हो ? सपने में भी तुम्हारे सिवा मैंने किसी पुरुष को विश्वास का अर्घ्य नहीं चढ़ाया। तुम कहोगे एक एक्ट्रेस के मुंह से इतनी बड़ी बात ! अब तो तुम्हारे बिना बम्बई की रंगभूमि नीरस लगती है मानो यह सब छलना-मात्र हो। पर अपनी जया तो छलना नहीं। जया में हमारा संगम मुस्कराता है। हमारे प्रेम का वरदान है जया। दो बिछुड़े दिलों को फिर से मिला सकती है जया। मेरा रूप पाया तुम्हारा स्वभाव ऐसी है अपनी जया। विश्वास न हो तो आकर देख लो। शायद इसी तरह

मेरा उद्धार हो सके !

सिरहाने पर सिर रखे चौंक-चौंक उठती हूँ जब सपना टूट जाता है। आँखों से आँसू भर रहे हैं। एक विचित्र प्रकार की आस-निरास लेखनी से तुम्हें पत्र लिख रही हूँ मेरे देवता ! क्या अब तक मुझ पर क्रोध उतर रहा है ?

मैंने फ़ैसला किया है कि जयन्त के साथ कभी हीरोइन की भूमिका में काम नहीं करूँगी।

मैंने फ़ैसला किया है कि कान्ट्रैक्ट करते समय ध्यान रखूँगी कि मेरे कारण कम्पनी के बाकी स्टाफ़ का वेतन तो नहीं कट जाता। ...क में एक पाई नहीं लूँगी। मेरा रास्ता अब इंडस्ट्री से तीन लाख का भार नहीं। मैंने घोषणा कर दी। एक कान्ट्रैक्ट का पचास हज़ार से ज्यादा नहीं लूँगी। सरकार को पूरा इन्कमटैक्स दूँगी। वह कदम उठा रही हूँ कि दूसरे आर्टिस्ट शिक्षा लें। बाकई हमारे हीरो-हीरोइनों और दूसरे टेक्नीशियनों की आय के बीच अंधी खाई नहीं होनी चाहिए। यह अन्याय हम अपने आप ही तो मिटाना होगा।

मेरे लेख का सबसे पहले मनोज ने ही समर्थन किया। अब वह भी एक कान्ट्रैक्ट के पचास हज़ार से ज्यादा नहीं लेगा।

कल मनोज आया था। उसके साथ काम करने का मैंने वचन दे दिया। हम एक साथ तीन पिक्चरों में आ रहे हैं। तुम आ जाओ तो तीनों पिक्चरों में तुम्हारा संगीत रहे। तीनों कम्पनियाँ पूरी तरह हमारे हाथ में हैं। मनोज का सहयोग ही काफ़ी है।

दस साल बाद 'गुरुदेव' ने बम्बई के सबसे बड़े सिनेमा हाउस में चलकर बीस सप्ताह का रिकार्ड कायम किया। इससे तुम समझ सकते हो दुनिया कितनी तेज़ी से बदल रही है। कैसे नहीं बदलेगी दुनिया ? अच्छी चीज़ को कब तक नापसन्द किया जाता रहेगा ? तुम आ जाओ। तुम्हें अपने संगीत की कसम तुम आ जाओ। जाना ही हो तो अपनी जमा से पूछकर चले जाना।

मेरे प्यार की कसम फ़ौरन चले आना।

तुम्हारी
इरा

इरा को अपने डैडी का सिद्धान्त भुलाये नहीं भूलता। एशिया यूरोप और अमरीका-यात्रा में वह जहाँ भी गई वहां उसने डैडी की सूक्ति सुनाकर लोगों पर जादू-सा कर दिया—

जब मेंह तब घास !
जब घास तब प्रजा सुखी !
जब प्रजा सुखी तब एंग !
जब एंग तब जुल्म !
जब जुल्म तब कहर !
जब कहर तब तोबा !
जब तोबा तब मेंह !

इस सूक्ति की प्रथम और अन्तिम पंक्ति में तो जैसे गूढ़ जीवन-दर्शन छिपा है 'जब मेंह तब घास ! जब तोबा तब मेंह !' सारा का चक्कर चलता है ! मदन बाबू कहा करते थे यह सदा से चलता आया है चलता रहेगा।

न्यूयार्क में जब वह नीग्रो गायिका नोरा फ़िन्टर से मिली तो डैडी की शान चक्करदार वाली बात इरा ने नोरा को भी बताई। उसने पूरी सूक्ति झट अपनी नोट-बुक पर लिख ली। अगले दिन जब नोरा ने इरा को खाने पर बुलाया तो इस सूक्ति पर आधारित एक गीत गाकर सुनाया। नीग्रो जीवन और संस्कृति की भूमिका में भी यह सूक्ति कितनी जोरदार प्रतीत हुई थी। जया तब बच्ची थी। वह तो नोरा के संगीत का रस नहीं ले पाई थी। पाँच साल की बच्ची को मैं कैसे समझाती कि नोरा का गीत तुम्हारे नाना की सूक्ति पर आधारित है।

बुक शल्फ से गेटे के प्रवचना पर आधारित आक्रेमान की मूल्यवान पुस्तक खोलकर वठ जाती है इरा। गटे उसका प्रिय नेखक है। गटे की चुटकियाँ उसके तीख व्यग्य जीवन की गहराइ को छूता उसका जीवन दशन उसे पसन्द है। जब भी गेटे की प्रतिमा की कल्पना करती है उसे लगता है कि किसी विशालकाय चट्टान को छील छीलकर घडी गइ थी गेट की मूर्ति ! जस वह एक मूर्ति नही कोई त्रिमूर्ति थी। गटे की रचना म इरा को ब्रह्मा विष्णु और शिव का अभूतपूव सन्तुलन प्रतीत होता था।

आक्रेमान की गटे-सम्बन्धी पुस्तक पढते पढत इरा जमन-यात्रा के सस्मरणो म खो जाती है। कल्पना के कला भवन म जसे वह गटे से मिल लेती है। गट मरा नहीं वह कभी नही मरेगा। उसे याद आता है जब जमनी म वह गट की समाधि पर श्रद्धा क फूल चढ़ाने गई थी। जया के हाथ स भी तो उसन दो फूल समाधि पर रखवाये थे। वहाँ खडे-खड़े उसे लगा था कि गेट की आवाज आ रही है तुम आ गइ शकुन्तला ! उसने जस पुकारकर कहा था मैं किसी कालिदास की शकुन्तला नहीं मैं तो इरा हूँ। पाँच वष की एक बच्ची की माँ ! जसे गट की आवाज आइ माँ बनने स पहन तुम जरूर किसी ऋषि के आश्रम म रही हो। तुम्हारा दुष्यन्त तुम्ह छोड़ गया ! दुष्यन्त की अनुपस्थिति में ही तुम माँ बनी। क्या मैं कुछ झूठ कह रहा हूँ ? इसक उत्तर म जसे इरा रो दी थी सिसक-सिसककर वह चीख पडी थी तुमने कस यह सब जान लिया ? और उस समय वह अपने दुष्यन्त अपन दारा की याद म खो गइ थी। शकुन्तला क लिए गटे की वह मूक्ति इरा को याद थी जिसम गेट न कहा था कि एक बार शकुन्तला का नाम लकर मानो उसने पृथिवी और स्वग की समस्त सौन्दय-श्री अभिव्यक्त कर दी।

और अब यहाँ बम्बइ म आक्रेमान की गट क प्रवचना वाली पुस्तक पढ़ते हुए उसे लगा कि गटे पूछ रहा है तुम्हारा वह दुष्यन्त तुम्हें मिलने नहीं आया शकुन्तला ! और इरा ने जस चीखकर कहा मैं

शकुन्तला नहीं मैं शकुन्तला नहीं बनना चाहती। मैं तो इरा हूँ! बम्बई की एक एक्ट्रेस! गेटे ने जैसे पुकारकर कहा तुम माँ हो एक लड़की की माँ! जानती हो बच्चे के मुँह से देश दश म जो पहला शब्द निकलता है वह कौनसा शब्द है! और फिर जैसे किसी ने डुग्गी-तरंग पर बैक ग्राउण्ड म्यूज़िक देने के लिए बड़ी-सी चाट की—एक ही आवाज़ गूँज उठी माँ! और इरा ने सँभलकर जया की तरफ देखा जो सो रही थी। इरा ने उठकर जया का मुँह चूम लिया। और जैसे फिर डुग्गी-तरंग से बैक ग्राउण्ड म्यूज़िक का स्वर गूँज उठा माँ!

सौ कण्डल के बल्व के प्रकाश में बैठी इरा शाक्त मान की पुस्तक पढ़ती रहती है। उसे लगता है शाख आ गया! जैसे शाख कह रहा हो तुम्हारी चिट्ठी मिली और मैं चला आया! यह सब जैसे किसी स्वप्न की पूर्वपीठिका हो। शाख यहाँ कहाँ?

आज इरा ने शाख को दूसरा पत्र लिखा। स्टूडियो में बैठकर उसने एक अच्छा-सा पैड निकाला और पहले तीन कागज़ खराब किये। नील रंग का पैड था—सागर के रंग का पैड सिल्वर सरफेस वाला पैड। अच्छा पत्र अच्छे पैड पर ही तो लिखा जा सकता है। खैर तीन कागज़ खराब करने के बाद चौथे कागज़ पर वह जमकर लिख सकी। पत्र लिख चुकने पर वह कार म बैठकर इसे लैटर बॉक्स म डालने गई। उसे क्रोध भी आया था। स्टूडियो से काफी दूर था लैटर बॉक्स।

पत्र लैटर बाक्स में डाल चुकने के बाद पहले उसे ग्लानि-सी हुई। कल एक पत्र लिखा था आज दूसरा पत्र लिखकर डाल दिया। शाख क्या सोचेगा? दस साल तक चुप रही अब जैसे धैर्य का बाँध टूट गया!

पहले जयन्त उसमें गपशप करता रहा। जयन्त गया तो मनोज आ गया। इरा को तो बारी-बारी दोनों के लिए मुस्कराना पड़ा।

उसके हाथ म भखव के पत्रो की एक सुन्दर-सी पुस्तक थी। पढ़ते पढ़ते उसके मन प्राण सिहर उठे। उसे खयाल आया रूस की यात्रा म उसने चखव के बारे म वहाँ के लेखको से कितनी ही बातें पूछी थी। उसे बताया गया था कि चखव ने लका-यात्रा तो की थी पर हिन्दुस्तान की यात्रा न कर सकने का उन्हे बहुत खेद था। लका को चखव ने स्वग से उपमा दी थी। एक मित्र को उन्होंने अपने पत्र म लिखा था कोलम्बो से उतरकर रेल से मैंने वहाँ की सौ मील धरती देखी थी। सुन्दर दृश्या के लिए मैं शायद अपने-आपको राक्षसो को भी बच देता। जब मेरे बच्चे हो जायेंगे तो मैं गव से उनस कहूगा—अब सुनो अपने जमाने म मैंने काली आँखो वाली एक हिन्दू लडकी स भी प्रेम किया है—कहाँ ? एक चाँदनी रात म और उस जगह जहाँ नारियल के पेड आपस म गुथकर कुञ्ज-सा बना लेते है। समझे ? क्या बेवकूफी थी ? चखव का पत्र पढ़ते-पढ़ते इरा नतमस्तक हो गई जसे वही वह काली आँखो वाली लडकी हो जिससे नारियल-कुञ्ज म किसी पुरुष ने प्रेम किया था। उस पुरुष का नाम चखव भी हो सकता है शख भी। नाम म क्या रखा है ! मैं शकुन्तला कहलाऊँ चाहे इरा शख भी दुष्यन्त कहलाए चाहे चखव; क्या अन्तर पडता है ? मुस्कराकर वह पत्र पढ़ने लगी। इतने म किसी ने आकर कहा आपका फोन है इरा जी !

यह मनोज का फोन था। उसने उसे डिनर पर बुलाया था। वापस आकर वह फिर पुस्तक खोलकर बैठ गई। डडी की सूक्ति जसे उसकी कल्पना को छू गई—जब ताला तब मेह !



वरक्कला में शंख की अपनी दुनिया है। वरक्कला कहाँ तक शंख को समझ पाया है यह तो कौन कहे ?

नम्पूतिरिप्पाड का कहना है शंख को समझने की कोशिश आत्म प्रवंचना है। बड़ी कोशिश करके उन्होंने गुरुदेव फिल्म वरक्कला में दस साल बाद फिर से चलाने का प्रबन्ध किया। यहाँ वह दो सप्ताह के लिए आई। बम्बई में गुरुदेव दस साल बाद ही सही तीस सप्ताह तक चली। बम्बई के सबसे बड़े सिनेमा-हाउस में इसका प्रदर्शन हुआ जैसा कि नम्पूतिरिप्पाड ने अखबारों में पढ़ा। पर क्या मजाल एक दिन भी शंख को यह फिल्म देखने के लिए राजी कर सके हों। उन्होंने लाख समझाया इतनी भी क्या नाराजगी है ? गुरुदेव तो आप ही थे। इसमें संगीत भी तुम्हारा है किसी और का नहीं। फिर क्या देखने नहीं चलते ? टिकट भी नहीं लेना होगा। सिनेमा हाउस का मालिक तो फूला नहीं समायेगा यह देखकर कि फिल्म का म्यूजिक डाइरेक्टर फिल्म देखने आया है।

शंख तो चित्रकार की संगीतशाला से ही चिपका रहता है। पंचानन ने भी कहा 'गुरुदेव चले जाओ न जब सब कोई कह रहे हैं। मैं तो देख आया। मुझे तो बहुत अच्छी लगी।

मुत्तु बाबा भी झूम झूमकर कहते रहे दस साल पहले भी आई थी यह फिल्म यहाँ। तब तो तीन ही दिन चल पाई थी। तब हम भी

यह उतना अच्छी नहा नगी थी जितना अब । क्या कहन हा दब ?

दाव अन्त तक इन्कार करता रहा । उसन किसीको बताया नहा । इरा का पत्र उसे झकझोर गया— मरा रूप तुम्हारा स्वभाव एसी है हमारी जया ! विश्वास न हो तो आकर दख ना ! शायद इसी तरह मेरा उद्धार हो सके । तुम्हे पत्र लिख रही हूँ मेरे देवता । क्या अब तक मुझ पर क्रोध उतर रहा है ? इरा के पत्र का य पंक्तियाँ उसे जाने क्या कुछ कह गइ ।

उसने मन ही-मन कहा—मैं झुकूगा नहा । मैं अपनी जगह दृढ़ रहूंगा चट्टान क समान ! मैं इरा का पत्र नहा लिखूंगा । मैं सब समझता हूँ ! दस मास तक इरा चुप रही । अब पत्र लिखने बठ गई । इतने दिन तो लम्बर नम्बर का पत्र ही आ जाता था महीने म एक बार ।

दूसरे ही दिन इरा का दूसरा पत्र आया । लिखा था, मेरा ध्यान जया पर रहता है या फिर जयजयवन्ती रागिनी पर जिसे मर डैडी सुना करते थ ममी से— मोरे मंदिर अब ला नहा आय ! अब मैं जिक्र करती हूँ तो ममी गम्भ बठ जाती ह । रात-रात ममी की आँखों म आँसू आ जात हैं जब वह गाती है— कौनवी भूल भई हमसे को सौतिन बिलमाय ? और मुझे गुरुदेव म दिया गया वह गीत याद आ जाता है

पुरुब से आई रेलिया, पछिउ स आई जहजिया
पिया क लादि लइ गईं हो ।
रेलिया होइ गईं मोर सवतिया
पिया क लादि लइ गईं हो ।
रलिया न बरी जहजिया न बरी
उहे पइसव बरी हो ।
देसवाँ देसवाँ भरमाव,
उहे पइसव बरी हो ।
भुखिया न लाग पियसिया न लाग



१९:

वरक्कला में दाख की अपनी दुनिया है। वरक्कला कहाँ तक दाख को समझ पाया है यह तो कौन कहे?

नम्पूतिरिप्पाड का कहना है — दाख को समझने की कोशिश आत्म-प्रवंचना है। बड़ी कोशिश करके उन्होंने 'गुरुदेव' फिल्म वरक्कला में दस साल बाद फिर से चलाने का प्रबन्ध किया। यहाँ वह दो सप्ताह के लिए आई। बम्बई में 'गुरुदेव' दस साल बाद ही सही, तीस सप्ताह तक चली। बम्बई के सबसे बड़े सिनेमा-हाउस में इसका प्रदर्शन हुआ था, जैसा कि नम्पूतिरिप्पाड ने अखबारों में पढ़ा। पर क्या मजाल, एक दिन भी दाख को यह फिल्म देखने के लिए राजी कर सके हों। उन्होंने लाख समझाया — इतनी भी क्या नाराजगी है? 'गुरुदेव' तो अपने ही थे। इसमें संगीत भी तुम्हारा है, किसी और का नहीं। फिर क्यों देखने नहीं चलते? टिकट भी नहीं लेना होगा। सिनेमा-हाउस का मालिक तो फूला नहीं समायेगा यह देखकर कि फिल्म का म्यूजिक डाइरेक्टर फिल्म देखने आया है।

नन्द तो घिनावकार की संगीतशाला से ही चिपका रहता है। पचानन ने भी कहा — 'गुरुदेव' देख आओ न, जब सब वाह-वाह कह रहे हैं। मैं तो देख आया। मुझे तो बहुत अच्छी लगी।

मुत्तु बाबा भी झूम झूमकर कहते रहे — दस साल पहले भी आई थी यह फिल्म यहाँ। तब तो तीन ही दिन चल पाई थी। तब हम भी

यह उतनी अच्छी नहा लगी थी जितना अब। क्या कहते हो दास ?

गाछ अन्त तक इन्कार करता रहा। उसने किसीको बताया नहा। इरा का पत्र उसे झकझोर गया— मेरा रूप तुम्हारा स्वभाव ऐसी है हमारी जया ! विश्वास न हो तो आकर देख जो ! शायद इसी तरह मेरा उद्धार हो सके। तुम्हे पत्र लिख रही हू मरे देवता। क्या अब तक मुझ पर क्रोध उतर रहा है ? इरा के पत्र की य पक्तियाँ उसे जाने क्या कुछ कह गई ।

उसन मन ही मन कहा—मैं झुकू गा नही। मैं अपनी जगह दृढ रहूँगा चट्टान के समान ! मैं इरा का पत्र नहा लिखू गा। मैं सब समझता हूँ ! दस साल तक इरा चुप रही। अब पत्र लिखने बठ गई। इतन दिन तो लम्बेकर नकर का पत्र ही आ जाता था महीन म एक बार।

दूसरे ही दिन इरा का दूसरा पत्र आया। लिखा था मरा ध्यान जया पर रहता है, या फिर जयजयवन्ती रागिनी पर जिसे मरे डैडी सुना करत थे ममी से— मोर मदिर अब लौ नही आय ! अब मैं जिद करता हू तो ममी गान बठ जाती है। गात-गात ममी की आँखों म आँसू आ जात हैं जब वह गाती है— कौनसी भूल भई हमस को सौतिन बिलमाय ? और मुझ गुरुदेव' म दिया गया वह गीत याद आ जाता है

पुरुब से आई रेलिया, पछिउ से आई जहजिया
पिया क लादि लेइ गइ हो।
रेलिया होइ गई मोर सवतिया,
पिया के लादि लेइ गई हो।
रेलिया न बरी जहजिया न बरी
उहै पइसव बरी हो।
देसवाँ दसवाँ भरमाव
उहै पइसव बरी हो।
भुखिया न लाग पियसिया न लाग

हमको मोहियें लाग हो।
तोहरी देखि के सुरतिया
हमको मोहिय लाग हो।
सेर भर गहूमा बरिस दिन खइब
पिया का जाइ न देब हो।
रखब अंखिया के हुजरवाँ
पिया का जाइ न देब हो।

तुम नहीं मानोगे। तुम्हारी बातें समझने में दस साल लग गए। जस अमान ने तरक्की की। दस साल बाद बम्बई में गुरुदेव तीन सप्ताह चली। मुझे भी तुम्हारी बातें अब याद आती हैं। उनकी समझ भी भ्रान्त लगी है। तुम कहा करते थे न—कलाकार भी दूध-गाछ है। उसका ध्यान भी अपनी रचना पर वैसे ही रहता है जैसे माँ का शिशु पर! इतनी-सी बात समझने में दस साल लगे

पचानन के आने पर लाल ने यह पत्र एक पुस्तक में रख दिया।

मैं तो आज फिर गुरुदेव फ़िल्म देख आया। आप नहीं जायेंगे?

मैंने तो बहुत बार देख रखी है यह फ़िल्म।

गुरुदेव फ़िल्म का प्रसंग आते ही उसकी कल्पना में बम्बई घूम गई—उर्वशी जयन्त मुक्तिबोध मनोज अहल्या की माँ गोविन्दन और इरा—सबके चेहरे बारी-बारी घूम गए। साथ ही उसने मन ही मन कहा—कैसा होगा मेरी जया का चेहरा!

गुरुदेव को उदास देखकर पचानन अपनी वीणा उठाकर एक तरफ़ बैठ गया।

लाल फिर इरा का पत्र खोलकर पढ़ने लगा बीस सेकण्ड में तीस फ़ुट फ़िल्म घूम जाती है मेरे देवता! यानी एक मिनट में नब्बे फ़ुट। साठ मिनट का एक घण्टा। चौबीस घण्टे का एक दिन। तीस दिन का एक महीना। दस साल में कितनी लम्बी फ़िल्म घूम गई, सोचो तो! एक फ़िल्म बनाने के लिए बीस-बीस सेट चाहिए। सोचो

तो मैंने इस साल में कितने सपने बुने कितनी फिल्में बना डालीं बिना एक भी सेट के !

पिछले दिनों मैंने जया को भी 'गुरुन्व' फिल्म दिखाई वह बहुत खुश हुई।

रूस में बच्चों के लिए अलग फिल्में बनाने पर सबसे अधिक जोर दिया गया है। इसके लिए वहाँ अलग स्टूडियो हैं अलग सिनेमाघर। इस दौड़ में ब्रिटेन का दूसरा नम्बर है। मनोज का खयाल है कि हम बच्चों के लिए एक अच्छी फिल्म बनायें जिसकी हीरोइन होगी हमारी जया। अभी अगले ही दिन मैं जया को चेकोस्लोवाकिया में तैयार की गई एक पुतली फिल्म दिखाने ले गई थी। फिल्म का नाम है 'लोरी'। कमाल का 'आइडिया' है मेरे देवता ! एक खिलौना इन्सान का रूप धारण कर लेता है और वह एक बच्चे को कुछ इस तरह खिलाता पिलाता है कुछ इतने प्यार से सुलाता है, जैसे वह उसीका बच्चा हो। हमारी जया उसे देखती जा रही थी और बार-बार मेरी गोद में आ बैठती थी। बोली तुम अपनी जया को देखने कब आओगे ? जल्दी आओ। तुम्हें संगीत की कसम, दूध-गाछ की कसम !

किसकी चिट्ठी है गुरुन्व ?

यह मत पूछो पंचानन ! पर एक बात याद रखो बम्बई या मद्रास जाने की मत सोचना। फ़िल्म में नहीं चलेगा तुम्हारा संगीत।

पर आपने क्यों दिया था इतना अच्छा संगीत 'गुरुन्व' में ?

तुम्हें वह अच्छा लगा ? पर उसे भूल जाओ। यहीं रहना। अगली पीढ़ी के संगीताचार्य को तैयार करना। मैं यहीं मरूँगा अपने शिष्य का शिष्य बनने के लिए।

पंचानन उदास मुँह बनाकर वीणा लिये बैठा रहा। मरकर शिष्य का शिष्य बनने की बात सुनते-सुनते उसके कान पक गए। वह भूलकर भी इस बात पर विश्वास नहीं करता था। झुँझलाकर बोला मैं तो आपका गुरुन्व नहीं हूँ गुरुन्व ! मैं तो पंचानन हूँ !



सात

पंचानन ने जिद न छोड़ी। जिस दिन 'अलकनन्दा' के शची थियेटर' में 'गुरुदेव' का अन्तिम दिन था, शाम अन्तिम शो में पंचानन के साथ यह फिल्म देखने गया।

फिल्म देखते-देखते शाख दस साल पीछे चला गया।

बुद्धिजीवी लोगों ने तो 'गुरुदेव' को तब भी बहुत पसन्द किया था।

अच्छा गुरुदेव !

यूरोप में हुए एक अन्तर्राष्ट्रीय फ़िल्म-मेले में 'गुरुदेव' को पुरस्कार भी दिया गया था।

फिर यह बाक्स आफिस पर कैसे फ्लॉप हो गई ?

यही तो दुर्भाग्य था। जयन्त भाई की लागत भी पूरी न हो पाई। सस्ती रुचि वाला न हम सिर फिरे दम्भी अयोग्य और न जाने किस-किस नाम से पुकारा, जाने क्या-क्या फतवा दे डाला।

दस साल पहले का जमाना भी कितना विचित्र था ! फ़िल्म के परदे पर 'गुरुदेव' चल रही थी। फिल्म की सबसे बड़ी विशेषता थी इसका बैक ग्राउण्ड म्यूजिक। जयन्त देसाई की हिम्मत थी कि उसने बैक ग्राउण्ड म्यूजिक को बराबर का महत्त्व देने की बात स्वीकार की, और म्यूजिक डाइरेक्टर को प्रतिभा से काम लेने की पूरी छूट दी। यह पहला अवसर था कि हम बैक ग्राउंड म्यूजिक को बराबरी का आसन देने की बात सूझ

गई और इसे कार्यान्वित करने में हमने कसर न उठा रखी। बैक ग्राउंड म्यूज़िक भी घिसा पिटा नहीं। इसमें हम नई-नई बातें लाये। अनेक स्थलों पर कंठ-संगीत का जोरदार प्रयोग किया। और तो और, दुर्गा तरंग जैसे वाद्यों से काम लेने से भी न चूके। अब तक फ़िल्मी दुनिया में संगीत की हल्दी थी गाने। गोविन्द ने म्यूज़िक दिया होता तो गाना में ही सारा ज़ोर दिखाता। पर जयन्त गोसाइं मेरे साथ सहमत थे। मेरे साथ वे भी यह बात मानकर ही मंज़िल की तरफ़ कदम उठाते रहे कि फ़िल्म में जहाँ-जहाँ नाटकीय स्थल आते हैं अथवा काल्पनिक और भावुक रेखाएँ आकर जुड़ती हैं वहाँ सबसे बड़ी मदद हम बैक ग्राउंड म्यूज़िक से ही ले सकते हैं। और गोप ने पंचानन की कथा स्वीकार कर कहा, हमारी फ़िल्म इण्डस्ट्री में बैक ग्राउंड म्यूज़िक की रिकार्डिंग आख़िरी नम्बर पर रहता है। इस में मुनव्वता नम्बर एक रहेगा। बस यह समझो जब सेंसर बोर्ड को फ़िल्म दिखाये जाने का दिन भूत की तरह सिर पर आता दिखाई देता है या यह समझो कि फ़िल्म रिलीज़ होने का दिन घुड़दौड़ के घोड़े की तरह तेज़ दौड़ता हुआ पास आ जाता है तो बेचारे बैक ग्राउंड म्यूज़िक की सुध ली जाती है। कहते-कहते गोप चुप हो गया। उसे ध्यान आ गया यह बात तो उसने पंचानन को भालकर बताई थी।

पंचानन की दृष्टि फ़िल्म के परदे पर जमी थी। बैक ग्राउंड म्यूज़िक का सारा जादू है गुरुत्व! उसने मानो मृदंग पर थाप लगाई।

गोप सोचने लगा, अब भी ऐसा ही होता होगा। बैक ग्राउंड म्यूज़िक के रिकार्डिंग की बारी अब भी सबसे आख़िर में ही आती होगी। कमाल है। मूलतः की दौड़ है। सारा रिकार्डिंग रात का एक ही पारी में ख़त्म कर डालने की धुन! म्यूज़िक डाइरेक्टर ने फ़िल्म का एक दृश्य देखा स्टाप घड़ी पर उसका समय नोट किया और जो भी उल्टी-सीधी बात सोचने में जाग उठी उसके बल पर बैक ग्राउंड म्यूज़िक दे डाला। हम तो ऐसा नहीं कहेंगे। किसी तरह हमारे काम वाली बात हुई।

म्यूजिक डाइरेक्टर को नींद आ रही है। समय आधी रात से ऊपर चला गया। दिमाग पूरी तरह काम नहीं कर रहा। सोचने का किसके पास समय है? किस विशेष वाद्य को लिया जाय और उसके सही प्रयोग में कसे सोता जादू जगाया जाय इसकी चिंता तो म्यूजिक-डाइरेक्टर के फरिश्तों को भी नहीं रहती। फिल्म डाइरेक्टर को एक ही चिन्ता रहती है और उसी के संकेत पर म्यूजिक डाइरेक्टर जैसे-तैसे सस्ती रुचि वालों की ममता लगाने की सोचता है धुनबुलिया धमाधम नाच गान दे देकर। बैक ग्राउंड म्यूजिक की महिमा को न पहचाना जाता है और न फ़िल्म के मन्दिर में इस मूर्ति की प्रतिष्ठा ही की जाती है।

फिल्म देखते-देखते दास को शकर के पत्रों की याद हो आई। सन् १९६२ में इरा सारे संसार की यात्रा पर गई—आज से पाँच वर्ष पूर्व जब जया पाँच ही वर्ष की थी। यात्रा में जया को भी उसने साथ रखा। तब वह अमरीका तथा जापान आदि देशों में अनेक फिल्म आर्टिस्टों से मिली। पिछले एक पत्र में शकर ने लिखा था— हाल ही में दीदी फिल्म प्रतिनिधि-मण्डल की सदस्या बनकर रूस भी हो आई। रूस-यात्रा में जया भी गई थी। आप यहाँ होते जीजाजी तो आप भी चलते और हम भी गये होते आपके साथ। दीदी का क्या है! उन्हें तो अपनी जया ही प्रिय है। उसे देखे बिना एक दिन भी कहाँ नहीं रह सकती। कभी कभी जया को गोद में लेकर कहने लगती हैं दीदी— मैं दूध-गाछ हूँ! मैं जानता हूँ जया इसका मतलब नहीं समझती। सच पूछो तो जीजा जी इसका मतलब तो मैं भी नहीं समझता। एक दिन मैं दीदी से पूछ ही बैठा। बोली—अपने जीजाजी को लिखकर पूछ लो। यह उन्हीं के दास-कोष में लिखा है। तो वापसी डाक से लिखिए जीजाजी दूध-गाछ का क्या मतलब है?

फिल्म के परदे पर पूरी कहानी चल रही थी। अब वह दृश्य दिखाया जा रहा था जब गुरुदेव की साठवीं वर्षगाँठ पर उस्ताद फ़ैयाज़ खाँ अपने संगीत से श्रोताओं को मुग्ध कर रहे थे। गुरुदेव की बगल में बैठा था

गए। देखते-देखते पचानन मुग्ध हो गया।

आप तब यहाँ ही थे गुरुदेव जब फिल्म में दिखाये गए? आपने अपना पार्ट किसी और को क्या करने दिया?

शख की कल्पना जाने क्यों बम्बई की ओर खिंच गई। दूरी की चिट्ठियाँ क्या आई फिर बम्बई का रास्ता खुल गया। शरी थियेटर से निकलकर वे मन्दिर-बाजार में दुकान पर आ निकले।

गुरुदेव फिल्म बनाते समय मुझे क्यों नहीं बुला लिया था बम्बई? मेरा पार्ट किसी और को क्यों करने दिया? दामोदर हँस पड़ा गुरुदेव तो चले आ नहीं सकते थे अपना पार्ट करने। हम तो जीवित थे तब भी और अब भी सामने बैठे हैं।

शख अब इसका क्या उत्तर देता?

दामोदरन मौं बट की मूर्ति की बिसाई करता रहा।

शख की कल्पना पर आज का अखबार फैल गया। केरल में सा तरता अन्य राज्यों का अपेक्षा कहीं अधिक है। जनसंख्या की सघनता में भी यह छोटा-सा प्रदेश प्रसिद्ध है। इसीलिए यहाँ के निवासी बाहर जाकर काम करने पर मजबूर हैं। पेट का मामला है। भारत सरकार के बड़े-बड़े विभागों में मनी मन्त्रालयों में केरल के निवासी काम करते नजर आयेंगे। आज केरल की सरकार जनता के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने की दिशा में दृढ़-संकल्प है। शिक्षा बिना भी सामने है नल ही कुछ लोग इसका विरोध कर रहे हैं।

गुरुदेव फिल्म में तो तुम्हारा ही संगीत है शख! दामोदरन ने झुर्रियों वाले चेहरे पर आँखें चमकाकर कहा यह फिल्म देखना तो ऐसे ही है जैसे कोई दर्पण में अपना मुँह देख ले।



आठ

इरा के दूसरे पत्र ने शंख के मन प्राण में एक रागिनी के स्वर घोल दिए। जयजयवन्ती—यही तो जया का पूरा नाम था। हाथ में आज का अखबार था। केरल में साम्यवादी मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रस्तुत कुछ योजनाओं की विस्तृत चर्चा की गई थी। तीन कालम की सुर्खी। शंख की दृष्टि एक छोटी सी खबर पर जा टिकी—त्रिवेन्द्रम् में संगीत परिषद् द्वारा आयोजित करणीय संगीत उत्सव की योजना।

बूढ़ा दामोदरन माँ-बेटे की मूर्ति की घिसाई कर रहा था। अखबार में ताजा समाचार क्या आया है शंख ? उसने हँसकर पूछा।

नये शिक्षा बिल की चर्चा में पूरा पृष्ठ भरा पड़ा है।

और कोई समाचार ?

माँ-बेटे की मूर्ति के नये खरीदारों की खबर तो इसमें छपने से रही।

तो मैं इसे बनाना छोड़ दूँ ? जो तुम्हारी माँ कहती है वही तुम भी कहते हो।

मैं तो वैसे ही हँस रहा था।

और मैं तुम्हारे संगीत पर हँसने लगूँ तो बताओ।

शंख भी आगे अखबार पढ़ रहा था पर उसकी कल्पना बम्बई पहुँच गई थी। बहुत चाहता था वरकला से बाहर न जाय उसका मन। वरकला के साथ मन का मेल बैठे। नम्बूतिरिप्पाड ठीक कहते हैं ज्या

ज्यों आदमी अधेड़ उम्र को पार करने लगता है वही जलवायु उसे रास आ सकता है जिसमें उसका जन्म हुआ होता है। इसीलिए तो व समय से पहले ही कॉलेज से रिटायर होकर यहाँ आ गए थे।

देशमुख ने पास से गुजरते हुए कहा तयार रहना दामोदरन! त्रिवेन्द्रम् के अखिल केरलीय संगीत उत्सव में तुम्हें ही प्रधान बनाया जायगा।

मुझे यह सम्मान नहीं चाहिए!" नख चुप न रह सका।

देशमुख को डाकघर पहुँचने की जल्दी थी। व रुके नहीं।

दामोदरन ने कहा वे तुम्हें प्रधान चुनेंगे तो तुम इन्कार तो नहीं कर दोगे?

अब कहीं बाहर जाने को बिल्कुल मन नहीं होता।

त्रिवेन्द्रम् कौन दूर है?

अपना वरक्कला ही अच्छा है।

आज के रविवारीय संस्करण में एक लेख आया था— फिल्मों में मेक अप की महिमा।

पचानन भी दूकान पर आ निकला। अखबार उठाकर पढ़ने लगा। दामोदरन बोला त्रिवेन्द्रम् के संगीत-उत्सव के लिए कोई अच्छी-सी रागिनी तयार कर लो पचानन! आनन्द रहे यदि तुम सर्वोत्तम संगीतज्ञ की पदवी पाओ।

ऐसा सौभाग्य मेरा कहाँ? पर गुरुजनों का आशीर्वाद मिले तो यह कुछ कठिन भी नहीं।

गुरुस्व रुद्रपल्लम् की आत्मा ने दोबारा जन्म लिया तुम्हारे रूप में। तुम्हें तो जितना सम्मान मिले थोड़ा है।

मैं यह नहीं मानता। मैं तो पचानन हूँ। अपनी ही साधना से आगे बढ़ सकता हूँ। कोई अंधविश्वास मुझे आगे नहीं ले जा सकता।

तो तुम परम्परा को नहीं मानते दूध-गाछ को नहीं मानते?

दूध-गाछ अपने स्थान पर है।

हर पीढ़ी म यह नया होता रहता है। बीज तो पीछे छ रहा है न।

दास की कल्पना न बम्बई पहुँचकर दम लिया। किसी स्टूडियो का मेक अप रूम। मेक अप मन ज्ञान बघार रहा है— अजी अब वह जमाना नहीं कि मूछों वाली भूमिका के लिए मूछों वाला एक्टर ढूढा जाय। जी हाँ मेक अप के बिना तो चन्द्रवदनी कोमलांगी षोडशी कन्या भी अधेड़ दिखाई देने लगे। माइ डियर, यह जो कैमरा है न हमारा इस ज़माने के लैन्स कितने तज हैं—अजी हमारी आँखों से भी तेज़। लन्स जो ठहरे जरा-जरा-सी बारीकियाँ उभारकर न रख द तो इन्हें लन्स कौन कहे? क्या आप गोल चहरे को कुछ लम्बा दिखाना चाहते हैं? इसका आसान तरीका है। चहरे के ज्यादा फूले हुए हिस्सों पर गहरा रंग पोत दें और उन्हें कुछ कुछ काना सा कर डालें। काम चल जायगा। युवक के चेहरे पर गुलाबी हलका पीला या हलका नीला रंग पोतना होगा। बालक हो तो और भी हलका रंग लगाइए। और देखिए, तन्दुरुस्त आदमी और बीमार के लिए भी रंगों म अन्तर करना होगा। उम्र म बीस-तीस बरस का अन्तर दिखा सकना मेक-अप मन के बायें हाथ का खेल है। यवती को और भी छोटी दिखा सकते हैं चाहें तो उस अधेड़ या बुढ़िया दिखा दें। पर मेक अप से ही यह सब अन्तर पड़ने से रहा। एक्टिंग करते वक्त मेक अप के अनुसार अंगों की चुस्ती या सुस्ती दिखानी होगी। दाढ़ी-मूँछ गोंद स चिपकाते हैं। चेहरा अकड़ जाता है। एक्टर बैठा किस्मत को कोसता है। किसीके दाँत टूटे हुए दिखान हों तो कुछ भी मुश्किल नहीं—उन्हें काला कर दते हैं। दाँतों म छेद हों तो मोम भरकर ठीक कर लेते हैं। मजा यह है कि लड़कियों का मेक अप उतना मुश्किल नहीं जितना लड़कों का। और देखिए माइ डियर समझदार और तजुर्बेकार आर्टिस्ट वह है जो अपने चहरे की बनावट की पूरी तरह समझकर अपना मेक अप अपने आप कर सके।

फिर सहसा दास न अपने मूर्तिकार पिता की ओर देखा। माथ की

झुर्रियाँ अनुभव दरशा रही हैं। यह बम्बई का मेक अप नहीं वरकला की परम्परा है। यह यथार्थ है सत्य है। यहाँ के नारियल-गाछ मेक अप नहीं करते। सागर की लहरें अपना आयु कम या अधिक दिखाने की चेष्टा में किसी मीना-बाजार के मेक अप रूम में नहीं जाती। वरकला की लाल माटी ने भी कोई मेक अप नहीं किया। पदचाप सुनती है लाल माटी। हाथी के कानों की तरह झूलते हैं नारियल-गाछ।

दूध की कल्पना में माँ का झुर्रियों वाला मुख-मण्डल उभरता है। कोई मेक अप नहीं। माँ का प्यार—मीठा जैसे कच्चे नारियल का दूध होता है।

धूप की कल्पना में वरकला के मछुवे उभरते हैं। नाव में सागर के बीच तक चले जाना यही उनका धंधा है यही उनकी परम्परा है। यह किसी मीना-बाजार का अभिनय तो नहीं। सागर समीप है वरकला का वरदान! सागर-संगीत हमारी विरासत हमारी परम्परा। दो परछाइयाँ नजर आने का भ्रम ना गया। अब हमारे सामने एक ही मार्ग है—सत्य का मार्ग जिसमें मेक अप की आवश्यकता नहीं। यह हमारा केरल कथकलि का देश है। नाच माटी और पसीने का कथकलि के लिए तैयार है केरल की रंगभूमि। पुराने सब मेक अप झड़ जायेंगे सूखे पत्तों के समान। नई कोंपलें फूट रही हैं।

और क्या कहता है अखबार बेटा दाम?

दाम कुछ उत्तर नहीं देता।

दामोदरन मूर्ति की घिसाई करते-करते पंचानन की तरफ़ देखकर बोला मान भी लें कि गुरुदेव रुद्रपन्म् की नहीं तुममें अपनी ही आत्मा बोल रही है। फिर भी यह तो मानो कि तुम्हारे पीछे है दाम और दाम के पीछे थे गुरुदेव रुद्रपन्म्। परम्परा ही दूध गाछ है!

और हमारी अपनी भी तो कोई दिन होनी चाहिए अपने युग की!
पंचानन गम्भीर स्वर में बोला यानी परम्परा से तो नहीं चलता।



नौ

पूज्य पिताजी

जन नाट्य-संघ का आठवाँ राष्ट्रीय सम्मेलन इस बार दिल्ली म होने जा रहा है। आप जरूर आइए और शरद का भी अवश्य साथ लाइए।

डॉक्टर आनन्द कुमारस्वामी बहुत पहले कह गए

मैं भारतीय जनता के किसी एस कायाकल्प म विश्वास नहीं करता जिसकी अभिव्यक्ति कला म न हो सक किसी भी प्रकार का पुनजागरण यदि वह पुनजागरण है तो कला म अभिव्यक्त होना आव श्यक है।

कला के विकास में आज हम पाछ नहीं रहना चाहते।

कुमारस्वामी की विचारधारा स आप भी सहमत होंग—जब कोई जीवित भारतीय संस्कृति अतीत के ध्वंस और वतमान क उत्थान के बीच उठ खड़ी होती ह तो एक नई परम्परा का जन्म होता है—साहित्य संगीत और कला सबम एक नया स्वप्न मूत होने लगता ह। जिन भारतीयों को अपना दाय मिल रहा है उनकी भारतीयता नहीं गइ नहीं ह। जसे ही उनके जीवन मे बल आयगा वस ही उनकी कला वीयवती होगी। उनकी राष्ट्रीयता अधिक गहरी संस्कृति अधिक व्यापक और प्रम अधिक पूण हो सकता ह। फलस्वरूप उनकी कला अतीत की अपक्षा अधिक ओजस्विनी होगी। किन्तु यह क्रमिक विकास

और विस्तार से ही हो सकता है अतीत से अपना सम्बन्ध तोड़ लेने से नहीं। हम अतीत और भविष्य दोनों से सम्बद्ध हैं। अतीत ने हमने वर्तमान का निर्माण किया और भविष्य का निर्माण इसी वर्तमान में रह रहे हैं। यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपने उस परम्परागत दाय को जो केवल भारत का नहीं समस्त मानवता का है समृद्ध करें और उसे नष्ट न होने दें।

नन्दलाल वसु का कथन भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं।

परम्परा का कला में वही स्थान है जो व्यापार में पूंजी का।

हिन्दू होने के नाते मैं हिन्दू शास्त्रों और परम्पराओं के बीच पला हूं। मैं किसी समय केवल हिन्दू देवी-देवताओं के चित्र बनाया करता था अब मैं उन पुराने स्वरूपों को कोई महत्त्व नहीं देता वरन् प्रत्येक वस्तु में उसी शाश्वत के संगीत-स्वरों को देखने की चेष्टा करता हूं। पहले मैं देवी-देवताओं में ही देवत्व ढूंढता था अब उसे आकाश, जल और पर्वतों में ढूंढता हूं।

सुनिए नहीं। दिल्ली आइए। मैं भी आ रही हूं। इरा भी चल रही है। मेरा मन है। साथ भी आ जाय तो बहार हो जाय। जन-नाट्य संघ की ओर से आप दोनों के लिए निमन्त्रण भिजवा रही हूं।

कला ही सच्चा मार्ग-दर्शन कर सकती है। कुमारस्वामी का यह कथन सोलह आने सत्य है कि राष्ट्र का निर्माण वस्तुतः कवि और कलाकार करते हैं राजनीतिज्ञ और व्यवसायी नहीं।

बुद्धि और विवेक की भाषा एक बात है, कला की भाषा दूसरी बात। कला की आत्मा को समझे बिना हम कला की भाषा नहीं समझ सकते। अव्यक्त से व्यक्त को जोड़ती है कला। मात्र राजनीतिक स्वतन्त्रता से भी क्या होता है? चतुर्मुखी विकास की वरदायिनी है कला। इसी तथा घाट पर आ लगी है मेरी चेतना की नाव। मैं दिल्ली जा रही हूं। आप भी जरूर आइए।

रवीन्द्रनाथ की कवि-वाणी आज हमें सबसे अधिक टेर रही है

पतन अभ्युदय बन्धुर पन्था युग-युग धावित यात्री ।
हे चिर सारथि, तव रथ चक्र मुखरित पथ दिन रात्री ॥

हमारा कला-पथ तो चिर-काल से मुखरित रहा है। आज वह कैसे मूक रह सकता है? 'एतरेयब्राह्मण' का यह सबल मन्त्र आज भी हमारे कानों में गूंज रहा है— जो सोता है वह कलियुग है जो अंगड़ाई लेता है वह द्वापर है जो उठ खड़ा होता है वह त्रेता है और जो चल पड़ता है वह सतयुग है।

कला ही सच्ची यशोगाथा है। कला के बल पर टिकी हुई है हमारी मानवता। उसकी टेक हमारी बहुमुखी चेतना पर है। कला और जीवन के सच्चे मेल के बिना राष्ट्र एक कदम भी नहीं उठा सकता। कला का देवात्मा रूप खोजना होगा। तभी हमारे बंधन टूटेंगे। जन नाट्य-संघ का आगामी अधिवेशन इसी खोज को रंग-मंच पर लाने जा रहा है।

कला आदमी को ऊपर उठाती है उसे सन्तुलन देती है उसे परिपूर्ण करती है युग-युग से हमारी परम्परा यही कहती आई है। हम इस आस्था को बनाये रखना चाहते हैं।

क्या करने जा रहे हैं हम? हमारे निष्ठावान् कलाकार हमारे विचारवान् शिल्पी एक नये क्षितिज को छू लेना चाहते हैं।

तेजोमयी कला आगे बढ़ रही है—सबल लिपि को निहारती-सी मृदंग पर थाप लगाती सी।

जन-नाट्य-संघ का अधिवेशन नये पुष्प खिलाएगा। यह हमारे सबल्प को नई चेतना से सजायेगा। भविष्य के निर्माण में कला क्या योग-दान कर सकती है इस बात का उत्तर देगा यह अधिवेशन। आप अवश्य आइए। भूलिए नहीं। सब को ले आइए अपने साथ तो मुझे दुख होगा। उसे देखे जिस एक युग बीत गया। बम्बई में इरा और दाख का मेल नहीं हो सकता तो दिल्ली में ही सही। यह श्रेय शायद जन नाट्य संघ के इस अधिवेशन को ही मिलने जा रहा है।

भुवनमोहिनी कला धन्य है। युग-युग की वरदायिनी ! राजदण्ड की मूठ नहीं है कला। सात भाई चम्पा जागो रे ! 'कहो कौन पारुल डाको रे ? पारुल अपने सातों भाइयों को जगाती रहेगी और सातों भाई क्या इसी तरह पूछते रहेंगे—बहन पारुल हम क्या बुला रही हो ? बंगला लोक कथा अमर है जिसमें सातों भाई चम्पा और पारुल की मर्म-व्यथा मुड़-मुड़कर जाग उठती है। सौतेली माँ ने पारुल को गड्ढे में फिंकवा दिया था और सातों भाइयों को भी मरवा डाला था। हिम-पुष्पी-सी खिल उठी थी महाश्वेता पारुल और सातों भाई चम्पा बनकर खिल गए थे। मेरा विश्वास है, हमारा युग सौतेली माँ की तरह कला को पारुल और उसके भाइयों की तरह मरवा नहीं डालेगा। जन-नाट्य-संघ का अधिवेशन इस दिशा में आवश्यक युग चेतना से काम लेने जा रहा है। बहुत करने को रहता है। कला की नूतन सम्भावनाएं हमारी बाट जोहती हैं। बाधाएं दूर होंगी। हम ठहरे कला के उत्तराधिकारी। कला गतिमान है स्रोतस्विनी-सी।

नई चेतना अंगड़ाई ले रही है। कौन था वह युग-पुरुष जिसने पुल के नीचे बहुत जल को देखकर कहा था कि सब-कुछ बदल सकता है !

हमारे ये अन्तर्विरोध मिटकर रहेंगे। विचारों का कार्य-कारण सम्बन्ध हमारी नियतियों की समस्या अवश्य सुलझायेगा एक दिन !

हमारे रुद्ध द्वार खोलो भी री वरदायिनी कला ! पत्थर बोलेंगे। तरेगा मानव। हमारा इतिहास कला का इतिहास है। आप आकर भी हम अवाक रहें यह तो अच्छा नहीं लगता।

आप दिल्ली आए मैं गद्गद हो जाऊंगा। मेरे नृत्य के फूल खिलने भी दीजिए।

दिल्ली देश की राजधानी है। हमारी कला की वैजयन्तीमाला। हमारे जन मन की महायान भाषा। बुद्ध-वचन गाई सहस्र वर्ष बाद भी गूंज रहे हैं। अशोक की भावना मरी नहीं। अजन्ता के चित्र बोल रहे

हैं। एलोरा की मूर्तियाँ नाच रही हैं। भोग और योग के बीच का मध्य मार्ग ही हमें प्रिय है। हमारा देश एक परिवार। हमारी कला धरती की आत्मा। सुनो सुनो जन-नाट्य-संघ का आह्वान सुनो। दाग को साथ लेकर दिल्ली चलने की तैयारी करो।

—कला की नई खोज के पीछे पागल आपकी पुत्री
नीलू



८४

नीलू का पत्र नम्बूनिरिप्पाड को झकझोर गया। उसने यह पत्र नीलू की माँ को भी पढ़कर सुनाया।

भोग और योग के बीच का मध्य मार्ग ही हमें प्रिय है। नीलू के शब्द बार बार उसके मन पर थाप लगाते रहे।

एक बात देखी नीलू की माँ! बेचारे गोविन्दन का कहीं नाम नहीं। क्या गोविन्दन इतना बुरा है?

मैं मिलकर पूछूँगा नीलू से। यमुना मुस्कराई ऐसा ही होता है जिसका नाम हम छिपाते हैं उसी के बारे में सबसे अधिक सोच रहे होते हैं।

लहर को लाख दबाओ वह और भी उछलती है। और यही हाल किरन का है जो अन्धकार को चीरकर बाहर आता है। गोविन्दन बुरा नहीं अपने ढंग का अच्छा आदमी है।

गोविन्दन भी तो जा रहा होगा दिल्ली। उसे क्या टिकट नहीं मिलेगा?

तब तो ठीक है। दिल्ली में गोविन्दन के सामने मैं नीलू से कह दूँगा कि वह उसका ध्यान रखा करे। आखिर वह गुरुदेव रुद्रपदम् का सुपुत्र है। वरना को गोविन्दन पर भी उतना ही गर्व है जितना देख पर।

मैं तो कई बार सोचता हूँ नीलू के लिए गोविन्दन अच्छा जीवन

साथी सिद्ध हो सकता है।

उसमें तो हम कुछ नहीं बोलना चाहते। बोलना होता तो पहले ही बोल देते।

नीलू और गोविन्दन के बीच ऐसी कौनसी दीवार है?

'यह मैं क्या जानूं? नीलू तुम्हारी बेटी है। तुम निःसंकोच पूछ सकती हो। दिल्ली में मैं तो पूछने से रहा। इतने वर्ष हो गए वह एक ही नगर में रहते फिर भी बीच की दूरी वैसे ही कायम है तो मैं क्या कर सकता हूं?

यह नीलू की नासमझी है।

मेरा भी यह विचार हो सकता है। पर नहीं इस पत्र को पढ़कर मैं ऐसा नहीं सोच सकता। नीलू नासमझ तो नहीं। गोविन्दन बहुत बकता झकता रहता होगा और वह सब नीलू को नापसन्द होगा। पसन्द अपनी अपनी।

वह काम तो करना ही नहीं चाहिए जिस पर दुनिया उँगली उठाए। पर जीवन-साथी तो ढूँढना ही पड़ता है। मैं नीलू को कई बार लिख चुकी हूँ। कला कला कला! हर समय कला की दुहाई भी कहाँ तक ठीक है? हे भगवान् आजकल की लड़कियों का क्या हो गया?

तो तुम भी चलो दिल्ली। गोविन्दन भी आएगा वहाँ। समझा लेंगे दोनों को। आखिर नीलू को हम अपनी राय तो दे ही सकते हैं।

दृढ़ता और साहस की कमी तो नहीं नीलू में।

तो कमी किस बात की है? सब ठीक हो जायगा धीरे धीरे। समय बलवान है। समय आने पर सब फ़सलें आ जाती हैं।

कला ने नीलू को बाँध रखा है। कला कला कला! मेरी तो समझ में नहीं आती यह बात। चौबीसों घण्टे कोई कला की रट लगा कर कैसे जी सकता है? इस तरह तो जीवन का रथ आगे नहीं चल सकता। मैं कहती हूँ गोविन्दन ने ही अकल से काम लिया होगा।

अब तक तो वह नीलू के मन पर छा सकता था।'

अकल का दुश्मन तो नहीं है गोविन्दन। समय आने दो। नाटक आरम्भ होने में शायद थोड़ी देर है।

तुम यह नाटक-वाटक की बात मत कहो। आखिर तुम नीलू के पिता हो। कुछ तो सोचो।

मेरे सोचने में कोई भूल नहीं। नीलू के लिए सोचना मेरा काम नहीं।

मैं तुम्हें दिल्ली नहीं जाने दूंगा।

अरे क्यों? रूठ गई रानी?

तुम भले आदमी की तरह बात ही नहीं करते।

अच्छा तो तोता हाजिर है। पढ़ाओ तुम्हारे पीछे-पीछे बोलूंगा।

वचन दो कि नीलू से साफ़-साफ़ कहोगे।

क्या?

यही कि अब उसे जीवन-साथी चुनने में देर नहीं करनी चाहिए। गोविन्दन पसन्द नहीं तो कोई दूसरा लड़का ढूंढ़ ले। लेकिन उसका शादी किए बिना बम्बई जैसे नगर में अकेली पड़े रहना ठीक नहीं।

इसकी समझ तुम्हें आज आई? तुम्हें अपनी बेटी के आचरण पर सन्देह है?

छि छि! मुझे नीलू के आचरण पर क्या सन्देह होगा?

तो फिर? कहने में भय तो रहना ही चाहिए।

मैं यह जरूर चाहती हूं कि उसका विवाह हो जाए।

दिल्ली जाकर मैं नीलू से तुम्हारी बात अवश्य कहूंगा। और बताओ।

एक बात मेरी समझ में नहीं आती। नीलू दिल्ली क्यों जा रही है? वहां कौनसा नया तमाशा बनने जा रहा है?

अब यह तो तुम्हारी नीलू ही जानती होगी।

तो तुम क्यों जा रहे हो ? मैं कहे देती हूँ शास नहीं जायगा।

शास जरूर जायगा और मैं भी जाऊँगा। सपने की बात है। क्या सपने जगाती है। शास को इरा मिल जाय फिर से तो कौन बुरा है ? उसे पता चलेगा तो वह रुकेगा नहीं। यह चिट्ठी पढ़कर फड़क उठेगा।

चिट्ठी न हुई जादू हुआ।

जादू ही तो है। तुम्हारा खयाल है ऐसी चिट्ठी हर कोई लिख सकता है ?

मैं तो एक ही बात कहती हूँ नीलू का अज्ञान जल्दी दूर हो वह गोविन्दन को पहचान।

बस यही बात है न ? मैं उससे कह दूंगा। वह न मानी तो उसी का दोष होगा मेरा नहीं।

तुम्हारी दिल्ली-यात्रा शुभ हो। अब तो शास को जरूर ले जाओ।

तुम नहीं चलोगी ?

मुझे तो नीलू ने दिल्ली नहीं बुलाया। मैं नहीं जा सकती। अपने लिए यरकला ही अच्छा है।

वह बात भी कहूँ नीलू से ?

कौनसी ?

कि तुम्हारी माँ कहती है कला से इतना अधिक नाता तो अच्छा नहीं कला पर ही तन-मन वारना शुभ नहीं।

मैंने यह तो नहीं कहा था।

तो फिर ?

कला को रख सभालकर पर एक जीवन-साथी अवश्य चुन ले।

कुछ और कहना है ?

'नीलू का पत्र एक बार फिर सुनूंगी।

छोड़ो। तुम पढ़ लेना। यह मत कहो कि मैं ही इसे पढ़कर सुनाऊँ।

तुम्हें सुनाना होगा।

क्या सब स्त्रियाँ इतनी ही हठी होती हैं? बोलने की भी सख्ती है न मानने की भी सख्ती है? कभी सोचा तुमने नीलू की माँ! इसी तरह मैंने जीवन के लम्बे वर्ष बिता दिए! दीवार से सिर पटकने की बात तो नहीं समझा मैंने इस लम्बे जीवन को!

आग से आग बुझाने की कोशिश तो तुम ही किया करते हो। सीधी बात को भी उलटा करके देखने की तुम्हारी आदत के मारे लाचार हूँ। बात तो इतनी-सी है कि नीलू का विवाह अवश्य होना चाहिए। सब सुख-सपना एक विवाह के बिना व्यर्थ है। धरी रह जायगी सब कला बला! खून पसीना मेहनत हिम्मत सब घर बसाने की माया ही तो है। यही है बुद्धि का वरदान!

अरे नीलू की माँ! समय आने पर वह भी ठीक हो जायगा। नीलू पर मुझे गर्व है। कार्लाइल के शब्दों में बड़भागी है वह जिसे अपने जीवन का काम करने को मिल जाय—Blessed is he who has found his work let him ask no other blessedness मैं चलकर धाव से मिलता हूँ। उसे दिल्ली चलने के लिए तैयार करता हूँ।



ग्यारह

कला मे नीलू का गहरी निष्ठा देखकर शंख पुलकित हो उठा। पर दिल्ली जाने की बात उसके मन न लगी।

इरा से दिल्ली जाने की बात न होती तो वह मान भी जाता।

भविष्य के कारागार में कैद कोई सपनों की परी तो नहीं है इरा! उससे मिलने मैं दिल्ली क्यों जाऊँ?

जब समय बुलाये तो जाना ही होता है। वेद-वचन कितनी जाग्रत प्रेरणा से भरा है—न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः अर्थात् स्वयं परिश्रम किये बिना देवों की मित्रता प्राप्त नहीं होती।

सभी देवता आजकल दिल्ली में ही बसते हैं क्या? जिस ग्राम नहीं जाना उसका पथ क्या पूछना?

तुम्हें चलना होगा शंख! नीलू ने बार-बार आग्रह किया है। यदि आत्मा की पूर्णता का मूर्त रूप है संगीत तो तुम्हें दिल्ली चलना होगा। दिल्ली में असम की नाट्य मण्डली भी आयेगी। असम के बारे में महात्मा गांधी ने ठीक ही तो कहा था—'सुन्दर असम की स्त्रियाँ तो अपने करघों पर कविता बुनती हैं।' मेरा मन कहता है दिल्ली में असम की नाट्य मण्डली रंगमंच पर कविता बुनेगी।

मुझे क्षमा कीजिए, मैं नहीं जा पाऊँगा।

समझा करो शंख! किसीने ठीक ही कहा है। सागर की सतह को चीरकर जब भी कोई प्रवाल-द्वीप सिर निकालता है तो

नहरें उससे टकराने के लिए उदात्त भावना से उठती हैं। दिल्ली की कला-चेतना को तुम एक प्रकाश-द्वीप की संज्ञा दे सकते हो।

दिल्ली भी अपनी होगी पसंद का नाम ! वाह रे दिल्ली ! वहाँ भी होंगी बम्बई-सी क्यूरियो दुकानें जहाँ बुद्ध और गांधी की मूर्तियाँ एक साथ बिकती होंगी।

गांधी की मूर्तियाँ अभी इतनी पुरानी नहीं हुई कि क्यूरियो दुकानों में जगह पा सकें ?

बम्बई में एक बार बुद्ध शरणं गच्छामि वाले बोल को बदलकर इसका आलाप किया था—मद्य शरणं गच्छामि मांस शरणं गच्छामि काम शरणं गच्छामि ! आप शायद यह कहेंगे कि बम्बई में तो मद्य-पान का सुनहरा प्रचार बन्द कर दिया गया और दिल्ली में भी सप्ताह में एक दिन 'ड्राई डे' घोषित कर दिया गया है जबकि होटल और बार' में मदिरा नहीं परोसी जाती। इसलिए, मैं दिल्ली नहीं जाऊँगा।

यह तो ठीक नहीं। यह तो वही बात हुई कि अफलातून ने लिख दिया—कवि लोग सब झूठे हैं और कवि लोग सचमुच झूठे हो गए !

आप बुरा न मानें। दिल्ली जाने को मेरा मन नहीं होता।

गंग इन्कार-पर-इन्कार किये जा रहा था। फिर भी लगता था नम्पूतिरिप्पाड पर शंख के इन्कार का कोई प्रभाव नहीं हुआ। तुम चलोगे जरूर चलोगे। मुझे निराश नहीं करोगे। मेरे लिए नहीं तो नीलू के लिए। इरा की बात छोड़ो। इरा की बात तो शायद नीलू ने कहे ही दी। इरा दिल्ली नहीं जायगी। जीवन में तुम्हारा जो विश्वास है और विश्वास में जो शक्ति है उसे मैं जानता हूँ समझता हूँ।

गंग अब मुँह से न बोला इन्कार में सिर हिलाता रहा।

सागर की लहरों का घोष सुनाई दे रहा था मानो यह शाश्वत घोष भी नम्पूतिरिप्पाड के समान ही शंख से उत्तर माँग रहा हो।

तुम बम्बई जाकर अपनी जया को ही ले आओ ! नम्पूतिरिप्पाड ने गंग की मनोवृत्ति देखते हुए परामर्श दिया।

यह तो मैंने भी सोचा है कई बार।

खाली सोचने से ही क्या होता है? माता दूध-गाछ है तो पिता क्यों नहीं?

मैं कोशिश कर सकता हूं। पर इरा कभी ऐसा नहीं होने देगी। इसीलिए मैं बम्बई नहीं जाता।

शायद तुम्हारी आशंका निराधार है। बम्बई नहीं जाते तो दिल्ली ही चलो। सब ठीक हो जायगा। दस वर्ष का समय कम तो नहीं होता। आज को इरा वही है जिसे तुम छोड़ आये थे, यह कौन कह सकता है?

यह बात तो ठीक लगती है। बम्बई भी वह नहीं होगा जिसे मैं छोड़कर आया था। वही होती तो यह कैसे होता कि जिस गुरुदेव को तब खास पसन्द नहीं किया गया था वह आज पसन्द की जा रही है।

रात का समय था। आकाश पर तारों भरी कनात तन गई थी। विचार का पक्षी पर तोल रहा था। नाव का पक्षी चहक रहा था मानो वह कह रहा हो—जीवन भावहीन है न लक्ष्यहीन न प्रयहीन।

शम्भु का वैरागी रंग दस वर्ष तक कितना गाढ़ा रहा। इधर वह फीका पड़ रहा था। यह बात नम्बूतिरिप्पाड से छिपी हुई तो न थी।

वैराग भी आदमी को भ्रम देता है, दोस्त! बोला साहब बटोरा। दिल्ली चलो। तुम्हारी आँखों में बहुत दिनों से सन्देह और विश्वास का मिश्रण देखता आया हूँ। इरा के पत्र का तुम उत्तर नहीं देते। फिर कैसे बात बने?

नारायण कुछ न बोला। लहरों के प्रहार से दूर हटकर वे सागर तट पर बैठ गए।

सुख की मूर्ति फिर से गढ़ने वाली बात है, दोस्त! पंचानन को तुमने बहुत-कुछ दे डाला। अब अपना सुख लो। अपने प्रति कर्तव्य सबसे बड़ा होता है। दिल्ली में जन-नाट्य-संघ के अधिवेशन में कवि

जयदेव के गीत गोविन्द पर आधारित नृत्य-नाटिका भी प्रदर्शित की जायगी ऐसा नीलू ने लिखा था पहली चिट्ठी में।

तो मैं वह नृत्य-नाटिका देखने चलूं ?

भास्कर से देर सुना तो चलो। नहीं तो रस नहीं आयगा। चलो तो मेरा सौभाग्य है न चलना चाहा तो अब मैं मजबूर नहीं करूंगा।

तो आप मुझे नहीं ले जाना चाहते ?

यही समझ लो।

क्या उसका समय नहीं आया ?

यह प्रश्न अन्तर की श्रद्धा भक्ति से पूछो।

क्या इरा की देह से वैसी ही सहज कान्ति फूट रही होगी ? क्या वह अब भी यही उत्तर देगी कि वह मेरे लिए बम्बई नहीं छोड़ सकती ? तब तो मेरा वहां जाना व्यर्थ है।

मैंने बीज बो दिया फसल अवश्य पकेगी। तुम दिल्ली कब नहीं चलोगे ?

तो चलना ही होगा ?

न चलकर निराशा नहीं रहेगी।

आपको विश्वास है इरा वहां जरूर आयगी ?

नीलू ने ऐसा ही लिखा है।

बात यह है कि मेरा दिल इरा को देखने को नहीं जया को देखने को तड़पता है।

मैं सब जानता हूँ। और यह कोई बुरी बात नहीं।

आकाश पर तारों भरा शामियाना उसी तरह तना हुआ था। सागर की लहरें उसी तरह थाप लगा रही थीं।

यह विराग-सा क्या है दोस्त ? यह तुम्हारे मन का सालता है भीतर ही भीतर यह मैं जानता हूँ। अनुराग अच्छा है जो उदास नहीं होने देता। जीवन-साथी की कमी न संगीत पूर्ण कर सकता है न नृत्य न अभिनय। नीलू के विवाह की चिन्ता भी मुझे पहाड़-सी लग रही

। गोविन्दन उसके लिए ठीक नहीं रहेगा क्या ?

गोविन्दन में तो बहुत सी खूबियाँ हैं जो मुझमें भी न दख सकी इरा। नीलू और गोविन्दन की जोड़ी ठीक रहेगी।

'तो दिल्ली चलने की तयारी करो। शायद कोई सिलसिला बन जाय। हाथ मिलाओ। वचन दो। बोलो कब चलें ? परसों तक तो हर हालत में चल देना होगा।

दास पहले चुप रहा। फिर वह बोला इरा को गटे बहुत पसन्द है। गटे के कथनानुसार कला का अन्तिम और सर्वोच्च ध्येय सौन्दय है। एक बात और। भविष्य के बारे में चिन्ता होना स्वाभाविक है। चलिए मैं आपके निमन्त्रण का स्वागत करता हू।



बारह

दिल्ली के रामलीला मैदान में नटराज पुरी का गौरवमय वातावरण इस बात का प्रमाण था कि भाषा की दीवारें दूर दूर नहीं लगीं। नम्बूतिरिप्पाड प्रसन्न थे। नीलू उनके साथ-साथ घूम रही थी।

बम्बई से इरा आई न गोविन्दन। इसकी चोट शंकर न सह सका। फिर भी वह क्या कर सकता था?

नीलू बोली, "आप थक रहे हैं। प्रतिभा का अभाव तो नहीं हमारे देश में। जन-नाट्य-संघ का यह ऐतिहासिक सम्मेलन याद रहेगा। प्रतिभाओं को जनता के सामने एक मंच पर लाकर खड़ा करने की जिम्मेदारी बहुत बड़ी है।"

असमिया कलाकारों ने अम्बा धावी नाचा और नागा नृत्य पेश किए तो आन्ध्र वालों का नधुआ नृत्य अलग छाप ले रहा था।

"बंगाल का फसल नृत्य कितना बढ़िया रहा!" नीलू तन्मय-सी होकर बोली, "मगर आन्ध्र के ओतकवादन ने कमाल कर दिया। उत्तर प्रदेश का आल्हा कैसा रहा? मुझे तो बहुत अच्छा लगा।"

नम्बूतिरिप्पाड को मैसूर के कर्नाटकी भावपूर्ण नाच-नृत्य ने मोह लिया था। "उड़ीसा का छऊ नृत्य भी कितना रसपूर्ण रहा!" वे विभोर स्वर में कह रहे थे, "राजस्थान का पनघट गीत और नागा नृत्य भी मन को हर लिया गया।"

इरा चुप थी, मानो उसके लिए वहाँ कुछ था न हो।

बंगाल के कलाकार सुकान्त भट्टाचार्य के एक गीत पर आधारित था युवक कलाकार शम्भू भट्टाचार्य का स्वर नृत्य। उसने तो मंच पर जादू सा कर दिया। डाकिये की यह करुण कहानी बंगाल तक ही तो सीमित नहीं लगती, नीलू ने बलपूर्वक कहा, डाकिये का जीवन ही ऐसा है। उसे ये सब मुसीबतें झेलनी ही पड़ती हैं।

असम के कलाकार बलदेव शर्मा द्वारा प्रदर्शित अग्नि-नृत्य की तो नटराज पुरी में धूम मच गई। उनके हाथों में आग की लपटें उठती रहतीं, तालियाँ रहती थीं। क्या मजाल नृत्य में तनिक भी अन्तर पड़ जाय!

घास की मुखमुद्रा से लग रहा था कि बंगाल के कलाकार शम्भू द्वारा प्रदर्शित बंगला नाटक 'एक पत्ते की बाँसुरी' उसे बहुत पसन्द आया। काश इरा भी हमारे साथ यह नाटक देख रही होती, नीलू! उसकी आँखें न अन्य दर्शकों के समान ही पवित्र आँसू बह रहे थे।

मुझे तो असमिया कलाकार मघई ओझा का ढोल बजाने का प्रदर्शन अनुपम लगा। हर कोई तो ऐसा नहीं कर सकता। इसके पीछे लम्बी साधना बोल रही है। हाथों से, कानों से, पैरों से, गालों से, सिर से, बदन को तोड़ मरोड़कर, एक साथ तीन-तीन ढोलक बजाना क्या सबके लिए सहज हो सकता है? नम्बूतिरिप्पाड ने गद्‌गद स्वर में कहा।

नीलू भी चुप न रह सकी, मघई ओझा का सबसे बड़ा कमाल यह है कि वह एक जादूगर के समान रेलगाड़ी की आवाज, बादलों की गड़गड़ाहट, वर्षा की बौछार की आवाज तथा अन्य ध्वनियाँ निकालकर दिग्गज में समर्थ हो सका।

घास टस-से-मस न हुआ। इरा को यहाँ न पाकर वह बहुत उदास था।

नीलू बोली, शायद इरा आज आ जाय।

इरा आई तो 'गायन' गोविन्दन भी आ जाय! नम्बूतिरिप्पाड ने नीलू के मुख पर अपनी बात की प्रतिक्रिया देखने की कोशिश की।

अचला सचदेव ने पंजाबी कवि मोहनसिंह की प्रसिद्ध कविता अम्बी दा बूटा पूरे अभिनय के साथ गाई और दर्शकों के सामने वह सारा दृश्य आ गया कि किस प्रकार पंजाब की एक ग्राम वधू आम-गाछ के नीचे अपने प्रियतम का स्मृति-चित्र देखती-देखती भावुक हो उठती है। सुचित्रा मित्र ने 'एकला चलो रे' गान द्वारा दर्शकों को मन्त्र मुग्ध कर दिया।

उत्तर प्रदेश का लोकगीत हिरनी की व्यथा लेकर मंच पर आया। राजा हिरन का बलिदान रोकना स्वीकार नहीं करता। हिरनी अपने मृत पति की खाल माँगती है और उसे वह भी नहीं मिलती। रानी उसकी खजरी बनवा डालती है। इस खजरी के बजने पर हिरनी को अपने हिरन के मधुर स्वर सुनाई दे जाते हैं और वह सब कुछ भूलकर नाचने लगती है। देखते-देखते नीलू की आँखों में आँसू आ गए।

नम्बूतिरिप्पाड सुअवसर समझकर बोले, बेटी यह बताओ कि तुम अपने लिए कोई जीवन-साथी क्यों नहीं ढूँढ पाई? तुमसे तो एक हिरनी ही अच्छी है।

नीलू ने क्षोभ भरी दृष्टि से पिता की ओर देखा।

हम तो सोचते हैं गोविन्दन ठीक रहेगा।

अच्छा अच्छा! मैं देख लूँगी।

नटराज पुरी के लम्बे कार्यक्रम में कुछ उच्च कोटि के नाटकों का प्रदर्शन भी हुआ। पंजाब के कलाकारों ने शहीद भगतसिंह खेला और बिहार वालों ने भी स्वतन्त्रता के लिए मिटने वाले एक शहीद की जीवन कथा पर आधारित नाटक प्रस्तुत किया। बंगाल के कलाकारों द्वारा अभिनीत यात्रा उत्तर भारत की नौटंकी के गले मिलती मालूम होती है! कहते-कहते नीलू की आँखें चमक उठीं।

बम्बई के कलाकारों ने एक नाटक खेला जिसमें नीलू का नायिका की भूमिका में अभिनय सब पर बाजी ले गया। नम्बूतिरिप्पाड और दास ने सबसे बड़ी मुना कि बंगाल के कलाकारों द्वारा अभिनीत नील

बगाल क कलाकार सुकान्त भट्टाचार्य क । था युवक कलाकार शम्भू भट्टाचार्य का स्वर जादू-सा कर दिया । अभिनय की यह करुण । सीमित नहीं रहता नीरू न बलपूर्वक कहा गया है । उस व वह मुसीबतें झनती ही पड़ती

प्रथम क कलाकार बसन्त धमा द्वारा प्र नन्दराज पुरी म धूम मच गई । उसके गायो म ना धानियाँ रहती था । क्या मजाल कुछ म र्का

गरा की गुनगुना हे नग रहा था कि गरा प्रदर्शित बगला नाटक एक पक्ष का द आया । बाग इरा भी हमार साथ यह नाट उनको भौला न मन्च ल्पाका क समान ही भ

मुझ तो अतमिया कलाकार मधइ प्रदान अनुपम लगा । हर कोई तो गला न लम्बी साधना चाह रही है । हाथों से कान म बदन को तोड़ मरोड़कर एक साथ तीन सबक लिए सहज हो सकता है ? नम्पूि कहा ।

नीरू भी चुप न रह सकी मधइ यो है कि वह एक जादूगर क समान रेलगाडी गड़गड़ाहट वर्षा की बौछार की आवाज तथ निपात म समय हो सका ।

नम्म टस-स-मस न हुआ । इरा न उनाम था ।

नीरू बोली नायक इरा आज था ना

इरा भाई तो नायद गोविन्दन भा न नीरू क मुख पर अपनी बात की प्रतिक्रिया

क्रम चलता रहा।

एक दिन सवेरे ही गोविन्दन आ गया।

नाम ग्रौर गोविन्दन जब मिले तो नीलू ने ताली बजाई।

चित्र प्रदर्शनी में घूमते समय गोविन्दन बोला नीलू तुम्हारा अभिनय तो श्री एकमो आठ गोविन्दन भवनार बम्बई में देख सका। नाम का संगीत तो यहां सुनने को मिल सकता है।

दास देर तक इन्कार में सिर हिलाता रहा ग्रौर फिर उसे कहना पड़ा— मेरी कोई इच्छा नहीं कि संगीत के कार्यक्रम में भाग लूं पर गोविन्दन के आग्रह को टालना भी तो सहज नहीं। मैं गाऊंगा।"

उसे लगा उसके कान में इरा की पगध्वनियां आ रही हैं—साईं शिशु मुस्कान-सी ग्रनबोली भाषा-सी उसके कण्ठ में ग्राकर रचना ग्रौर संगीत एक हो गए।

वह अपने भीतर सिमटकर गा रहा था।

उसे लगा यह सब बकवास है। बहन्नुन में जाय मेरा संगीत ग्रौर नीलू का नाच। भस्म हो जाय नटराजपुरी इसकी वह चित्र प्रदर्शनी भी स्वाहा हो जाय। फिर भी वह गा रहा था ग्रौर यही भाव उसके संगीत प्रवाह में उमड़ रहे थे।

नम्पूतिरिप्पाड ने नीलू का कंधा झकझोड़कर कहा देख रही हो नीलू! नाम के संगीत में यही भाव उभर रहा है कि हर क्षण अनादि अनन्त काल का ही मूर्त रूप है।

नीलू के कान गोविन्दन की तरफ लगे थे जो कह जा रहा था "मैंने इरा को बहुत समझाया वह न मानी। वह यहां आ गई होती तो मैं दावे से कह सकता हूं कि नाम के साथ उसका विवाह सयोग में बदल जाता।"

इरा की बात छोड़ो, नम्पूतिरिप्पाड ने गोविन्दन को सम्बोधित करते हुए कहा तुम अपनी बात करो। जो बात मेरे मन में है वह मैं नीलू से पहले ही कह चुका हूं।

रहने भी दो पिताजी! नीलू ने लजाकर सिर झुका लिया।

के बगीचों के प्रसिद्ध विद्रोह पर आधारित नील दर्पण से भी बम्बई वालों का नाटक उन्नीस के मुकाबले में इक्कीस रहा।

जन-नाट्य-संघ के इस सम्मेलन में एक चित्र प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया था।

नाट्य-कला का इतिहास हमारी समझ में आये बिना नहीं रहता। यूनानी रंग-मंच का विकास देखिए। प्राचीन भारतीय रंग-मंच की भावनात्मक और बौद्धिक सम्पन्नता पर भी ध्यान दीजिए। वह रहा शेक्सपीयर का यथार्थवाद। वह रहा मोलियर का नया तत्त्व। अब जरा जर्मन-नाटककार बर्थोल्ड ब्रख्त का आधुनिक यथार्थ महाकाव्य का चित्रण देखिए। नम्पूतिरिप्पाड कहते गए, मानो वे कॉलिज की क्लास ले रहे हों।

इस चित्र प्रदर्शनी में अनेक पोस्टर चार्ट और बहुविध चित्र लगाये गए थे। एक कक्ष में उन्नीसवीं शताब्दी में फ्रांस जर्मनी और ब्रिटेन में हुए जनवाद से सम्बन्धित चित्र-सामग्री से काम लिया गया था। साथ ही इस प्रदर्शनी में यह भी बलपूर्वक दिखाया गया था कि जन-नाट्य संघ ने किस प्रकार नाटकों गीतों और आपेरा आदि माध्यमों से जन जागृति के लिए ठोस काम किया था।

'पूरे सज-धज के साथ लोक रंजन के विविध कलात्मक माध्यम गले मिल रहे हैं।' कहते-कहते नीलू ने बड़े गर्व से याकूब की ओर देखा आप मेरे साथ बम्बई चलिए। इरा कह रही थी जया के पिता को लेकर आऊँ। कहो क्या सलाह है? लोक रंजन के माध्यमों के गले मिलने की बात पीछे छूट गई।

नम्पूतिरिप्पाड ने गोविन्दन की बात छेड़ी 'हर काम के लिए एक समय होता है नीलू! देर तो बहुत हो चुकी है पर गोविन्दन से कहा जाय तो वह मान जायगा। वह यहाँ आया होता तो मैं पूछ देखता। तुम समझदार हो नीलू! बम्बई जाकर बात कर देखना। मुझे लिखना अब इस काम में और ढील नहीं होनी चाहिए।

नटराज पुरी में कई दिन तक नृत्य, अभिनय और संगीत का काय

क्रम चलता रहा।

एक दिन सवेरे ही गोविन्दन आ गया।

शम्भु और गोविन्दन गले मिले तो नीलू ने ताली बजाई।

चित्र प्रदर्शनी में घूमते समय गोविन्दन बोला नीलू, तुम्हारा अभिनय तो थी एकसौ आठ गोविन्दन अवतार बम्बई में देख लगा। शम्भु का संगीत तो यहां सुनने को मिल सकता है।

शम्भु देर तक इन्कार में सिर हिलाता रहा और फिर उसे कहना पड़ा— मेरी कोई इच्छा नहीं कि संगीत के कार्यक्रम में भाग लूं पर गोविन्दन के आग्रह को टालना भी तो सहज नहीं। मैं गाऊंगा।'

उसे लगा उसके कान में झरा की पगध्वनियां आ रही हैं—कोई शिशु मुस्कान-सी अनबोली भाषा-सी जो उसके कण्ठ में आकर बसना और संगीत एक हो गए।

वह अपने भीतर सिमटकर गा रहा था।

उसे लगा यह सब बकवास है। जहन्नुम में जाय मेरा संगीत और नीलू का नृत्य। नष्ट हो जाय नटराजपुरी इनकी वह चित्र प्रदर्शनी भी श्मशान हो जाय। फिर भी वह गा रहा था और यही भाव उसके संगीत प्रवाह में उमड़ रहे थे।

नम्बूतिरिप्पाड ने नीलू का कंधा झकझोरकर कहा देख रही है नीलू! शम्भु के संगीत में यही भाव उभर रहा है कि हर क्षण अनादि अनन्त काल का ही मूर्त रूप है।'

नीलू के कान गोविन्दन की तरफ लगे थे जो कह जा रहा था मैंने झरा को बहुत समझाया वह न मानी। वह यहां आ गई होती तो मैं दावे से कह सकता हूं कि शम्भु के साथ उसका वियोग संयोग में बदल जाता।"

झरा की बात छोड़ो नम्बूतिरिप्पाड ने गोविन्दन को सम्बोधित करते हुए कहा तुम अपनी बात करो। जो बात मेरे मन में है वह मैं नीलू से पहले ही कह चुका हूं।

रहने भी दो पिताजी! नीलू ने लजाकर सिर झुका लिया।

ऐसी भी क्या बात है ?" गोविन्दन ने अपने मुख पर भोलेपन की मुद्रा लाते हुए उसमें एक व्यंग-सा उभारकर कहा क्या कोई ऐसी भी बात है जो श्री एक्सी आठ गोविन्दन अवतार के मन को अभी तक नहीं छू सकी ? नहीं बाबा हम उस चक्कर में नहीं पड़ेंगे जिसमें हमारा बाप पड़ गया।

गास ने कोई भूल नहीं की।" नम्पूतिरिप्पाड ने थाप लगाई।

तो क्या इरा ने भूल की ?" गोविन्दन चुप न रह सका मैं मान लेता हूँ इरा ने ही भूल की। बात साफ है। जो भूल इरा ने की वह नीलू भी क्यों करे ?

नीलू ने गोविन्दन का बायाँ कान प्यार से सहलाते हुए कहा बिलकुल ठीक। मैं वह भूल नहीं करूँगी।

नम्पूतिरिप्पाड को लगा बागडोर हाथ से छूट रही है। बोले यह भूल किये बिना तो गुजारा नहीं बनेगा ! भगवान की यही इच्छा है सृष्टि की यही लीला है।

सुनो सुनो ! नीलू ने बलपूर्वक कहा हम यहाँ दाख का संगीत सुनने आये हैं। बातें तो किसी भी समय हो सकती हैं।

दाख का संगीत यही तो बता रहा था—सबसे बड़ी यातना है एकाकी होना मिलकर बिछुड़ जाना ! हम एकाकी नहीं रहना चाहते। इस तरह तो हम समाप्त हो जायेंगे हमारी चिनगारी बुझ जायगी। इस तरह तो हमारे भीतर की अमृत-सहस्रधारा सूख जायगी। हमारे भीतर जो जीवन है वह बाहर के जीवन से मिलकर एकाकार होना चाहता है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले मैंने तो तुम्हारी माँ से भी कहा था दिल्ली चलो। वह मानी ही नहीं। उसे भी यहाँ होना चाहिए था !

गोविन्दन और नीलू की आँखें इस पर एक-दूसरे को जाने क्या कुछ कह गईं। गोविन्दन ने मूक अभिनय द्वारा नीलू के पिता को ही अपने व्यंग्य का निशाना बना डाला—बुड्ढे हो गए बाल पक गए, फिर

भी जीवन-संगिनी का यह चार दिन का अभाव भी खटक रहा है। और फिर वह दूसरी ही धुन में मानो कह गया—अपने राम हैं कि अभी जीवन-संगिनी मिली ही नहीं।

शंख का संगीत मानो यातना का प्रतीक था। एक कलाकार की व्यथा-लीला? हारकर भी हार न मानने वाले एक प्राणी की गाथा। शायद इसीलिए शंख का कण्ठ बहुत तेज नहीं चल पा रहा था। यह जीवन की एक विराट अनुभूति का संगीत था।

'शायद यह वह दीपक राग है जिससे दीये जलाये जा सकते हैं!' पास से कोई बोला।

नीलू ने आंखों-ही आंखों में इस पर गोविन्दन की राय पूछी। वह बोला, "दीये जलाने वाली बात तो झूठ है। सारा दीपक गाओ, कोई दीये-वीये नहीं जलते।"

तम्पूतिरिप्पाड चुपचाप बैठे संगीत सुन रहे थे।

गोविन्दन बोला, "इस को वापस बम्बई चलना ही होगा, देख लेना नीलू! एक दिन ऐसा होकर रहेगा, नहीं तो यह आदमी मर जायगा। इरा के बिना अब यह अधिक दिन जी नहीं सकता।"

"यह तो तुमने मेरे ही मन की बात कही," नीलू मुस्कराई।

"मैं भी चाहता हूं एक जीवन-संगिनी!"

"कैसी?"

"है एक। आज मुसीबत तो यह है कि मैं उसे पूरी तरह नहीं जान पाया।"

"उसमें तुमने कोई बुराई देखी?"

"एक बुराई नहीं, बहुत-सी बुराइयां। पर सौ बुराइयों की एक बुराई यही है कि वह अपना अहम् झुकाने को तैयार नहीं। अहम् को झुकाये बिना विवाह नहीं हो सकता।"

"अहम् को खो दिया तो फिर बचा क्या? फिर तो समझो सारा व्यक्तित्व ही स्वाहा हो गया।

ऐसी भी क्या बात है ? गोविन्दन ने अपने मुख पर भोलपन की मुद्रा लाते हुए उसमें एक व्यंग-सा उभारकर कहा 'क्या कोई ऐसी भी बात है जो थी एकसौ आठ गोविन्दन अवतार के मन को अभी तक नहीं छू सकी ? नहीं बाबा हम उस चक्कर में नहीं पड़ेंगे जिसमें हमारा ध्यान पड़ गया।'

शंख ने कोई भूल नहीं की।" नम्पूतिरिप्पाड ने थाप लगाई।

तो क्या इरा ने भूल की ?" गोविन्दन चुप न रह सका मैं मान लेता हूँ इरा ने ही भूल की। बात साफ है। जो भूल इरा ने की वह नीलू भी क्यों करे ?

नीलू ने गोविन्दन का बायाँ कान प्यार से सहलाते हुए कहा बिलकुल ठीक। मैं वह भूल नहीं करूँगी।'

नम्पूतिरिप्पाड को लगा बागडोर हाथ से छूट रही है। बोले यह भूल किए बिना तो गुजारा नहीं चलता ! भगवान की यही इच्छा है सृष्टि की यही लीला है।

सुनो सुनो ! नीलू ने बलपूर्वक कहा 'हम यहाँ शंख का संगीत सुनने आये हैं। बातें तो किसी भी समय हो सकती हैं।

शंख का संगीत यही भाव जगा रहा था—सबसे बड़ी यातना है एकाकी होना मिलकर बिछुड़ जाना ! हम एकाकी नहीं रहना चाहते। इस तरह तो हम समाप्त हो जायेंगे हमारी चिनगारी चुक जायगी। इस तरह तो हमारे भीतर की अमृत-सहस्रधारा सूख जायगी। हमारे भीतर जो जीवन है वह बाहर के जीवन से मिलकर एकाकार होना चाहता है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले मैंने तो तुम्हारी माँ से भी कहा था दिल्ली चलो। वह मानी ही नहीं। उसे भी यहाँ होना चाहिए था !

गोविन्दन और नीलू की आँखें इस पर एक-दूसरे को जाने क्या कुछ कह गईं। गोविन्दन ने मूक अभिनय द्वारा नीलू के पिता को ही अपने व्यंग्य का निशान बना डाला—बुड्ढे हो गए बाल पक गए फिर

भी जीवन-संगिनी का यह चार दिन का अभाव भी खटक रहा है। और फिर वह दूसरी ही धुन में मानो बह गया—अपने राम हैं कि अभी जीवन-संगिनी मिली ही नहीं।

नाथ का संगीत गहन यातना का प्रतीक था। एक कलाकार की व्यथा-लीला हारकर भी हार न मानने वाले एक प्राणी की गाथा। शायद इसीलिए नाथ का कण्ठ बहुत तेज नहीं चल पा रहा था। यह जीवन की एक विराट अनुभूति का संगीत था।

'शायद यह वह दीपक राग है जिससे दीये जलाये जा सकते हैं!' पास से कोई बोला।

नीलू ने आँखों-ही आँखों में इस पर गोबिन्दन की राय पूछी। वह बोला, 'दीये जलाने वाली बात तो झूठ है। सारे दीपक गाओ कोई दीया-वीया नहीं जलते।'

नम्बूतिरिप्पाड चुपचाप बैठे संगीत सुन रहे थे।

गोबिन्दन बोला, "नाथ को वापस बम्बई चलना ही होगा, देख लेना नीलू! एक दिन ऐसा होकर रहेगा, नहीं तो यह आदमी मर जायगा। इरा के बिना अब यह अधिक दिन जी नहीं सकता।"

'यह तो तुमने मेरे ही मन की बात कही,' नीलू मुस्कराई।

'मैं तो चाहता हूँ एक जीवन-संगिनी!'

'कोई?'

'है एक। आज मुसीबत तो यह है कि मैं उसे पूरी तरह नहीं जान पाया।"

'उसमें तुमने क्या बुराई देखी?"

'एक बुराई नहीं, बहुत-सी बुराइयाँ। पर सौ बुराइयों की एक बुराई यही है कि वह अपना अहम् झुकाने को तैयार नहीं। अहम् को झुकाये बिना विवाह नहीं हो सकता।'

'अहम् को खो दिया तो फिर बचा क्या? फिर तो समझो सारा व्यक्तित्व ही स्वाहा हो गया।

ऐसी भी क्या बात है ?' गोबिन्दन ने अपने मुख पर भोलपन की मुद्रा लाते हुए उसमें एक व्यंग-सा उभारकर कहा, 'क्या कोई ऐसी भी बात है जो थी पनसो आठ गोबिन्दन अवतार के मन में अभी तक नहीं आ सकी ? नहीं बाबा, हम उस चक्कर में नहीं पड़ेंगे जिसमें हमारा बाप पड़ गया।'

'इसने कोई भूल नहीं की।' नम्पूतिरिप्पाड ने बात दुहराई।

'तो क्या इरा ने भूल की ?' गोबिन्दन चुप न रह सका, 'मैं मान लेता हूँ इरा ने ही भूल की। बात साफ है। जो भूल इरा ने की, वह नीलू भी क्यों करे ?'

नीलू ने गोबिन्दन का बायाँ कान प्यार से सहलाते हुए कहा, 'बिलकुल ठीक। मैं वह भूल नहीं करूँगी।'

नम्पूतिरिप्पाड को लगा, बागडोर हाथ से छूट रही है। बोले, 'यह भूल किये बिना तो गुजारा नहीं बेटी! भगवान् की यही इच्छा है, सृष्टि की यही लीला है।'

'सुनो, सुनो !'' नीलू ने बलपूर्वक कहा, 'हम यहाँ रात का संगीत सुनने आये हैं। बातें तो किसी भी समय हो सकती हैं।'

रात का संगीत यही भाव जगा रहा था—सबसे बड़ी यातना है एकाकी होना, मिलकर बिछुड़ जाना। हम एकाकी नहीं रहना चाहते। इस तरह तो हम समाप्त हो जायेंगे, हमारी चिनगारी बुझ जायगी। इस तरह तो हमारे भीतर की अमृत-सहस्रधारा सूख जायगी। हमारे भीतर जो जीवन है, वह बाहर के जीवन से मिलकर एकाकार होना चाहता है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले, 'मैंने तो तुम्हारी माँ से भी कहा था, दिल्ली चलो। वह मानी ही नहीं। उसे भी यहीं होना चाहिए था।'

गोबिन्दन और नीलू की आँखें इस पर एक-दूसरे को जाने क्या कुछ कह गईं। गोबिन्दन ने मूक अभिनय द्वारा नीलू के पिता को ही अपने व्यंग्य का निशाना बना डाला—बुड्ढे हो गए, बाल पक गए, फिर

की जीवन-संगिनी का यह चार दिन का अभाव भी खटक रहा है। और फिर वह दूसरी ही मुद्रा में मानो कह गया—अपने राम हैं कि अभी जीवन-संगिनी मिली ही नहीं।

शंख का संगीत गहन यातना का प्रतीक था। एक कलाकार की व्यथा-लीला हारकर भी हार न मानने वाले एक प्राणी की गाथा। शायद इसीलिए शंख का कण्ठ बहुत तेज नहीं चल पा रहा था। यह जीवन की एक विराट् अनुभूति का संगीत था।

'शायद यह वह दीपक राग है जिससे दीये जलाये जा सकते हैं!' पास से कोई बोला।

नीलू ने आँखों ही आँखों में इस पर गोविन्दन का राय पूछी। वह बोला, 'दीये जलाने वाली बात तो झूठ है। लाख दीपक गाओ, कोई दीया-बीया नहीं जलता।'

नम्बूतिरिप्पाड चुपचाप बैठे संगीत सुन रहे थे।

गोविन्दन बोला, 'शंख को वापस बम्बई चलना ही होगा, देख लेना नीलू! एक दिन ऐसा होकर रहेगा, नहीं तो यह आदमी मर जायगा। इरा के बिना अब वह अधिक दिन जी नहीं सकता।'

'यह तो तुमने मेरे ही मन की बात कही,' नीलू मुस्कराई।

'मैं भी चाहता हूँ एक जीवन-संगिनी।'

'कहीं?'

'है एक। आज मुसीबत तो यह है कि मैं उसे पूरी तरह नहीं जान पाया।'

'उसमें तुमने कोई बुराई देखी?'

'एक बुराई नहीं, बहुत-सी बुराइयाँ। पर सौ बुराइयों की एक बुराई यही है कि वह अपना अहम् कुर्बान को तैयार नहीं। अहम् को झुकाये बिना विवाह नहीं हो सकता।'

'अहम् भी खो दिया तो फिर बचा क्या? फिर तो समझो सारा व्यक्तित्व ही स्वाहा हो गया।'

शायद यह बात ठीक है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले सगीत सुनो। ये बातें तो फिर भी कर सकते हो। रुद्रपदम् से एक सौ एक कदम आगे है नल का सगीत ! यह समझो नल म रुद्रपदम् जीवित है।'

और गोविन्दन म नही ? नीलू ने आँखें नचाई गोविन्दन तो गुरुदेव रुद्रपदम् का सुपुत्र है।

पर नल ही गुरुदेव का सच्चा मानस-पुत्र है।

गोविन्दन बोला इरा को छोड़कर नल ने सबसे बड़ी भूल की। इरा सच्ची है। मैं कह सकता हू उसने अपने मन म बाल बराबर भी इरा के लिए दूरी नही मान दी।

नम्पूतिरिप्पाड मानो इसी क्षण के इन्तजार म बठे थे तुम जो वचन दो कि नीलू क लिए कभी अपने मन म बाल बराबर भी दूरी नहीं आन दोगे तो मैं तुम दोनों की जोड़ी की कामना कर सकता हू।

छोडिए पिताजी !' नीलू न खीझकर कहा।

फिर सगीत का दूसरा झोंका आया। लगता था दीपक राग स दीये जल गए।

नल गा रहा था।

वह अपार अग्नि म जल रहा था फिर भी जस वह अग्नि स बच जाना चाहता हो।

रग-मच पर रख एक सौ एक दीप जन नाट्य सघ के अधिकारी की आज्ञा न ठीक समय पर एक साथ जला दिए गए थ।

दर्शकों की तालियो से नटराजपुरी का यह अस्थायी मण्डप गूज उठा।

और फिर नम्पूतिरिप्पाड न दखा कि गोविन्दन पास की कुरसी स उठकर कही चला गया।

नीलू बोली वहीं बाहर गया होगा पान खाने।'

पान की आदत भी कितनी बुरी है ! नम्पूतिरिप्पाड मुस्कराय।

थोड़ी देर बाद मंच से घोषणा की गई कि अब बम्बई के कलाकार मल्हार गायेंगे।

मल्हार के स्वर उठे।

थोड़ी देर बाद मंच पर वर्षा होने लगी।

दीप बुझते गए एक-एक करके! दास उस तरफ बैठा था। वर्षा होती रही। दास अपनी जगह से न उठा जैसे दीपक-राग की आग बुझाने के लिए यह सब आवश्यक हो।

फिर मल्हार गाने वाले ने उठकर दीपक गाने वाले को गले से लगाया।

नम्पूतिरिप्पाड ने कहा अरे वाह नीलू! यह मल्हार गाने वाला तो हमारा गोविन्दन ही निकला!

शायद यह बात ठीक है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले, संगीत सुनो। ये बातें तो फिर भी कर सकते हो। रुद्रपदम् से एक सौ एक कदम आगे है शंख का संगीत! यह समझो, शंख में रुद्रपदम् जीवित है।

और गोविन्दन में नहीं ? नीलू ने आँखें नचाईं। गोविन्दन तो गुरुदेव रुद्रपदम् का सुपुत्र है।

पर शंख ही गुरुदेव का सच्चा मानस पुत्र है।

गोविन्दन बोला, इरा को छोड़कर शंख ने सबसे बड़ी भूल की। इरा सच्ची है। मैं कह सकता हूँ उसने अपने मन में बाल बराबर भी शंख के लिए दूरी नहीं आने दी।

नम्पूतिरिप्पाड मानो इसी क्षण के इन्तजार में बैठे थे। तुम भी वचन दो कि नीलू के लिए कभी अपने मन में बाल बराबर भी दूरी नहीं आने दोगे, तो मैं तुम दोनों की जोड़ी की कामना कर सकता हूँ।

छोड़िए पिताजी! नीलू ने खीभकर कहा।

फिर संगीत का दूसरा भाग आया। लगता था दीपक-राग से दीये जल गए।

शंख गा रहा था।

वह अपार अग्नि में जल रहा था, फिर भी शंख वह अग्नि से बच जाना चाहता था।

रंग-मंच पर रखे एक सौ एक दीये जब नाट्य संघ के अधिकारी की आज्ञा से ठीक समय पर एक साथ जला दिए गए थे।

दर्शकों की तालियों से नटराजपुरी का यह अस्थायी मण्डप गूँज उठा।

और फिर नम्पूतिरिप्पाड ने देखा कि गोविन्दन पास की कुरसी से उठकर कहीं चला गया।

नीलू बोली, कहीं बाहर गया होगा पान खाने।

पान की आदत भी कितनी बुरी है! नम्पूतिरिप्पाड मुस्कराए।

थोड़ी दर बाद मच से घोषणा की गई कि अब बम्बई क कलाकार मल्हार गायेंगे।

मल्हार के स्वर उठ।

थोड़ी दर बाद मच पर वर्षा होने लगी।

दीप बुझते गए एक-एक करके। शख उस तरफ बठा था। वर्षा होती रही। शख अपनी जगह से न उठा जसे दीपक राग की आग बुझाने के लिए यह सब आवश्यक हो।

फिर मल्हार गाने वाल न उठकर दीपक गाने वाल को गले स लगाया।

नम्पूतिरिप्पाड न कहा अरे वाह नीलू! यह मल्हार गाने वाला तो हमारा गोविन्दन ही निकला!

'शायद यह बात ठीक है।

नम्पूतिरिप्पाड बोले संगीत सुनो। ये बातें तो फिर भी कर सकते हो। रुप्पन्म से एक सौ एक कदम आगे है शंख का संगीत! यह समझो शंख में रुद्रपदम् जीवित है।'

'और गोविन्दन में नहीं?' नीलू ने आंखें नचाई गोविन्दन तो गुरुदेव रुद्रपदम् का सुपुत्र है।

पर शंख ही गुरुदेव का सच्चा मानस-पुत्र है।

गोविन्दन बोला इरा को छोड़कर शंख ने सबसे बड़ी भूल की। इरा सच्ची है। मैं कह सकता हूं उसने अपने मन में बाल बराबर भी शंख के लिए दूरी नहीं आने दी।

नम्पूतिरिप्पाड मानो इसी क्षण के इन्तजार में बैठे थे तुम भी वचन दो कि नीलू के लिए कभी अपने मन में बाल बराबर भी दूरी नहीं आने दोगे तो मैं तुम दोनों की जोड़ी की कामना कर सकता हूँ।

छोड़िए पिताजी!' नीलू ने खीझकर कहा।

फिर संगीत का दूसरा झोंका आया। लगता था दीपक राग से दीये जल गए।

शंख गा रहा था।

वह अपार अग्नि में जल रहा था फिर भी जैसे वह अग्नि से बच जाना चाहता हो।

रंग-मंच पर रखे एक सौ एक दीये जन नाटय संघ के अधिकारी की आज्ञा से ठीक समय पर एक साथ जला दिए गए थे।

दर्शकों की तालियों से नटराजपुरी का यह अस्थायी मण्डप गूंज उठा।

और फिर नम्पूतिरिप्पाड ने देखा कि गोविन्दन पास की कुरसी से उठकर कहां चला गया।

नीलू बोली कहीं बाहर गया होगा पान खाने।

पान की आदत भी कितनी बुरी है! नम्पूतिरिप्पाड मुस्कराए।

थोड़ा देर बाद मंच से घोषणा की गई कि अब बम्बई के कलाकार मल्हार गायेंगे।

मल्हार के स्वर उठे।

थोड़ी देर बाद मंच पर वर्षा होने लगी।

दीप बुझते गए, एक-एक करके। पानी उन तरफ बढ़ा था। वर्षा होती रही। पर अपनी जगह से न उठा जैसे दीपक-राग की आग बुझाने के लिए यह सब आवश्यक था।

फिर मल्हार गाने वाले ने उठकर दीपक गाने वाले को गले से लगाया।

नम्बूतिरिपाड ने कहा अरे बाह भानू! यह मल्हार गाने वाला तो हमारा गोविन्दन ही निकला!



तेरह

विवाह होते देर न लगी। नीतू ने हँसकर कहा, 'मैंने यह बात नहीं मानी—

घर का जोगी जोगना, आन गाँव का सिद्ध !'

गोविन्दन बोला, 'लेकिन एक बात जरूर हुई। नरगिस ने तो पद्म श्री की उपाधि पाकर ही अचानक सुनीलदत्त के साथ विवाह-सूत्र में बँधकर अपने प्रशंसकों के दिलों में एक विचित्र-सा आन्दोलन खड़ा कर दिया और तुमने पद्मश्री बनने तक इन्तज़ार करना या यह कहो कि इसके लिए भी एकसौ आठ गोविन्दन अवतार का इन्तज़ार करना जरूरी नहीं समझा।

नम्पूतिरिप्पाड प्रसन्न थे। नीतू और गोविन्दन ने उनकी आज्ञा का पालन किया। उनका यही विचार था, 'तुम दोनों सुखी रहो! यही मेरा आशीर्वाद है।

शरत ने भी इस विवाह पर स्वीकृति की छाप लगाते हुए कहा, 'विवाह तभी विवाह है जब तुम स्वयं को इसमें डूबे हुए अनुभव करो। तभी जीवन रथ आगे बढ़ सकता है।'

'तुम्हारा जीवन रथ भी तो आगे बढ़ना चाहिए,' नीतू ने गम्भीर मुद्रा में कहा, 'मेरी मानो तो बम्बई बसो। इरा तुम्हें पाकर धन्य हो उठेगी।'

'इरा आज भी शरत की ही है!' गोविन्दन ने बलपूर्वक कहा,

'वह तो औरत ही औरत की बात ज्यादा समझ सकती है पर श्री एकली आठ गोविन्दन अवतार का भी इरा से थोड़ा परिचय है। मैं जानता हूँ इरा चाहे भी तो किसी और की नहीं हो सकती। हाँ जया बीच में न होती तो बात दूसरी थी।

तुम बम्बई जाओ यार! मैं अकेला वरकला चला जाऊँगा!' नम्बूतिरिप्पाड ने कहा तुम्हारी कर्मभूमि तो अब बम्बई ही हो सकती है। वरकला में तुमने पचानन को जो ज़्यादा था दे डाला। अब जाकर अपनी इरा से मिलो जाकर जया को गले लगाओ। और फिर यह बात भी तो है कि आज वह बम्बई नहीं है जिसे तुम दस बरस पहले छोड़कर चले आये थे। वहाँ अच्छी फिल्म बनेंगी जिनमें जीवन अमर हो सके। और अच्छी फिल्मों में अच्छा संगीत भी रखना होगा। वहाँ जाओ। थोड़ा तुम झुको थोड़ा दूसरों को झुकाओ यही जीवन है। बिलकुल विवाह वाली बात समझो।

आप भी बम्बई चलिए गोविन्दन ने सुझाव रखा फिर हाल भी चल सकता है! आपको भी वरकला में ऐसा क्या काम है? क्या बम्बई आपके अनुभव से लाभ नहीं उठा सकती?

'मेरा स्थान तो वरकला में ही हो सकता है। मेरा अभिनय अब और नहीं चलेगा। परदा गिरने से पहले मुझे बम्बई में नहीं वरकला में ही होना चाहिए। नम्बूतिरिप्पाड कहते चले गए, पर तुम बम्बई ज़रूर जाओ। मेरा ख्याल है कि शीघ्र ही हमारे देश में जागरूक लोग यह विचार फिल्म-निर्माताओं के दिल और दिमाग़ तक पहुँचाकर छोड़ेंगे कि समाज में बुराइयाँ पैदा करने वाली फिल्मों का निर्माण बन्द कर दिया जाए।

यह काम तो सरकार को करना चाहिए। गोविन्दन ने युक्ति दी "यह बात कहने वाले तो बम्बई में कभी नहीं पर फ़िल्म निर्माता इस पर कान नहीं धरते।

"उन्हें एक दिन इस पर कान धरना ही होगा। नाम्बू ने उभार

स्तर में करना नव नाट्य मच का यह सम्मेलन फिल्म निर्माताओं के लिए एक चुनौती है। वे नही सम्भलेंगे तो उनका काम वसे ही चौपट हो जायगा। रग मच का काम ज्यों-ज्यों आगे बढ़ेगा और वह भी अच्छे स्तर पर तो लोग फिल्मों से हटकर रग-मच की ओर झुकेंगे। मेरा ख्याल है कि अच्छे रग-मच की हाजिरी म बुरी फिल्मों का निर्माण अपने आप सूखे पत्तों की तरह झड़ जायगा।

गोविन्द बोला

लोगों को अच्छे मार्ग से भटकाने वाली फिल्मों के निर्माण की छूट ऐसी ही है जसे हमारे देश में यह छूट दे दी जाय कि खुले आम जहर का व्यापार किया जा सकता है। आज जहर बेचने पर लाइसेंस लेना पड़ता है। लेकिन जहर फैलाने वाली फिल्म जो चाहे आजादी से बना सकता है। क्या इसी का नाम आजादी है?

नन्द बोला

कहने को तो सभी फिल्म निर्माता गला फाड़ फाड़कर यही कहते हैं— जनता जो कुछ चाहती है वही तो हम अपनी फिल्मों में देने की कोशिश करते हैं हम बेकसूर हैं। पर सही बात यही है कि हर फिल्म निर्माता आज पसे के चक्कर में इतना फसा हुआ है कि वह विष बेचता है पर अमृत के लेबल लगाकर! एक होड़-सी लगी रहती है कि कौन ज्यादा से ज्यादा नग्न नाच-गाने देता है। कौन अश्लील दृश्यों की भूल भुलैयों में दर्शकों को गुम करके उनकी जेबों से अधिक से अधिक पसे निकालता है। सरकार के बन्दिश लगाने भर से भी कोई जादू-टोना होने से रहा। हम जागें और फिल्म निर्माताओं को जगायें तभी कुछ काम चल सकेगा।

तो इसके लिए आप बम्बई चलो। नीलू मुस्कराई।

मेरे वहाँ जाने का तो प्रश्न ही नही उठता।

क्यों?

कोयला की दलाली में हाथ काले करते रहना मुझे एक आँख

नहीं भाता । बम्बई का नाना बाजार बम्बई का ही गुन हो ।

यह कहिए कि आप कायर हैं ।

यही समझ लो ।

जन-नाट्य-संघ के सम्मेलन से कुछ तो प्रेरणा लीजिए । बम्बई चलो । मैं पहले भी कई बार बता चुका हूं बम्बई में कई बम्बइयाँ हैं । सारी-की-सारी बम्बई तो मीना बाजार नहीं है ।

'जो भी हो मेरे बम्बई जाने का तो प्रश्न ही नहीं उठता ।

आप वहाँ जन-नाट्य-संघ में काम कर सकते हैं ।

कलकत्ता ही अच्छा है ।

नालू बोला 'मदर इण्डिया' फिल्म का वह गाना सुनाइए अब का !

गोविन्द ने आँखें नचाकर कहा यह हुक्म मुझे दिया जा रहा है—मुझ माना श्री एकसौ आठ गोविन्द अवतार को !

नालू कहता है तो सुना दो वह गाना ! नम्बूदिरिपाद उत्सुकता पूर्वक बोले 'गाने' उसमें कोई हानि नहीं हो ।

गोविन्द गाने लगा

नगरी-नगरी द्वारे द्वारे ढूंढूं रे साँवरिया
पिया पिया रट के मैं तो हो गई रे बावरिया ।
बेदर्दी बालम ने मोहे फूंका गम की आग में
विरह की चिनगारी रख दी दुखिया के सुहाग में
पल पल नयना रोयें छलके नैनों की गगरिया
नगरी-नगरी द्वारे द्वार
आई थी अँखियों में लेकर सपने क्या-क्या प्यार के,
जाती हूं दो आँसू लेकर आशाएँ सब हार के ।
दुनिया के मेले में लुट गई जीवन की गठरिया
नगरी-नगरी द्वारे द्वारे

दर्शन के दो भूख मना जीवन भर ना सोयेंग
बिछड़ साजन तुमरे कारन रातों को हम रोयेंग।
अब ना जान रामा कस बीतेगी उमरिया
नगरी-नगरी द्वारे-द्वारे

नीलू सुनते-सुनते झूम उठी।

यही भाव इरा के समझो शश ! मैं सच कहती हू वह भी अब तुम्हारे बिना नहीं रह सकती।

यह बात मैं मान नहीं सकता ! शश ने बड़े क्षोभ भरे स्वर म कहा इरा को मेरी जरूरत नहीं। फिल्मा म तो वह भी शायन ऐस ऐस गाने गा सकती है किसी प्ले बक गायिका की आवाज का धोखा दकर। पर जीवन म इरा वही है जिसका उसने दस वष मुझस दूर रहकर सबूत दिया। कोई बात नहीं। उसे उसकी कमभूमि शुभ हो ! कहते-कहते शश का गला भर आया।

तुम्ह बम्बई जाना चाहिए ! नम्पूतिरिप्पाड ने शश का कधा झकझोरा 'जागो सवेरा हो गया। दस वष की लम्बी रात अब समाप्त हो रही है। तुम्हारे सोते-सोते नीलू और गोबिन्दन का विवाह भी हो गया। आज जन-नाट्य-सघ के सम्मेलन का अन्तिम दिन है। दिल्ली छोडने की घड़ी सिर पर खडी है।

चौदह



अन्नपूर्णा का झुर्रियों वाला चेहरा खिल उठा। घर में बेटे और बहू को देखकर वह फूली न समाती थी।

गोविन्दन ने माँ के चरण छुए। माँ ने उसके सिर पर हाथ फेरा।

"दस-ग्यारह वर्ष बाद ही सही, बेटा घर आया, बहू भी आ गई। यह क्या कम खुशी थी? मैंने तुम्हारा विवाह अपने हाथ से किया होता तो और भी खुशी होती, पर सभी खुशियाँ किसके भाग्य में लिखी हैं, गोविन्दन!"

"पर विवाह का तो एक मुहूर्त रहता है न माँ!" गोविन्दन हँस पड़ा, "पूछ लो नीनू से। मैं खुद भी नहीं जानता था कि मुहूर्त इतना पास है। बताकर नहीं आया था मुहूर्त।"

"बहुत अच्छा हुआ बेटा! काम खत्म से मतलब है, गिनने से नहीं।"

मन्दिर बाज़ार के पास रहती थी अन्नपूर्णा पुराने घर में। समीप विद्यालय वाला मकान तो तभी तक रहा जब तक स्वामीनाथन् वहाँ के आचार्य थे।

"आज तो तुम्हारे पिता को भी होना चाहिए था!" अन्नपूर्णा की आँखें भर आईं।

"कितने अच्छे थे गुरुदेव!" नीनू ने पाप लगाए।

अन्नपूर्णा की आँखों के आँसू थमते ही नहीं थे। "सागर की तरह

नीलू बोली यहाँ कवि का व्यंग्य जरा तीखा हो गया ! और फिर हँसकर कहा ठीक है जब भी कोई लड़की विवाह के लिए हाँ करेगी ये ढोल जरूर बजेंगे।

अन्नपूर्णा बोली शंख कवि भी है यह तो यहाँ किसी को मालूम नहीं। उसने विवाह किया था तो उसे थोड़ा धैर्य रखना चाहिए था बेटा ! छोड़कर आना तो कायरता हुई। मैंने उसे सदा यही समझाया बम्बई जाकर।

नीलू ने आँखें नचाकर कहा उस भी बम्बई न चलेंगे। पहले तुम तो तैयारी करो माँ !

यमुना हँस पड़ी हम तो कोई नहीं कहता बम्बई चलो।

नीलू बोली तुम भी चलो माँ !

अन्नपूर्णा को ही जाना चाहिए। यमुना ने गम्भीर स्वर में कहा नीलू बेटी एक बात याद रखना बड़ों की छत्रछाया में ही सुख है। सास को ही माँ मानना। मेरे पास शिकायत नहीं आनी चाहिए।

तुम बम्बई चलने की तैयारी करो माँ ! गाड़ी का समय हो रहा है। गोविन्दन ने बलपूर्वक कहा मैं सदा यह सपना देखता रहा हूँ कि जब मेरा घर-घाट होगा तो माँ को भी साथ रखूँगा।

यहाँ रहने पर भी तो तुम ही सेवा करते आये हो बेटा ! भीतर से बरकला छोड़ने को जी नहीं होता। वचन दो कि बम्बई में मेरा जी न लगा तो मुझे यहाँ छोड़ जाओगे।

अब यह बात तो गलत है माँ ! अब तो तुम्हें बम्बई में ही रहना होगा हमारे पास ! गोविन्दन ने बलपूर्वक कहा 'बम्बई और बरकला के बीच चक्कर काटता रह जाऊँ यह तो नहीं होगा !

सही बात तो यही है माँ कि अब तुम हमारे पास ही रहोगी ! नीलू मुस्कराई।

शाबाश नीलू ! यमुना ने गर्व-सा अनुभव करते हुए कहा चलो उठो बहन ! सामान बाँधो ! शंख और नीलू के पिताजी सीधे स्टेशन

पहुँचने की बात कह रहे थे।"

वे स्टेशन पहुँचे तो गाड़ी आने में अधिक समय नहीं था।

नम्पूतिरिप्पाड बोले मैं अब भी कहता हूँ शम्बू! तुम इनके साथ चले जाओ।

शम्बू इन्कार में सिर हिलाता रहा।

गाड़ी आई। नालू अन्नपूर्णा और गोविन्दन डिब्बे में जा बैठे। खिड़की से सिर निकालकर नीमू बोला मान भी जाओ, शम्बू! चलो हमारे साथ! इरा तुम्हारी है जया तुम्हारी है बम्बई तुम्हारी है।

इंजन ने सीटी बजाई। शम्बू टस-से-मस न हुआ।

गाड़ी चली गई।

नम्पूतिरिप्पाड बोले शम्बू तुम अब कलकत्ता में नहीं रह सकते। तुम्हें जाना ही होगा बम्बई। समय की यही पुकार है। तुम कब तक अनसुना करते रहोगे?



पन्द्रह

"इरा तुम एक बार वरकना जरूर जाओ !" नीलू ने यत्नपूर्वक कहा "नारी झुक जाती है इसलिए कहती हूँ तुम झुक जाओ। मैं देख आई शख बहुत उदास है। वह झुकना नहीं चाहता। तुम जाओ एक बार और उसे लवी आओ!"

नीलू की यह सीख इरा को अच्छी लगी भले ही ऊपर से उसने यही कहा 'देखा जायगा।'

गोविन्दन ने दावत दी थी। उर्वशी और जयन्त प्रसन्न थे। मनोज और मुक्तिबोध अलग गोविन्दन को छेड़ रहे थे। राज राव अनुपम से गोविन्दन ने कहा "अब यह बताओ कि तुम्हारा घर घाट कब बसेगा? जहाँ शादी की बात चली थी वहाँ मामला ढीला मालूम होता है क्या?"

इरा नीलू के पास वाली कुर्सी पर बैठी थी। वह आत्म-सन्ताप की मूर्ति-सी प्रतीत हो रही थी यही बात उसे इस दावत में दूसरों से अलग दरसा रही थी।

गोविन्दन खूब चहक रहा था। "श्री एक सौ आठ गोविन्दन अवतार को दूल्हे के रूप में देखकर मैं आज फूली नहीं समाती!" इरा ने सुख की साँस लेकर कहा "मैं नीलू से कहूँगी कि वह गोविन्दन को कसकर रखे।"

मुक्तिबोध ने हँसकर कहा "तब तो गोविन्दम भी वरकला चला

जायगा गाछ की तरह !

उदयी ग्रौर जयन्त ने तालो बजाई।

मनाज बोला यह वा कभी भी लौट सकता है। क्या ग्रपन उसी को बुलाकर छाडेगा।

हरा मुस्कराई।

मैन ग्रन को कभी गुलाम बनाना नहा चाहा था ग्रौर न मैंने गुलाम बनना ही कभी स्वीकार किया।

उदयी बोली गुलाम बनने का तो ग्राज की नारी के सामने सवाल ही नहीं उठता। क्या नालू ?

नीलू कुछ-कुछ लजा-सी गई जो सबको उचित ही प्रतीत हुग्रा।

दावत का प्रबंध ताजमहल होटल म किया गया था जिसकी खिड़किया स सागर साफ दिखाई देता था।

हरा ने कहा नीलू, शायद मैंने बन्नमोजी की, जो सारी दुनिया म घूम आई लकिन ग्रन की बात नहा पूछी।

तुमने उस चिट्ठियाँ तो लिखीं ! नीलू ने मानो हरा का पग लते हुए कहा मुझे गाछ ने सब बता दिया। उसने किसी चिट्ठी का उत्तर नहीं दिया। बन्नमोजी तो उसने की यह बात मैंने उससे साफ कह दी थी।

खर इसकी तो कोई बात नहीं कि गाछ ने चिट्ठी का जवाब नहीं दिया। वस वह क्या कह रहा था ?

कहना तो कुछ नहीं। बस बम्बई ग्रान का राजी नहा हुग्रा। शायद वह इसी बात पर ग्रड़ा हुग्रा है कि जन्मभूमि ही ग्रात्मा के लिए सबसे बड़ा दरशन है। बस उसके पास तुम्हारा एक मधुर स्मृतियाँ हैं।'

स्मृतियों म क्या होता है ? पर यह इन्सान का पुराना आदत है। वह आदमी न काम नहा आ पाता तो स्मृतियों म उलझकर ही रस लेने की कोशिश करता है।

धाय प्रतिथि ग्रपना ग्रपना प्रसग स बठे थ ।

होटर का ग्रारकेस्ट्रा स्वागत-सगीत बजाए जा रहा था ।

दावत म ग्रनेक तरह क भोजन पश किय गए ।

भोजन क बाद ग्रतिथि कोको पी रह थ ग्रौर ग्रांखों-ही-ग्रांखा म यह दिखायन कर रहे थ कि ग्राजादी के बाद बम्बई का सरकार ने 'ड्राई' बनाकर रख दिया ।

इरा बार-बार दोना गया स ग्रपना जूडा ठीक करन लगती थी ।

स्वागत-सगीत ऊँचा होता गया ।

इरा बोली एक बात है नीलू ! मुझ पता होता कि ग्रख दिल्ली ग्रा रहा है ता मैं भी तुम्हारे साथ जरूर गई होती । वहाँ मैंने तुम्हें दुल्हिन बनत भी दखा होता । ग्रब ता मैं ग्रख की याद को ताश क पत्तो की तरह फेंटकर ही खुश हो लेती हू । जया की ग्रजीब बात है । उसन ग्रख को दखा नही । उसकी बातें मुझसे भी ज्यादा वही लगती है । उसकी ग्रादतें भी बिलकुल ग्रख पर गई हैं । भोजन म जो जो चीजें ग्रख का पसन्द हैं वही तो जया का भी ग्रच्छी लगती हैं । यह सब कसे सम्भव हुग्रा ? प्रकृति के बलिहारी जाय !

तुम जरूर एक बार बरलना हो ग्राग्रो इरा ! जया का भी साथ ले जाना !

ग्रभी तो सोचा नही ।

मरी बात मानो ।

पूछ दखूगी मन से ! क्या उसके सामन जाकर गिड़गिड़ाना होगा ?

इसकी ता जरूरत नही होगी । जाना ही काफी होगा ।

ग्रौर ग्रगर जया को यहा छोड जाऊँ ?

जया को साथ रखना ।

ग्रारकेस्ट्रा का स्वागत-सगीत भी जस यही कह रहा हो—जया को साथ रखना !

अतिथि अपनी अपनी बातों में खो गए। मुड़-मुड़कर उनकी दृष्टि नीलू पर जम जाती। नीलू दुलहिन थी। हर किसी को अपने विवाह की याद आ रही थी यह भाव उनकी मुख-मुद्रा पर अंकित था। मन पीछे छूट गया स्मृतियों के खेवा घाट पर ! ऐसा ही उत्सव हुआ था तब भी ऐसी ही दावत दी गई थी ऐसा ही स्वागत-संगीत बजा था।

राज राज अनुपम ने तब मित्रों को सम्बोधित करते हुए मानो किसी गीत का बोल गुनगुना दिया

चाँदी के वरक सम
सोने के वरक सम
आये दिन बहार के
रंग गुलनार के

उधर बोला, गीत में नीलू का नाम आना होगा।

राज राज अनुपम आशु कवि के अन्दाज में गुनगुनाने लगा

बदलते रहे हैं बदलते रहेंगे,
ये मौसम-से नीलू के रंगीन सपने
शादी की दावत का किस्सा है प्यारा।
करो याद प्यारो ब्याह अपने अपने।

मुक्तिबोध बोला अब गीत के एक बोल में हमारी इरा जी की थोड़ी तारीफ हो जानी चाहिए, कवि जी !

और अनुपम ने झट यह बोल गुनगुनाया

पुकारो गगन को इक उम्र हाथ आई है
इरा के कंठ में यह गीत आज लहराए !

मनोज भी चुप न रह सका उमाजी की तारीफ में भी होना चाहिए एक बोल !

अनुपम ने मित्र चेहरे से उमाजी की तरफ देखा। सब खिलखिलाकर हँस पड़े। अनुपम सुनकर भी उमा

सलाम लिखता है शायर तुम्हारी जुल्फ के नाम !
बनी रुबाई बनी गजल जबकि ठुमरी न
तुम्हारे प्यार के पोखर में पा लिया सुख धाम
तुम्हारे हाथ में है बागडोर फिल्मों की
हमारा गीत तुम्हारे हुस्न का है जाम
सलाम लिखता है शायर तुम्हारी जुल्फ के नाम !

होटल का आरकेस्ट्रा अब दूसरी ही धुन बजा रहा था। सभी अतिथियों ने रुबयी की ध्यान से देखा जिस पर अनुपम के गीत ने जादू-सा कर दिया था।

होटल से बाहर आकर नीमू ने फिर से इरा को अपनी बात याद दिलाई इरा तुम एक बार वरकला जरूर जाओ।



सोलह

'शाम न मिलने जा रहा हो इरा! आखिर तुम्हें ही झुकना पड़ा।'

'नारी को ही झुकना पड़ता है।'

'मैं नहीं झुका, जया झुकी है। उसको जया को उनके पास ले जा रहा हूँ। यों तो वे साथ भी जायेंगी, दो दिन उनके पास छोड़ आऊँगा।'

आज सवेरे-सवेरे नानी की कहानी सुन रही थी जया—

एक था राजा। उसकी थीं सात रानियाँ। पर एक भी रानी के सन्तान नहीं थी। एक दिन राजमहल में एक ऋषि आ निकला। सबसे छोटी रानी ने आँखों में आँसू भरकर ऋषि की ओर देखा और कहा, 'महाराज! सन्तान प्राप्ति का कोई उपाय बताइए!' ऋषि ने रानी को एक सेब दिया। रानी ने वह सेब ताक में रख दिया यह सोचकर कि वह स्नान करके ही इसे खायेगी। पर जब वह स्नान करके वापस आई, तो सेब ताक से गायब था।

इरा ने भी सुना था यह कहानी बचपन में। माँ ने इन्हीं दिनों में सुनाई थी यह कहानी। आज सवेरे-सवेरे जब फिर यही रिकार्ड लगा दिया गया था। कहानी की समस्या यही थी कि वह सेब कौन ले गया। पर अब कुछ क्षणों के लिए उस समस्या से छुटकारा पाकर इरा ने दोबारा कहा, 'मैं नहीं झुका, जया झुकी है।'

माँ कुछ न बोली।

जया सो गई थी।

माँ खिड़की में खड़ी नरीमान पाइंट की तरफ़ देख रही थी। सागर का दृश्य माँ को प्रिय था। जुहू वाली बात यहाँ कहाँ?

'दादा इसी बात को या कहता—वरकला वाली बात यहाँ कहाँ?

उसका उलाहना तो उसी को देना। तुम वरकला जा ही रही हो।

सीधी वरकला नहीं जाऊँगी माँ! पहले एलोरा और अजन्ता फिर मद्रास, महाबलीपुरम्, तंजौर, त्रिची और मदुरा। फिर कन्या कुमारी और वहाँ से लौटकर वरकला।

कोई जगह रह न जाय। कितने दिन के लिए जा रही हो?

अब जितने दिन भी लग जायें। एक बात बताओ माँ! रानी का वह सब कौन न गया था? यह कहानी तो तुमने मुझे भी सुनाई थी बचपन में, पर भूल गई।

तो दादा से पूछ लेना। उसको माँ ने भी तो सुनाई होगी उसे यह कहानी।

इरा का ध्यान गोविन्दन की तरफ़ चला गया। कल जब मनोज मिलने आया तो ऊपर से गोविन्दन भी आ निकला। मनोज ने हँसकर कहा था, कबरें में यूरोपीय ट्यून पर यूरोपीय नाच की छाप दिखाते वक्त क्या आप नाच-नाच रे मयूरा! वाला गीत देना चाहेंगे? और गोविन्दन ने झट उत्तर दिया था, बिलकुल नहीं मनोज साहब! ठीक कहा था गोविन्दन ने! फ़िल्म के विषय पर ही निर्भर रहेगी फ़िल्म की भाषा और नाच-गीत की धुन। इरा ने माँ की तरफ़ देखकर कहा, कौन से गया था वह सेव?

माँ कुछ न बोली। वह इरा को जाने से रोक तो न सकती थी पर वह अपने भावों को छिपाकर रखने की भी अभ्यस्त न थी।

इरा ने माँ को यह भी नहीं बताया था कि वह हाल ही में दादा को दो चिट्ठियाँ लिख चुकी है। यह बात तो उसने चाकर से भी छिपा कर रखी थी।

"ाकर न बाहर जाते-जात पुराना व्यम्ग पुस्त कर दिया क्या दीरा तुम मकलो भाई हो ? जोजाजो नही माय ?

ाकर हुमत-हूमत नोच उतर गया। नटखट पहली बात भूलता ही नहा—दस वप पहल की बात। उस समय ता जया का कहा पता न था। इरा का लगा कि जो सेब उस मिला था ऋषि स उस उसन फौरन खा लिया था। लाक-कथा की रानी का तरह उसन सब का ताक म रखने का रिस्क' नहीं लिया था। उसन सब सब खाकर ही स्नान किया था।

इरा दृढ-सकल्प थी। आज रात की गाड़ी स वह जा रही थी। "सलिए भारत की यात्रा करक वह मालूम करना चाहता था कि वह चट्टान किस तरह की है जिसस "ास को घडा गया। वह "ास का "े पत्र लिख चुकी था। पहला पत्र लिखने क दूसरे ही "िन उसन दूसरा पत्र लिख "िया था। विचार ता आया था "ास क्या सोचगा ? दस साल तक चुप रही। लिखन पर आइ, ता उत्तर की प्रतीक्षा किय बिना हर राज ही पत्र लिखन लगी।

माँ खिडकी स सागर की तरफ देख रही थी। वह उदास थी। इरा न सोचा इतनी उदास ता माँ तब ना नहा हुई थी जब मैं पाँच वप पूव अमराका एशिया और यूराप का सर पर निकली था जया का साथ लकर। इतनी उदास ता माँ तब भी न हुई थी जब मैं पिछल "िनो लन्दन गई किम्म अयागान म जया का साथ "कर। माँ को मालूम हाना चाहिए कि मैंन अपन सब का रिस्क' नहीं लिया था मैंन ता ऋषि स मिला हुआ सब नहान न पहल ही खा लिया था।

'टप रिकाडर साथ रहगा ना ?

"किस-किसकी आवाज रिकाड कराया ?

जिसकी भा आवाज पसन्द आ गइ।

उधर की भाषा तू साफ समझता ? जितना मतलाब स माया था सब ता भूल गई।

इरा ने कुछ उत्तर न दिया। उसने सोचा कहानी का अन्त तो अभी दूर है। कहानी में सस्पेंस की ही तो सारी बात है।

सबसे छोटी रानी का वह सेब किसने चुरा लिया था माँ!

माँ ने जैसे सुना ही नहीं। चुप गहरी सागर की ओर तकती रही।

एक चट्टान वहाँ भी है माँ जिसमें एलिफेण्टा की त्रिमूर्ति घड़ी गई। इरा कहती चली गई, एलोरा में तो सुना है पूरा मन्दिर ही पहाड़ को छील छीलकर बनाया गया। कलाश यही उस मन्दिर का प्यारा-सा नाम है। मनोज अकेला ही उसे देख आया। वह तो अजन्ता भी देख आया। अजन्ता की नक्की का ठप्पा तो आज की फ़ैशनेबल औरत की साड़ी के बॉर्डर पर भी नजर आ जाता है। होंठों पर लिपस्टिक साड़ी पर अजन्ता की नक़्क़ाशी। मनोज मेरा मजाक उड़ाता है। कहता था मनोज—अजन्ता गये बिना अजन्ता को समझा ही नहीं जा सकता। वहाँ की गुफाएं कैसे बनाई गई पहाड़ को भीतर से काट छीलकर! कैसे उन गुफाओं की छतें बनाई गई! वैसी ही छतें जैसी आजकल बिल्डिंगों में सीमेंट-कंकरीट की समस्त चौकोर छतें होती हैं। एक गुफा वहाँ अधूरी ही पड़ी है मनोज कह रहा था। उस अधूरी गुफा से पता चलता है कैसे छीलते-काटते थे ये गुफाएँ। ऊपर से काट-काटकर नीचे को आते थे।

माँ कुछ न बोली।

तुम सुन नहीं रही माँ! मैं एशिया देख आई यूरोप देख आई अमरीका देख आई। रूस भी हो आई। अपना ही देश नहीं देखा। दक्षिण भारत नहीं देखा जहाँ मनोज के कथनानुसार हमारी संस्कृति की आत्मा बसती है। मैं दक्षिण भारत की यात्रा पर जरूर जाऊँगी। जया को भी दिखा लाऊँगी कन्याकुमारी की आखिरी चट्टान

कहते-कहते इरा रुक गई। सातवीं चट्टान के मछुवे से बम्बई की एक्ट्रेस ने ब्याह किया। ऋषि का सब जो गाया एक्ट्रेस ने। सब खान का प्रसाद ही तो है हमारी जया। वाह वाह! जया को मालूम

ही नहा कि मयी न नव माया था ! वह हमता चली गइ । हँस हँस कर लाल्रा हा गइ ।

तुम पा ल हा जाओगा रा ! मैं कहता हूँ आज ता तुम हरगिज नहा जा सकता । नीरू और गाबिन्द पूना ग हैं । कल व सिंहगढ का किला दखकर आवेंगे । व आ जाय ता उनस सलाह कर लना । साथ जाय ता तुम्ह आराम रहगा । माँ की मुख-मुद्रा बहत गम्भीर थी

मैं तो आज ही जाऊँगी । अब मैं रुक नहा सकती ।

माँ तानपूरा लकर बठ गई और गान लगी

मोरे मन्दिर अब लौं नहीं आय ।

यह थी जयजयवन्ती इरा क डडी की प्रिय रागिनी । इसक गाने का समय ता न । था सब-स्वर ! हर रागिनी का अपना समय था। जयजयवन्ती का भी अपना समय था । आज माँ बिना यह साच ही गाने बठ गइ ।

माँ को जब स्वय भी रग आ रहा था । आज उसकी लगा चरम सीमा को छू रही थी । कितनी टिकी हुई है तुम्हारी आवाज माँ !' इरा बाला तुम आज भी कितना अच्छा गा सकती हा !

माँ गाता रहा । इस रागिनी म जब वह अतीत को निहार रही थी । पर यही अतीत रागिनी इरा क लिए वतमान क ताम्रवण आकाश पर कोई सिन्दूर की रेखा खाच रहा थी जब नारी माँग म सिन्दूर भरती है ।

इरा बठा सुनती रही । धीरे धीरे जया न आँखें खाला । इरा ने प्यार स जया का गाल म सरर कहा आज रात को गाडा स हम चलग ।

डडी क पास ! जया का मुरझाया सिर उठा ।

नानी का भी स चलेंगे चलकर का भी । जया चुप न रह सकी नहा इन अकल हा चलो । इरा मुस्कराइ, जया अपन डडी म मिलगा ।

"नारी को ही झुकना पड़ता है !' माँ कहती चली गई अपने मन्दिर में बैठकर वह जयजयवन्ती गाती है। जब मन्दिर का स्वामी लौट आता है तब भी कहानी खत्म थोड़े ही हो जाती है। सेब की तलाश तो रहती ही है। मुश्किल से तो ऋषि से सेब मिलता है पर ताक में से सेब चोरी चला जाता है। याद है न जया !

एक था राजा। उसकी थीं सात रानियाँ जया ने नानी से सुनी हुई कहानी शुरू कर दी।



सत्रह

त्रिवेन्द्रम पीछे छूट गया था। गाड़ी पश्चिमी घाट के साथ-साथ ऊपर जा रही थी।

बम्बई से चलकर इरा सीधी अजन्ता और एलोरा गई, फिर मद्रास पहुँची। फिर उसने कुम्भकोणम्, त्रिची, मदुरा, रामेश्वरम् और कन्या कुमारी के मन्दिर देखे। मद्रास में उसने एक सप्ताह बिताया था, जहाँ वह सागर के किनारे घूमने के लिए हर रोज त्रिप्लीकेन जाया करती थी। मद्रास का सुविस्तृत सागर-तट जया को कितना पसन्द आया था! बम्बई में जुहू सागर-तट के साथ-साथ नये ज़माने के डिज़ाइनों वाली ये भव्य इमारतें कहाँ हैं? बम्बई में मरीन ड्राइव पर ऊँची इमारतें तो थीं पर यहाँ तो पालनून्त सागर का दृश्य ही नज़र आता था। बम्बई में इण्डिया गेट के समीप भी सागर-तट ऊँची इमारतों से घिरा हुआ था पर वहाँ भी सागर मद्रास के त्रिप्लीकेन की तरह तो क्या बम्बई के जुहू की तरह भी विशाल नहीं था।

"सच-सच कहना, जया! तुम्हें मरीन ड्राइव अच्छा लगता है या जुहू? मद्रास का त्रिप्लीकेन या कन्याकुमारी?" इरा ने जया की ठोड़ी उठाकर पूछा।

उत्तर में जया केवल मुस्करा दी।

"अब तुम मरकला का सागर-तट देखोगी।" इरा ने मानो आस्था की बात समझाई।

इरा को डिनै में बैठे-बैठे याद आया, मद्रास से वह महाबलीपुरम् भी गई थी। वहाँ के प्रकाश स्तम्भ पर चढ़कर उसने जया को पूर्वी घाट के साथ-साथ दूर तक फैले हुए पूर्वी सागर का दृश्य दिखाया था। जया तो वहाँ से हिलना ही नहीं चाहती थी।

लगता था इस दृश्यपट के साथ जया का मन युग युग से जुड़ा हुआ है। यह कैसी आस्था थी? इरा सोच रही थी यह वही आस्था है जिसने अजन्ता और एलोरा की कला को जन्म दिया। अजन्ता की एक गुफा में अवलोकितेश्वर बोधिसत्व का चित्र देखा था—हाथ में कमल का फूल मुख पर अपार शान्ति। एक गुफा में भगवान् बुद्ध की विशाल मूर्ति देखी थी जिस पर कई कोणों से प्रकाश डाल डालकर म्यूज़ियम के गाइड ने दिखाया था कि एक ही मूर्ति पर कैसे मुखमुद्रा बदल जाती है कैसे मुख के भाव अलग अलग नज़र आते हैं। एलोरा में कला का कलामय रूप। पहाड़ को काट काटकर पूरे मन्दिर की सृष्टि। यह किसकी देन थी? इस पर भी आस्था की छाप थी। महाबलीपुरम् में चट्टानों को तराश-तराशकर बनाये गए, पञ्च पाण्डव रथ। कुम्भकोणम् त्रिची और मदुरा के मन्दिर ये भी तो किसी सत्य के प्रतीक थे। क्या आस्था की कोख से जन्मा स्वीकारात्मक ही महामहिम कला की जननी हो सकती है? इरा ने जया की ठोडी उठाकर उसे चूम लिया और प्यार से कहा, भूख तो नहीं लगी जया?

नहीं ममी।

इरा को याद थी एक दिव्य-मुख मनीषी की बात जिसने कन्या कुमारी के बलुए टीलों पर सूर्यास्त दर्शन की प्रतीक्षा में बैठी मित्र मण्डली को सम्बोधित करते हुए कहा था स्वाधीनता के बाद हमारी राष्ट्रीय एकता की भावना बहुत पतली हो गई। आज कोई गांधी दीखता है न रवीन्द्रनाथ ठाकुर। उस मनीषी ने एकाग्र भाव से बोलते हुए यह बात स्पष्ट की कि हम नई पीढ़ी के लोगों को धार्मिक पृष्ठभूमि से रहित करके अनास्था की खाई को जन्म दे रहे हैं। अनास्था की

यह याद एक विशाल शून्यता की प्रतीक बनकर रहेगा।

उमा एकाग्र भाव से खिड़की के बाहर का दृश्य देख रही थी। जहाँ दृश्य बहुत ही मनोरम लगता वह दोनों हाथों से तालियाँ बजाकर हर्षो द्रेक का परिचय देने लगती। साथ-साथ वह कभी चलता दृश्य देखा करती।

इरा को याद आ रहा था कि कन्याकुमारी के बहुए टीले पर बड़ बड़े मनीषी ने कहा था ठीक वैसे ही जैसे हम अपने मन प्राणों के विचार अपनी मातृभाषा में व्यक्त करते हैं हमारे बच्चों को अपने ही धर्म के माध्यम से बाल्यावस्था में ही आध्यात्मिक पृष्ठभूमि प्राप्त कर लेना चाहिए। फिर इरा को ध्यान आया उस मनीषी ने मानो अपने उस महान् विचार को स्वयं ही पतला करके कहा था 'मेरा मतलब है अपने ही धर्म के माध्यम से बाल्यावस्था में ही बालक आध्यात्मिक नहीं तो कम-से-कम नैतिक पृष्ठभूमि तो अवश्य प्राप्त कर सके। हमारी शिक्षा में यह व्यवस्था होनी चाहिए। हमारा देश अब स्वतन्त्र है। अब तो बल्कि इस ओर हमारा ध्यान अवश्य जाना चाहिए। आगे चलकर उस मनीषी ने कहा था एक शिक्षाशास्त्री के नाते मेरा संकेत उस धर्म की ओर नहीं जो संकीर्णतापूर्ण मनोवृत्ति उत्पन्न करता है; मेरा आग्रह तो उस धर्म के लिए है जो व्यापक सहिष्णुता का प्रतीक हो। क्या हम चरित्रवान् और दृढ़-संकल्प नागरिकों की जरूरत नहीं रही? श्रद्धा और आस्था को खोकर हम जाने कहाँ-कहाँ भटक रहे हैं।

खिड़की से बाहर रूप रंग-गन्धमय संसार के दृश्यपट पर उमा की आँखें बराबर जमी हुई थीं। कितनी भाग्यवान बच्ची है यह सोचकर इरा मुग्धमन उसकी ओर देखती रही।

उमा से हटकर इरा की दृष्टि समाचारपत्र पर जम गई। एक प्रसंग उसकी दृष्टि में घुमकर रह गया। हिन्दी काव्य के सनातन के आरम्भ का उल्लेख करते हुए किसी ने लिखा था

हिन्दी काव्य के प्रधान में नूह के जलप्लावन जिसका वर्णन

इरा को डिब्बे में बैठे-बैठे याद आया मद्रास से वह महाबलीपुरम् भी गई थी। वहाँ के प्रकाश स्तम्भ पर चढ़कर उसने जया को पूर्वी घाट के साथ-साथ दूर तक फैले हुए पूर्वी सागर का हृदय दिखाया था। जया तो वहाँ से हिलना ही नहीं चाहती थी।

लगता था इस हृदयपट के साथ जया का मन युग-युग से जुड़ा हुआ है। यह कैसी आस्था थी? इरा सोच रही थी यह वही आस्था है जिसने अजन्ता और एलोरा की कला को जन्म दिया। अजन्ता की एक गुफा में अवलोकितेश्वर बोधिसत्व का चित्र देखा था—हाथ में कमल का फूल, मुख पर अपार शान्ति। एक गुफा में भगवान् बुद्ध की विशाल मूर्ति देखी थी जिस पर कई कोणों से प्रकाश डाल-डालकर म्यूजियम के गाइड ने दिखाया था कि एक ही मूर्ति पर कैसे मुखमुद्रा बदल जाती है, कैसे मुख के भाव अलग-अलग नजर आते हैं। एलोरा में कलाकार का कल्पनामय रूप। पहाड़ को काट-काटकर पूरे मन्दिर की सृष्टि। यह किसकी देन था? इस पर भी आस्था की छाप थी। महाबलीपुरम् में चट्टानों को तराश-तराशकर बनाए गए पञ्च पाण्डव रथ। कुम्भकोणम्, त्रिची और मदुरा के मन्दिर, ये भी तो किसी सत्य के प्रतीक थे। क्या आस्था की कोख में जन्मी स्वीकारात्मकता ही महामहिम कला की जननी हो सकती है? इरा ने जया की ठोढ़ी उठाकर उसे चूम लिया और प्यार से कहा, भूख तो नहीं लगी, जया?

नहीं ममी!

इरा को याद थी एक दिव्य-मुख मनीषी की बात, जिसने कन्याकुमारी के बालुका टीलों पर सूर्यास्त देखने को प्रतीक्षा में बैठी मित्र मण्डली को सम्बोधित करते हुए कहा था, स्वाधीनता के बाद हमारी राष्ट्रीय एकता की भावना बहुत पतली हो गई। आज कोई गांधी दीखता है न रवीन्द्रनाथ ठाकुर। उस मनीषी ने एकाग्र भाव से बोलते हुए यह बात स्पष्ट की कि हम नई पीढ़ी के लोगों को धार्मिक पृष्ठभूमि से रहित करके अनास्था की खाई को जन्म दे रहे हैं। अनास्था की

यह माई एवं विश्वास भूयता की प्रतीक बनकर रहेगी।

जया एकाग्र भाव से खिड़की के बाहर का दृश्य देख रही थी। जहाँ दृश्य बहुत ही प्यारा लगता वह दोनों हाथों से तालियाँ बजाकर हर्षो द्रेक का परिचय देने लगती। साथ साथ वह कहती चलती दखो ममी, दखो !

इरा को याद आ रहा था कि कन्याकुमारी के बसुए टील पर बठ उस मनीषी न कहा था ठीक वसे ही जस हम अपने मन प्राण के विचार अपनी मातृभाषा म व्यक्त करत हैं हमारे बच्चों को अपने ही धम क माध्यम से अल्पावस्था म ही आध्यात्मिक पृष्ठभूमि प्राप्त कर लेनी चाहिए। फिर इरा को ध्यान आया उस मनीषी न मानो अपन उस महान् विचार को स्वय ही पतला करके कहा था 'मेरा मतलब है अपने ही धम के माध्यम से अल्पावस्था म ही बालक आध्यात्मिक नही तो कम से-कम नतिक पृष्ठभूमि तो अवश्य प्राप्त कर सक हमारी शिक्षा म यह व्यवस्था होना चाहिए। हमारा देश अब स्वतन्त्र है। अब तो बल्कि इस ओर हमारा ध्यान अवश्य जाना चाहिए। आग चलकर उस मनीषी ने कहा था एक शिक्षाशास्त्री के नाते मेरा सकत उस धम की ओर नहीं, जो सकीर्णतापूर्ण धर्मान्धता उत्पन्न करता है, मेरा आग्रह तो उस धम क लिए है जो व्यापक सहिष्णुता का प्रतीक हो। क्या हम चरित्रवान् और दृढ़-सकल्प लोगों की जरूरत नहीं रही? श्रद्धा और आस्था को खोकर हम जाने कहाँ-कहाँ भटक रहे हैं।'

खिड़की से बाहर रूप रस-गन्धमय ससार के दृश्यपट पर जया की आँखें बराबर जमी हुई थीं। कितनी आस्थावान बच्ची है यह सोचकर इरा मुग्धनयन उसकी ओर देखती रही।

जया से हटकर इरा की दृष्टि समाचारपत्र पर जम गई। एक प्रसग उसकी दृष्टि म घुलकर रह गया। हिन्दू काग्रस के सभापति क भाषण का उल्लेख करते हुए किसी ने लिखा था

हिन्दू काग्रस क प्रधान ने मूह क कायाकल्प विज्ञान सम्मत

हिब्रू और सुमेरियन पौराणिक गाथाओं तथा ब्राह्मणों द्वारा वर्णित मनु के जलप्लावन में आया है का मनोरंजक विवरण पढ़ा किया। वह बाढ़ जिससे भगवान् ने मत्स्य रूप धारण कर हम सबको बचाया, मानव-जाति की बहुमूल्य स्मृतियों में से एक है। मैं इस सवाल में दिलचस्पी नहीं रखता कि ऐसा हुआ या नहीं और यदि हुआ तो किस प्रकार? परन्तु मैं तो मनु के स्थान पर होना पसन्द करता जहाँ मेरे अतिरिक्त और सभी डूब जाते और मत्स्यावतार मेरी नौका उस जल प्रलय से पार पहुँचा देते। फिर वह पवित्र मत्स्य रुकती मैं नौका से उतरता और चारों ओर जल ही-जल होता पर फिर पानी घटता भूमि दिखाई देती और चिड़ियाँ उड़ने लगतीं पर मेरे सिवा वहाँ और कोई न होता। फिर मेरी यन्त्रणा और वेदना बढ़ जाती।

कुछ हो नूह तो मनु की अपेक्षा सुखी थे। उन्होंने अपनी नाव में ही जीवधारियों के नर और मादाओं को जोड़ रखा था इस तरह उनके पास न केवल उनकी पत्नी बल्कि बातचीत करने के लिए साथी भी थे पशुओं को खा जाने वाले सिंह मछलियों को खाने वाले मगर। पर मनु तो अकेले थे। उन्हें पत्नी कैसे मिली यह मैं नहीं समझ सकता। पत्नी पाने तक तो उन्होंने दुख का ही अनुभव किया होगा।

समाचार पत्र बन्द करके इरा अपने जीवन पर विचार करने लगी। पर नूह और मनु के जलप्लावन की कथा अब जैसे ध्यान से ओझल ही न हो सकती हो। मनु तो अकेले थे उन्हें पत्नी कैसे मिली? वैसे ही जैसे दास को इरा मिली! पर दास के जीवन में दोबारा जल-प्लावन आया जब वह मुझे मेरे हाल पर छोड़कर भाग गया। दस वर्ष पहले की वह घटना इरा की आँखों में तैर गई।

जया थैले से निकालकर बिस्कुट खा रही थी। तुम खाओगी मम्मी? उसने पूछ लिया। पर इरा ने इन्कार में सिर हिलाकर कहा, 'खाओ मेरी बच्ची!

इरा को लगा कि नाना की बात उस समय न मानकर उसने भूल की थी। नाना उसे छोड़कर चला आया क्योंकि उसका कर्तव्य उसे बुला रहा था। बम्बई उसे पसन्द न थी। उसका कहना था कि बम्बई में कला का दूध-गाछ नहीं पनप सकता। मैंने लाख समझाया, उसने एक न सुनी। वह हमें छोड़कर चल दिया।

किसी ने कहा, पाँच स्टेशन छोड़कर है बरकना।

'ठीक है!' इरा ने मन-ही-मन कहा, 'बरकना तो आज पहुँच कर रहूँगा।'

इरा की कल्पना में अपना गाँव घूम गया—रेणुका। आगरा से मथुरा की ओर बारह मील, दाहिनी ओर मुड़ जाओ, यमुना के किनारे। वाह-वाह पुराने सुन्दर वृक्ष, टूटे-फूटे घाट, एक मन्दिर, एक टीला। सात पीढ़ियों से उनका परिवार रेणुका को अपने हाल पर छोड़कर बम्बई चला आया था। बचपन में एक बार माँ उसे रेणुका दिखाने ले गई थी, जैसे अब मैं जया को बरकना दिखाने ले जा रहा हूँ।

'हम तुम्हारे नाना को साथ ले चलेंगे बम्बई, जया!' उसने मानो अपने विचार को ओढ़ता देते हुए कहा, 'फिर हम रेणुका चलेंगे।'

रेणुका की कथा तो वह जया को पहले भी कई बार सुना चुकी था। आज उसका सुनाना और भी आवश्यक हो गया।

रेणुका में ही था कभी जमदग्नि ऋषि का आश्रम। ऋषि के साथ रहती थी ऋषि-पत्नी रेणुका। रेणुका भी दूध-गाछ थी, जया सुन रही हो न?

उसने बिस्कुट खाते हुए सिर हिला दिया। उसका ध्यान बाहर की तरफ था।

हाँ तो भगवान् परशुराम उसी दूध-गाछ का दूध पीकर बड़े हुए थे। कंधे पर फरसा रखकर परशुराम दुष्ट राजाओं की जीवन-लीला समाप्त करने निकले थे। रेणुका से एक ही मील पर है वह जगह, जहाँ परशुराम ने सहस्रार्जुन को मार डाला था।

हिब्रू और सुमेरियन पौराणिक गाथाओं तथा ब्राह्मणों द्वारा वर्णित मनु के जलप्लावन म आया है का मनोरंजक विवरण पेश किया। वह बाढ़ जिससे भगवान् न मत्स्य रूप धारण कर हम सबको बचाया मानव-जाति की बहुमूल्य स्मृतियों में से एक है। मैं इस सवाल म दिल चस्पी नहा रखता कि एसा हुआ या नहीं और यदि हुआ तो किस प्रकार? परन्तु मैं तो मनु के स्थान पर होना पसन्द करता जहां मेरे अतिरिक्त और सभी डूब जात और मतस्यावतार मेरी नौका उस जल प्रलय स पार पहुँचा दत। फिर वह पवित्र मत्स्य रुकती मैं नौका से उतरता और चारो ओर जल-ही-जल होता पर फिर पानी घटता भूमि दिखाई देती और चिड़ियाँ उड़न लगती पर मर सिवा वहाँ और कोई न होता। फिर मेरी यन्त्रणा और वेदना बढ़ जाती।

कुछ हो नूह तो मनु की अपेक्षा सुखी थ। उन्होंने अपनी नाव में ही जीवधारियों क नर और मादाओं को जोड़ रखा था इस तरह उनक पास न केवल उनकी पत्नी बल्कि बातचीत करने के लिए साथी भी थ पशुओं को खा जाने वाल सिंह मछलियों को खान वाल मगर। पर मनु तो अकल थे। उन्ह पत्नी कस मिली यह मैं नही समझ सकता। पत्नी पान तक तो उन्होंने दुःख का ही अनुभव किया होगा।

समाचार पत्र बन्द करके इरा अपने जीवन पर विचार करन लगी। पर नूह और मनु के जलप्लावन की कथा अब उसे ध्यान स ओझल ही न हो सकती था। "मनु तो अकल थे उन्ह पत्नी कसे मिली? वसे ही जसे ग्रस को रूरा मिली!" "पर ग्रस क जीवन म दोबारा जल प्लावन आया जब वह मुझे मेरे हाल पर छोड़कर भाग गया।" दस वष पहले की वह घटना इरा की आँखों म तैर गई।

जया थल स निकालकर बिस्कुट खा रही थी। "तुम खाओगी ममी?" उसने पूछ लिया। पर इरा ने इन्कार म सिर हिलाकर कहा "खाओ मेरी बच्ची!"

इरा को लगा कि नाग की बात उस समय न मानकर उसने भूल का थी। नाग उस छोड़कर चला आया, क्योंकि उसका कर्तव्य उसे बुला रहा था। बम्बई उसे पसन्द न थी। उसका कहना था कि बम्बई में कला का दूध-नाद्य नहीं पनप सकता। मैंने नाग समझाया उसने एक न सुनी। वह हम छोड़कर चल दिया।

किसी ने कहा पाँच स्टेशन छोड़कर है वरकला।

ठीक है! इरा ने मन ही-मन कहा वरकला तो आज पहुँच कर रहूँगा।

इरा की कल्पना में अपना गाँव घूम गया—रेणुका। आगरा से मथुरा की ओर बारह मील दाहिनी ओर मुड़ जाओ यमुना के किनारे। वाह्-वाह् पुराने सुन्दर वृक्ष टूटे-फूटे घाट, एक मन्दिर एक टीला। सात पीढ़ियों से उनका परिवार रेणुका को अपने हाल पर छोड़कर बम्बई चला आया था। बचपन में एक बार माँ उसे रेणुका दिखाने ले गई थी जैसे अब मैं जया को वरकला दिखाने ले जा रही हूँ।

हम तुम्हारे पापा का साथ ले चलेंगे बम्बई जया! उसने मानों अपने विचार को प्रौढ़ता देते हुए कहा फिर हम रेणुका चलेंगे।

रेणुका की कथा तो वह जया को पहले भी कई बार सुना चुकी थी। आज उसका सुनाना और भी आवश्यक हो गया।

'रेणुका में ही था कभी जमदग्नि ऋषि का आश्रम। ऋषि के साथ रहती थी ऋषि-पत्नी रेणुका। रेणुका ही दूध-नाद्य था जया सुन रही हो न?

उसने विस्मय खाते हुए सिर हिला दिया। उसका ध्यान बाहर की तरफ था।

हाँ तो भगवान् परशुराम उसी दूध-नाद्य का दूध पीकर बड़े हुए थे। कन्धे पर फरसा रखकर परशुराम दुष्ट राजाओं की जीवन-लीला समाप्त करने निकले थे। रेणुका से एक ही मील पर है वह जगह जहाँ परशुराम ने सहस्रार्जुन को मार डाला था।

पर परशुराम ने अपनी माँ को क्यों मार डाला था माँ ? जया ने चंचल आँखों से कहा।

इरा ने ठण्डी साँस भरकर कहा इस कहानी से यह प्रसंग तो अब कैसे निकाला जा सकता है जया ? जमदग्नि किसी बात से नाराज हो गए थे। उन्होंने परशुराम को आज्ञा दी अपनी माँ को मार डालो। सब भगवान् की लीला है। रेणुका पतिव्रता पत्नी थी। उसने पति की आज्ञा मानते हुए अपने पुत्र परशुराम के हाथों अपनी हत्या कराने से संकोच नहीं किया था। पिता का आज्ञाकारी पुत्र था परशुराम। पिता की आज्ञा कैसे टालता ? पिता ही सबसे ऊपर है बेटी। कहते-कहते इरा रुक गई। अकस्मात् उसने स्वयं को इस कहानी में डाल दिया। यदि पुत्र पाने की उसकी इच्छा पूरी हो जाती तो क्या वह यही पाठ उसे भी दे सकती थी ?

पर पिता को इस बात के लिए राजी करने से चूका तो नहीं था परशुराम कि ऋषि फिर से अपनी पत्नी को जीवित कर दें।

तो रेणुका फिर जी उठी थी माँ ?

हाँ जया !

जया की आँखों में आस्था और विश्वास की ज्योति थिरक रही थी।

यह सब भूमि परशुराम क्षेत्र कहलाती है जया ! इरा मुस्कराई वरकला जहाँ हम जा रहे हैं इसी परशुराम क्षेत्र में है।

अब और कितनी दूर है वरकला ?

अब ज्यादा दूर नहीं।

इरा ने पूर्व असम में ब्रह्मपुत्र के तट पर स्थित परशुराम-कुण्ड की कथा छेड़ दी। वहीं स्नान करके परशुराम ने अपने मन से दूध-गाछ की हत्या का पाप धो डाला था। पश्चिमी घाट के साथ-साथ खम्भात से लेकर कन्याकुमारी तक ऐसे कई स्थान हैं जिनके साथ परशुराम की कथा जुड़ी हुई है। पृथ्वी पर विजय पाकर इसे दान में दे डालना परशुराम का ही काम था। फिर वे कोंकण में रहे जिसे सागर ने उनके

नाम के लिए दिया था। फिर उन्होंने अपना फरसा वरुण देवता के संकेत पर सागर में फेंका और वह कन्याकुमारी के समीप जाकर गिरा। जहाँ वे खड़े थे वहाँ से लेकर कन्याकुमारी तक केरल की भूमि परशु-राम के फरसा फेंकने से ही निकल आई थी जया!

और जया को जैसे विश्वास नहीं हो रहा था। यह कैसी मनःस्था है, यह सोचकर इरा चुप बैठी रही।

गाड़ी के पहिये दनदनाते हुए आगे ही आगे जा रहे थे। इरा ने जया की ठोढ़ी प्यार से ऊपर उठाई अब अगला स्टेशन होगा वरकला।

जया को अब विश्वास न हो रहा हो।

इरा सोच रही थी—दस वर्ष पूर्व जो व्यक्ति मुख मोड़कर चला आया जिसने कभी मेरी सुधि न ली उससे मिलन होगा। क्या यह मंगल-मिलन होगा?

एक धचके के साथ गाड़ी वरकला स्टेशन पर रुक गई।



अठारह

मूर्तिकार दामोदरन के हाथ अब मूर्ति बनाते काँपने लग थ । पर माँ व की मूर्ति म नूतन भाव भगिमा लाने की साध वसी हा चली आ रही थी जस व इस यज्ञ-वेदी पर अन्तिम आहुति डालकर ही विदा होग ।

मूर्तिकार की पत्नी अब बुढिया हो चली थी । माथ पर झुरियाँ का जाल केशा म श्यामवर्ण आधे से भी कम—धौर बार फल रह थे । शान्त मन बुढिया दुकान पर भी आ जाती । खीझ भरी लालसा थी तो यही कि बट ने विवाह नहा किया बहा-बस धारा नहीं बढी । कह-कहकर हार गइ । काई सुन हा नहा ता क्या करे ?

मूर्तिकार अब भी आँखें ऊपर चढाकर बात करता था । दत्तमुख डाकबाबू उसका मित्र था । कइ बार बदली हुई अब फिर वरकला आ गया । अब ता यही स पशन पायगा । हर रोज कोई-न-काइ पुस्तक अथवा पत्रिका उठाय रहता है । कभी विवाह पर सगीतकार का मत सुनाता एक मगीत-गोष्ठी जिसम प्रेम बाँसुरी बजाता है बच्चे ढोलक पर ताल दत हैं पड़ोसी अपनी अपनी नफीरी पर सुबह शाम एक कर देने ह और दूल्हा अपनी सहस्र-तार सारगी पर राग छेडने की प्रतिज्ञा म जीवन बिता देता है । कभी विवाह पर अभिनेता का दृष्टिकोण उभारता नाक रूप का नाटक जिस पर दशन बार तालियाँ बजाते हैं । कभी वह नेपोलियन की यह सूक्ति हवा म उछालता इतिहास

क्या है ? मात्र एक नाना की कथा जिसे सबने मान रखा है ! कभी वह कथा सिलती थी० हजरी का नरक समय वाला बाल सुनाता 'बत्ती मत बुझाना मुझे अंधेरे में जाते डर लगता है। कभी किसी नौकाकृति पर पटक जाता इच्छा का माथा ही या नारी के प्रेम का भी माथा है ! दरमुल में सुनी हुई ये सब बातें दामोदरन की विचारधारा का द्वन्द्व जाता जब भी बुढ़िया पत्नी उस पर व्यंग्य कसती।

आज दोपहर न हो बुढ़िया दुकान में चली आई थी। बोली 'देवी देवताओं की मूर्तियाँ हो कितना हैं तो तुम यह माँ-बेट का मूर्ति पर क्यों समय नष्ट किया करते हो ?

जिस काम की तुम्हें समझ नहीं उसमें क्यों दखल देती हो ? मूर्तिकार ने आँखें ऊपर चढ़ाकर कहा मूर्तिकला का भी तुमने नानी की क्या समझ लिया ?

'बूढ़ हो गए पर तुम मेरा सम्मान करना न सीख पाए।

सम्मान ? अरे मैं तो अब तक दूल्हा बना बहुत-सार सारंगी पर राग छेड़ रहा हूँ !

जाने का वर समीप है। अभी तक दूल्हा बन बैठे हैं ?

अरे सुनो। जब मैं जान मरूँ तो बत्ती बुझा देना। मुझे अंधेरे में जाते डर नहीं लगेगा।

हे भगवान् ! बूढ़ा हो गया बात करनी न आई। मैंने सोच लिया दोपहर बात नहीं रहा करूँगा। फिर दगूँगा तुम मूर्ति तन आई किया रखो ये कल चला चलाकर बातें करते हो।

यह तुम्हारी स्पर्धा कभी मौन तो होने से रही। बुढ़िया होकर भी पत्नी रल की पहरेदारी का इतनी चिन्ता ! हे भगवान् !

तुम नहीं मानोगी तो रास्ता नहीं मिटेगा।"

रास्ता तो बुरा है राना ! जिस पर मैं कदम रखूँ गूँद न भागती है मार पड़े से भीजता है पानी !

उसने फिर का पथा रूप में प्रारम्भ कर दिया।

दामोदरन को हँसी आ गई। प्रेम भरी दृष्टि से उसने बुढ़िया की ओर देखा। बोला परसों देशमुख सुना रहा था किसी लेखक का वचन—पति-पत्नी सम्बन्ध ऐसा विषय है जिस पर नारियाँ सभी एकमत हैं और पुरुष अनेक मत!

बुढ़िया बोली तब तो स्पष्ट है स्त्रियाँ समझदार हैं पुरुष बुद्धू।

मूर्तिकार बोला वह बात भी देशमुख ने मुझे बताई थी। कौन जाने यह मेरी अन्तिम मूर्ति हो—यह माँ-बेटी की मूर्ति। आयु भर की यही तो मेरी कमाई है! सोचा था दास लौट आया है तो मेरे काम में सहायक होगा। उसका छोटा भाई था उसे भगवान् ने ले लिया। दास को मेरी चिन्ता नहीं। उसके मन प्राण तो मुत्तु बाबा के पास पचानन में बसते हैं। उसे न खाने की सुध है न पीने की। बुद्धिमान होता तो गुरुत्व की जगह संगीत विद्यालय का आचार्य बना होता। उस पद पर आ विराजा कोई और। विलासकोर को संगीतशाला को चला रहा है दास जिससे धेले की कमाई नहीं होती। जब तक मैं बैठा हूँ घर में चूल्हा जल रहा है। मेरे पीछे क्या होगा?

बुढ़िया ने दूर से देखा एक नील-वसना स्त्री बच्ची की अँगुली थाम चली आ रही है। स्त्री देखने में लम्बी थी। इकहरा शरीर गौर वर्ण बच्ची की आयु दस वर्ष के लगभग। गोल चेहरा बड़ी बड़ी आँखें।

माँ-बेटी दुकान के सामने रुक गईं। स्त्री ने कहा, मूर्तिकार की दुकान इतनी दूर होगी यह नहीं सोचा था।

बच्ची ने मूर्तिकार के हाथ वाली मूर्ति की ओर देखकर कहा मैं वही मूर्ति लूँगी ममी!

बुढ़िया ने पति के हाथ से मूर्ति लेकर बच्ची को दे दी अब तो प्रसन्न हो बेटी?

स्त्री ने पूछा 'यहाँ बस एक ही मूर्तिकार है न?

यहाँ बस मैं ही यह काम करता हूँ! मूर्तिकार मुस्कराया।

स्त्री ने पहले मूर्तिकार के पैर छू लिये फिर बुढ़िया के।

हैं हैं ! बुढ़िया पीछे हट गई, यह क्या कर रही हो बेटी ?"

हमारे में बड़ों का सम्मान करने की यही प्रथा है। स्त्री हँस मुस्करा रही। मेरी बच्ची माँ-बेटे की मूर्ति पर लट्टू है इसके लिए मुझे बम्बई से आना पड़ा।

मूर्तिकार ने बुढ़िया की ओर देखकर कहा माँ का मुझे माँ-बेटे की मूर्ति बनाने से मना न करना। कितनी दूर से—बम्बई से ग्राहक आते हैं इसके लिए। और फिर उसने स्त्री को सम्बोधित करते हुए कहा तुमने एक चिट्ठी लिख दी होती। यह मूर्ति मैं पार्सल कर देता।

नहीं आपके दर्शन भी तो करने थे।

और फिर बातों-बातों में स्त्री ने पूछा तुम्हारी कोई सन्तान तो होगी ?

बुढ़िया बोली मेरा बेटा है गया। वह सागर किनारे घूमने गया है।

बुढ़िया के आग्रह से स्त्री ने गगन चौक में स्थित गगन होटल से अपना सामान मँगा लिया। बुढ़िया ने उसे एक-दो दिन अपने घर पर रहने के लिए राजी कर लिया।

बुढ़िया ने राज कहा कि बेटी तुम अतिथि हो भोजन मैं बनाऊँगी पर स्त्री ने एक न सुनी।

स्त्री का पाठ भोजन की मार था। वह भोजन बनाने में व्यस्त थी।

बुढ़िया कह जा रही थी तुम क्यों कष्ट करती हो बेटी तुम तो अतिथि हो

इतने में घर आ गया। माँ की आवाज उसके कान में पड़ी। उसने पास आकर कहा कौन अतिथि आ गए, माँ

और उसकी दृष्टि इरा पर पड़ी। वह चौंककर बोला इरा तुम कब



उन्नीस

वर्कला का सागर-तट हँस पड़ा। इस वर्ष पूर्व बम्बई का जुहू-तट मुग्ध-नयन मोह मंदिर मदनोत्सव उषा सा मुस्करा दिया था। तब कोई तीसरी आत्मा न थी पति-पत्नी के बीच। अब तो जया थी—अनिलित इतिहास-गाथा-सी मनियार सजाती घुँघरू बाँधती मुड़-मुड़ जाती प्रवाहमयी छन्दात्मक ठुमरी-सी।

जया गा रही थी

अम्मायम एनि किल्ला
अच्छनुम एनि किल्ला
उम्मानुम उडवकानुम वलियुमिल्ला

दास को यह गीत अटपटा-सा लगा। जया तो अनाथ बालिका न थी। गीत में उसकी घोषणा—न माता न पिता न अन्न है न वस्त्र! मानो भय की नस में ठीक नहीं बैठ रही थी। पर यह थी दास के सर्वप्रिय गीत की उठान जिस सागर संगीत की लहरियाँ धुन में ढालकर उसने त्रिवाकुर के एक संगीत-सम्मेलन में ख्याति प्राप्त की थी। जया एक नई मुरकी के साथ लय में स्वर पिरो रही थी। एकाएक दास बोल उठा अरे इरा इस बिटिया ने तो मेरे संगीत की आत्मा को पा लिया—इतनी जल्दी पा लिया। पचानन पर तो मैं व्यर्थ ही माथा-पच्ची करता रहा। ऐसी मुरकी लेकर वह कभी न गा सका।

इरा का मुख खिल उठा।

सागर नाच रहा था। शरद् पूना का चन्दा सिर पर सामने था गाता-नाचता सागर। आनन्द विभोर मन प्राण—यह था दस वर्ष के बिछुड़े पति-पत्नी का मधुर मिलन। चुनचुनिया मुखर-मन बालिका गन्ध-मन्दिर अञ्जलियों के चौक पूर रही थी रात रात की रानी सजा रही थी।

पति-पत्नी में बहुत बातें हुई। जो मान्तिनी माया इस वर्ष पीछे छूट गई थी फिर उनकी मुट्ठी में थी।

गगन का मन विचार बन्धना पड़ा कि मनिनश्री इरा महन् की मूर्ति बना बन्धे से ही चिपका रहेगी। वह फिर से इरा का आराध्य देव बन गया था।

जया को पाकर वह मग्न हो गया। बम्बई में उसे इतना छूट कहाँ रहती होगी! तीन दिन हुए उसे बरकला आये। बरकला का यह चमत्कार। नाच-नाच उठता है जया। काजू-वन उसे प्रिय है। गगन चौक से वह दिलना नहीं चाहती। कभी कहती है नाव में बैठकर सुरा में गुजरती लहर गिनू था। एक बार हो भी आई है। सुत बाबा उसे नाव में बिठाकर बीच सागर में ले गए और जाल में फँसती मछलियाँ दिखा लाए। संगीत विद्यालय में गुरुमाता ने गुरुदेव के पुराने चित्र दिखाए। संगीत विद्यालय के नए आचार्य ने उसके कण्ठ-स्वर की प्रशंसा की। प्रिंसिपल नम्बूतिरिप्पाड नीलू की बातें पूछते रहे वह मन में बताती गई। गुरुमाता ने गोविन्दन का हाल पूछा। बदा ने माना मतलब गानकर गोविन्दन का एक-एक चित्र दिया दिया। दशमुख डाक्टर बाबू कहते हैं तुम बम्बई लौट जाओ जया को छोड़ जाओ। तीन दिन का चमत्कार। बरकला के साथ जड़ जया का पहचान युग-युग से बना रही हो।

इस पापा का गान सुनेंगे। जया ने हाँक लगाई।

सुनाया बना! गगन मुस्कराया।

इरा के मन में भी यही बात थी। उसकी इच्छा भी गगन सदा।

पर जया चचल स्वर म कह उठी ममी, ममी दीया बरकलो !

दास की दृष्टि जया के मुख पर पड़ी। शरद् पूना म जया का रूप खिल उठा। वह बोला मम्मा मक्लो दीया बरकलो जो मरी जया को लड़के उसका फूल दोना भ्रबको ! दास ने पूरा ग्रभिनय किया। किसा काल्पनिक चीज पर हाथ न जाकर वह जया के पुठ पर हाथ फरता रहा। जया हँस पड़ी। इरा मानो रूप-माधुर्य-स्वप्न की मूर्ति-सी ग्रपलक नयन पति की ग्रार दखती रही। उस को लगा इम ग्रप्सरा-सी किन्नरी का मुग्ध-श्री बसी-की-बसी बची रह गई है जसी वह दम वष पूव छोड कर ग्राया था। कुछ भी ग्रन्तर नहा ग्राया। ग्रनन्त-यौवना की लावण्य मयी न्ह-लता पहन से कहा ग्रधिक कमनीय प्रतीत हुई अन्ने हा ग्रब वह मा बन गइ थी। वह मोच-सोचकर बोला गटे न जाने किस जादू भरी लक्षनी स लिखा था ।

इरा समझ गई बस बस। रहने दो।

मरे तुम शकुन्तला से कम ता नही इरा ! ग्रौर दास ने गेटे के शब्द दोहरा दिए, यदि तुम युवावस्था के फूल ग्रौर प्रौढ़ावस्था क फल एक जगह खोजना चाहो ग्रौर यदि तुम स्वग ग्रौर मत्यलोक का एक साथ दशन लाभ चाहो ता मैं एक ही शब्द म उत्तर दू गा—वह है शकुन्तला ग्रौर मैंन सब कह दिया।

यह ता महाकवि की प्रतिभामयी लखनी को प्रणाम है ! इरा बात टाल गई।

माता पिता की बातें जया का समझ म नहीं ग्राई। बोली ग्रम्मो मक्मो दीया बरकलो, जो मरी ममी को तकक ग्रौर इरा न उसका मुह बन्द कर दिया।

मुत्तु बाबा मेनमुन ग्रौर प्रितिपल नम्पूतिरिप्पाड ग्रा रहे थ। ग्राग ग्राग था पचानन।

लो वे ग्रा गए।' दास खुशी से उछल पड़ा ग्रब कौमुदी महोत्सव की याद उभरेगी।

मुसु बाबा पास आकर हँस पड़े "बड़ी मुश्किल से पकड़ पाया । न्यायमूर्ति बाबू तो मान ही नहीं रहे थे । नम्बूतिरिप्पाड पहले राज़ी हुए । पंचानन तो मेरा पाला है और आपका शिष्य । वह क्या इन्कार करता ? अब जमाइए गप्पों । बरकला का गाना तो रोज़ ही सुनते हैं, बम्बई का गाना होना चाहिए ।

जरूर ! इरा मुस्कराई ।

"यह बाबा क्या दयमुख बाबू आप नहीं आना चाहते थे ?

आते कैसे नहीं थे ? नम्बूतिरिप्पाड कह उठे चिट्ठियों पर मोहरें लगाकर ही चले । इनकी मोहर की स्याही बहुत पक्की है । इनकी बातों पर भी तो डाकघर की मोहर लगी रहती है । क्या मजाल वह मोहर उतर जाय ! पक्की स्याही का एक प्रमाण यह भी है ।

इरा की लगा ये लोग बड़े वाचाल हैं । जब फिल्म के डायलॉग लिखे जाते हैं सोच-सोचकर क्या ये लोग कैसे बोलेंगे ?

वाणी को वश में रखना क्या हर समय सम्भव है ? हमारा कोई न-कोई वाक्य तो सीप का मोती बन सके । सीप में कहाँ से मोती है चमके ? मोती को आबदार कौन बनाता है ? उमर खय्याम की यह सूक्ति इरा के मन के टेप रिकार्डर पर बज उठी—सुन पड़ता हो हर सुबह हजारों गुलाब के फूलों का नींद जाता है, पर सावों तो कल के गुलाब क्या हुए ? वाणी में भी गुलाब खिलने चाहिएँ यह सोचकर इरा मन-ही-मन मुस्करा दी ।

प्रिंसिपल भी तो प्रिंसिपली नहीं छोड़ते । यह बात करेंगे जब हम सब कालेज के विद्यार्थी हों । एक ही पुण्य कार्य किया कि मुस्कराता प्रातःस्मरणीय आप भी । बाकी रहे मुसु बाबा । वह तो बात-बुनक्कड़ हैं । प्रिंसिपल जी रिकार्ड भर देते हैं बजने लगता है ।"

"आज तो टेप रिकार्डर की बात करो !" प्रिंसिपल महाशय ने ध्यान बघारा "ध्यान का सुन है । इरा ज्या टेप रिकार्डर लिए बैठी है । यह ड्राई बैटरी से चलने वाला टेप रिकार्डर है । ग्रामोफ़ोन रिकार्ड बनाने

के लिए तो बड़ी मशीनरी चाहिए। टेप रिकार्डर में टेप पर आवाज भरते जाओ। इसीमें मशीन लगी है। टेप बजाया भी जा सकता है उस पर। उसी टेप को चाहो तो इरेज करके उसी पर दूसरी आवाज भर लो।

मैं इरेज नहीं करूंगी। इरा बोली मैं अपने साथ बहुत से टेप लाई हूँ।

'तब तो और भी ठीक है।

प्रिंसिपल की बात क्या डाकघर की मोहर से कम पक्की है ? देशमुख हँस पड़ा।

दास ने अभिवादन के स्वर में कहा यह हमारा महाभाग्य कि आप लोग पधारे। बठिये स्थान ग्रहण कीजिए।

मुत्तु बाबा बाले बेटा पंचानन आज सबको प्रसन्न कर दो अपने संगीत से। एक बार तो गुरुदेव न्द्रपन्न् का स्वर गूंज उठे। दिखा दो कि गुरुदेव की आत्मा का तुम्हारी देह में वास है। मशीन में भरा जायगा तुम्हारा संगीत जिसे सारा संसार सुनेगा। और फिर इरा की ओर देखकर बोले आज सबेरे पापनाशम् पर स्नान करके तुम्हारी दुविधा जाती रही होगी बेटी !

दुविधा पर विजय पाना परम आवश्यक है। इरा ने एक बार एक ज्योतिषी को हाथ दिखाया था। उसे याद आया उसने भी यही बताया था कि दुविधा ही उसका रोग है। दुविधा क्या माँ के दूध से आती है ? हमारे स्वभाव निर्माण में माँ के दूध का क्या स्थान है ? माँ जैसा प्यार और कहाँ मिल सकता है ? जिसे माँ का प्यार नहीं मिला उसके मन की वह रिक्तता कहाँ जाकर भरेगी ? उसकी बातों में गुनाव नहीं सिल सकते। इरा सोच रही थी दास बम्बई चला चले तो मेरी रिक्तता दूर हो जाय। फिर दुविधा भी उतनी नहीं रहेगी। मुस्कान बनकर माँ का प्यार उमड़ आया। उसने ठोड़ा दबाकर जया की आँखों में झाँककर देखा। वह मुत्तु बाबा की गोद में बठी अठखेलियाँ करती रही।

इरा का ध्यान बम्बई की ओर गया। मन का टेप रिकार्डर बज रहा था—हम इरा की ऐक्टिंग प्यारी लगती है ! इरा फिल्मों की चाँद-चाँदनी है ! इरा तुम जादू हो तुम टोना हो ! तुम सपनों की रानी हो ! तुम हँसती हो तो खिल खिल जाते हैं गुलाब के फूल ! यह कैसा वक्त आया डार्लिंग इरा ! हमारी कड़वी आलोचना की सीढ़ी तुम तक पहुँच नहीं पाती ! तुम्हें हम प्यार करते हैं इरा ! तुम्हारी फिल्म आने पर शहर भर में तुम्हारा नाम जपते हैं। तुम्हारा प्रोपेगण्डा करते हम डुग्गी बजाते हैं !

प्रिंसिपल बोले — जिस जलवायु में मनुष्य का जन्म होता है वही जलवायु उसे रास आ सकता है—विशेष रूप से तब जब बुढ़ापा सिर पर आ पहुँचे।

देशमुख ने अपनी ही हाँकी, जया का जन्म तो हमारा बम्बई में हुआ। जया वहीं रहेगी जहाँ इरा देवी रहेगी। दूध-गाछ को छोड़कर जया बरपेटा में रह जाय इसकी तो मैं कल्पना ही नहीं कर सकता।

जया से पूछो न ! मुन्नू बाबा कह उठे। पूछो वह क्या कहती है। क्यों जया बिटिया तुम्हें पापा पसन्द हैं या मम्मा ?

मम्मा ! जया ने हँसकर कहा। और सब हँस पड़े। पर प्रिंसिपल गम्भीर मुद्रा में बोले — एक बात तो सोलह आने सत्य है। मनुष्य का जन्म जिस ममता से होता है आयु भर मनुष्य उसी गोद के लिए छटपटाता रहा है। संसार का बहुत सा साहित्य इसका साक्षी है। कला में भी इसके प्रमाण मिलेंगे। जिस दूध-गाछ का दूध पीकर मनुष्य फलता फूलता है उसी दूध-गाछ की छाया में फिर से आ बैठने के लिए मनुष्य आयु भर लालायित रहता है। उसकी इस साध ने अनेक कथाएँ उपजाईं। इन कथाओं में से कुछ, जिनमें बौद्ध साहित्य की जातक कथाएँ आ जाती हैं मूर्तिकारों की छेनियों द्वारा शिलाओं पर अंकित की गईं। उन कथाओं में से एक का चमत्कारपूर्ण चित्र मुझे [illegible] दर्शन में मिला। कुछ न पूछिए। दूध-गाछ की इतनी सुन्दर उपलब्धि

के लिए तो बड़ी मशीनरी चाहिए। टेप रिकार्डर में टेप पर आवाज भरते जाओ। इसीम मशीन नमी है। टेप बजाया भी जा सकता है उस पर। उसी टेप को चाहो तो इरेज करके उसी पर दूसरी आवाज भर लो।

मैं इरेज नहीं करूंगी। इरा बोली मैं अपने साथ बहुत से टेप लाई हूं।

तब तो और भी ठीक है।

प्रिंसिपल की बात क्या डाकघर की माहर से कम पक्की है? देशमुख हंस पड़ा।

दास ने अभिवादन के स्वर म कहा यह हमारा महाभाग्य कि आप लोग पधारे। बठिए स्थान ग्रहण कीजिए।

मुत्तु बाबा बाले बेटा पचानन आज सबको प्रसन्न कर दो अपन संगीत स। एक बार तो गुरुदेव रुद्रपदम् का स्वर गूंज उठे। दिखा दो कि गुरुदेव की आत्मा का तुम्हारी देह म वास है। मशान म भरा जायगा तुम्हारा संगीत जिसे सारा ससार सुनेगा। और फिर इरा की ओर देखकर बोले आज सवेरे पापनाशा पर स्नान करके तुम्हारी दुविधा जाती रही होगी बेटी।

दुविधा पर विजय पाना परम आवश्यक है। इरा ने एक बार एक ज्योतिषी को हाथ दिखाया था। उसे याद आया उसने भी यही बताया था कि दुविधा ही उसका रोग है। दुविधा क्या मां के दूध से आती है? हमारे स्वभाव निर्माण म मां के दूध का क्या स्थान है? मां जैसा प्यार और कहां मिल सकता है? जिस मां का प्यार नहीं मिला उसके मन की वह रिक्तता कहां जाकर भरेगा? उसको बाता म गुलाब नहीं खिल सकते। इरा सोच रही थी दास बम्बई चला चले तो मेरी रिक्तता दूर हो जाय। फिर दुविधा भी उतनी नहीं रहेगी। मुस्कान बनकर मां का प्यार उमड आया। उसने ठोडी दबाकर जया की आंखों में झांककर देखा। वह मुत्तु बाबा की गोद म बैठी अठखेलियां करती रही।

इरा का ध्यान बम्बई की ओर गया। मन का टेप रिकार्डर बज रहा था—हम इरा की एक्टिंग प्यारी लगती है! इरा फिल्मों की चाँद-चाँदनी है! इरा तुम जादू हो तुम टोना हो! तुम सपनों की रानी हो! तुम हँसती हो तो खिल खिल जाते हैं गुलाब के फूल! यह कैसा वक्त आया डार्लिंग इरा! हमारी कड़वी आलोचना की चीखें तुम तक पहुँच नहीं पातीं! तुम्हें हम प्यार करते हैं इरा! तुम्हारी फिल्म आने पर शहर भर में तुम्हारा नाम जपते हैं। तुम्हारा प्रापगण्डा करते हम डुग्गी बजाते हैं!

प्रिंसिपल बोले जिस जलवायु में मनुष्य का जन्म होता है वही जलवायु उसे रास आ सकता है—विशेष रूप से तब जब बुढ़ापा सिर पर आ पहुँचे।

रामगुप्त ने अपनी ही हाँकी 'जया का जन्म तो हमारा बम्बई में हुआ। जया वहीं रहेगी जहाँ इरा दबी रहेगी। दूध-गाछ को छोड़कर जया वरकला में रह जाए इसकी तो मैं कल्पना ही नहीं कर सकता।

जया से पूछो न! मुत्तु बाबा कह उठे पूछो वह क्या कहती है। क्या जया बिटिया तुम्हें पापा पसन्द हैं या ममा?

ममा! जया ने हँसकर कहा। और सब हँस पड़े। पर प्रिंसिपल गम्भीर मुद्रा में बोले एक बात तो सोलह आने सच है। मनुष्य का जन्म जिस ममता से होता है आयु भर मनुष्य उसी गोद के लिए छटपटाता रहता है। संसार का बहुत सा साहित्य इसका साक्षी है। कला में भी इसके प्रमाण मिलेंगे। जिस दूध-गाछ का दूध पाकर मनुष्य फलता-फूलता है उसी दूध-गाछ की छाया में फिर से आ बसने के लिए मनुष्य आयु भर लालायित रहता है। इसकी इस साध से अनेक कथाएँ उपजीं। इन कथाओं में से कुछ, जिनमें बौद्ध साहित्य की जातक कथाएँ भी आती हैं मूर्तिकारों की छेनियों द्वारा शिलाओं पर अंकित की गईं। इन कथाओं में से एक का चमत्कारपूर्ण चित्र मुझे सिंहल शिलादर्शन को मिला। कुछ न पूछिए। दूध-गाछ की इतना सुन्दर उपलब्धि

अन्यत्र नहीं मिलेगी।

मुत्तु बाबा ने प्रसंग बदलकर कहा, नीलू और गोविन्दन तो हाल ही में यहाँ भी आये थे। उनकी जोड़ी ठीक रही। इसमें आप क्या कहते हैं?

इरा के मन का टेप रिकार्डर बज उठा—हाँ हाँ यही तो ठीक है। विवाह करो मां बनो! मां बनने से बढ़कर कोई पुण्य नहीं नारी खास करे अभिनय। असल में नारी मां है मां नारी है! मां ही नारी है यही ठीक है। दुर्दिन हो चाहे सुदिन नारी को मां बनना होगा!

यह सब होगा ठीक ही होगा!' देशमुख ने मानो डाक्टर की मोहर लगा दी।

जया मुत्तु बाबा की गोद में बैठी उनके घुंघराले बालों में हाथ से कंघी कर रही थी। प्रिंसिपल बोले जया का बरकला में जी लग गया यह चमत्कार कम नहीं।

इरा अपलक अणिमा में शरद् पूनो के चन्द्र की ओर देख रही थी। सोची आज को जागरी की रात है। घर घर द्वार द्वार आती हैं लक्ष्मी आज रात। पूछती हैं—कौन जाग रहा है?—को जागरी?

देशमुख बोला संस्कृत को जागर्ति? से बिगड़कर बना को जागरी?—आश्विन पूर्णिमा को जागरी व्रत के लिए प्रसिद्ध है। खीर के पतीले का ढकना उठाकर रख देना चाहिए, जिससे शरद् पूनो के चांद की किरणें खीर में अमृत घोल सकें।

घी का दीप जलाकर इरा ने लक्ष्मी-पूजन किया। पछवा ने दीप बुझा दिया। चन्दा को खीर का भोग लगाया गया। फिर दिन भर का व्रत खोलते हुए इरा सबके साथ प्रीति भोज में सम्मिलित हुई। खीर का स्वाद सबने लिया पर इसका आधे से अधिक भाग चन्दा की अमृतमयी किरण पड़ने के लिए छोड़ दिया गया। देशमुख देर तक समझाता रहा कि शरद् पूनो के चन्दा की किरणों वाली खीर खाने से बड़े

बड़े रोग कट जाते हैं।

मुन्नु बाबा बोले पचानन बेटा गुरुदेव ने जो सिखाया वह आज के लिए ही था। तुम्हारा संगीत मशीन में भरा जायगा यह ध्यान रखना।

आलाप लेकर पचानन ने गाना आरम्भ कर दिया। टेप रिकार्डर लगाकर इरा मनमना-सा बैठी रही।

पचानन का संगीत समाप्त हुआ तो इरा बोली पहला टेप इरेज भी किया जा सकता है। प्रिंसिपल महोदय बजा ही चुके हैं पहला लगातार इरेज करके दूसरा मशीन भी टेप पर भर सकते हैं। पर मैं टेप की बचत नहीं करूँगी मैं बहुत से टेप साथ लाई हूँ।

मैं पापा का संगीत सुनूँगी। जया ने टेर लगाई।

प्रिंसिपल बोले मैं कहता था न गुरुदेव की आत्मा पचानन में नहीं आ पाई।

कैसे नहीं आ पाई? मुन्नु बाबा कुनकाकर बोले आप बच्चे का दिल छोटा न करें। पचानन को भी आप अपना ही बेटा समझें।

पचानन कुछ न बोला। वह समझ गया आज उसका संगीत जमा नहीं। प्रिंसिपल बोले अगला टेप लगाओ इरा।

स्वसुर ने शरद् पूनो के चन्दा की ओर मस्तक उठाते हुए कहा सागर में यमुना का काम होगा और संगीत की निधि तो मिली ही चाहिए। सागर की लहरों ने भी बेटा स्वसुर की बात दोहरा दी। सागर की लहरें नाना शरद् पूनो के चन्दा को छूने का साथ लिए गज-गज ऊँची उछल रही थीं। लहर-पर-लहर सवार हो रही थी जैसे गांव में एक बालक घोड़ा बनकर झुक जाता है और दूसरा बालक बिना पलान का उस पर चढ़ जाता है।

इरा चाहती थी कि पद्मसुन्दरन का गायन आरम्भ हो जिससे उसकी ऊब दूर हो।

घन बोला आज सब परकला का संगीत सुनने आ गए। आज

हम बम्बई का संगीत सुनेंगे। क्या इरा तुम वह टेप भी तो लाई हो न जो हमारे विवाह पर भरा गया था?

अवश्य! इरा मुस्कराई, और शीघ्र ही उसने वह टेप निकाल कर चला दिया।

इरा ने इसे विवाह से अगली रात बम्बई में जुहू के सागर तट पर भरा था। पाइर्वभूमि में सागर की लहरें आरकेस्ट्रा बजा रही थीं।

यह शख का सबसे प्रिय गीत था यद्यपि वह उसे भुला चुका था।

शरद् पूनो की इस संगीत-गोष्ठी के श्रोता यह न समझ सके कि यह शख का गीत हो सकता है। इरा ने वस्तुस्थिति स्पष्ट करते हुए कहा यह है बम्बई का संगीत। और बम्बई के संगीताचार्य हैं श्रापके शखधरन।

प्रिंसिपल ने हाँ-में-हाँ मिलाते हुए कहा जौहर की परख और शोभा जौहरियों में ही होती है। हमारा शख अनमोल हीरा है!

देशमुख बोला हम शखधरन और उसकी कला की पूजा करते हैं। बम्बई तो पीछे रह गई—बहुत पीछे। आप यहाँ वरकला में सागर तट पर बैठकर इनका संगीत सुनिए और देखिए, शखधरन कहाँ-से-कहाँ जा पहुँचा।

देशमुख ने शरद् पूनो के चन्दा की तरफ हाथ उठाकर कहा खीर में तुम्हारे अमृत के साथ-साथ संगीत की मिठास कैसे नहीं घुल सकेगी चन्दा मामा?

शख ने व्यंग्य की हँसी हँसते हुए कहा इरा तुम अपना टेप रिकार्ड लगा लो। मेरे संगीत की मिठास खीर में तो क्या जायगी, टेप रिकार्ड पर जरूर जा सकती है।

शख गाने लगा। लगता था उसने सागर-संगीत की थाह पा ली। अपलक नयन इरा यह संगीत सुनती रही। यह संगीत निश्चय ही बम्बई वाले संगीत से भिन्न था। इसका जन्म आस्था से हुआ था। कला की स्वीकारोक्ति में दूध-गाछ झूम उठा। यह बम्बई वाले शखधरन के संगीत

से भरा था। उसी समय में जिसमें मूर्तिकार दामोदरन की नौ-नटों का
ज्ञान का बनाई मूर्ति इस नाना का इसी भाव का व्यक्त करने वाला
पन्नों सभी मूर्तियों से भरा था।

इरा को बम्बई का स्मरण हो आया जहाँ लोग दामोदरन को आँखों पर उठा लेंगे। उसकी ख्याति संसार भर में फैलेगी। गुरुदेव का आसन कथा वाली फिल्म पर ज्ञान-विज्ञान का कितनी ही संस्थाओं का भार से मंडल और प्रमाण-पत्र मिल चुके थे मन ही मन में शिक्षा का स्तर नीचा होने के कारण देश के सिनेमा घरों में वह उतना लोकप्रिय नहीं हो पाई थी। यह हालत बदलना चाहकर रहता। उस लगा वह दामोदरन को बम्बई चलने के लिए राजी कर लेगा।

लगातार चन्द्र हुआ तो प्रिंसिपल ने कहा "यदि तुम बम्बई में ही रह जाते तो तुम्हारा सम्मान इतने ना कहाँ ऊपर पहुँचता। क्या इरा क्या मैंने कभी ठीक बात नहीं कही?"

इरा चुप था।

प्रमुख ने कहा "समुद्र बम्बई में भी है पर कलकत्ता के सागर का रंग और ही है। और इसलिए वास्तविक संगीत सीखा जा सकता है। हमारे नाट्याचार्य बम्बई नहीं जायेंगे यह आप निश्चय रखिए। वे आप लोगों का चाल समझ गए हैं।"

ऊषा हो गई थी। शरद पूनो का चन्द्र मुस्करा रहा था। सागर हँस रहा था। सागर की लहरें मुस्कराती किन्नरियों-सी एकाएक उभर उतार रही थीं।

सब चुप थे। इरा ने सबको घूर देखा। दामोदरन की आँखों ने उस कोई भंगिमा दिखाई न दी जो उसे यह आश्वासन दे सकती हो कि वह बम्बई चलने को राजी हो सकता है।

मुझे याद आई गोविन्दन की नाक फुलाकर सरकना मैं भूला पाता। कब तक बम्बई उसे ललकारता रहेगा! नाटू ना आयेगा। कब तक नाटू बम्बई के सम्बन्धों का कलकत्ता और भरतनाट्यम्

हम बम्बई का संगीत सुनेंगे। क्या इरा, तुम वह टेप भी तो लाई हो न जो हमारे विवाह पर भरा गया था ?

"अवश्य!" इरा मुस्कराई, और साथ ही उसने वह टेप निकाल कर चढ़ा दिया।

इरा ने इस विवाह से अपनी रात बम्बई में जुहू के सागर-तट पर भरा था। पार्श्वभूमि में सागर की लहरें आरकेस्ट्रा बजा रही थी।

यह शंख का सबसे प्रिय गीत था, यद्यपि वह उसे भुला चुका था।

शरद् पूनो की इस संगीत-गोष्ठी के श्रोता यह न समझ सके कि यह शंख का गीत हो सकता है। इरा ने वस्तुस्थिति स्पष्ट करते हुए कहा, 'यह है बम्बई का संगीत। और बम्बई के संगीताचार्य हैं आपके शंख धरन।'

प्रिंसिपल ने हाँ-में-हाँ मिलाते हुए कहा, 'जौहर की परख और शोभा जौहरियों में ही होती है। हमारा शंख अनमोल हीरा है।'

देशमुख बोला, 'हम शंखधरन और उसकी कला की पूजा करते हैं। बम्बई तो पीछे रह गई—बहुत पीछे। आप यहाँ वरकला में सागर-तट पर बैठकर इनका संगीत सुनिए और देखिए, शंखधरन कहाँ-से-कहाँ जा पहुँचा।'

देशमुख ने शरद् पूनो के चन्दा की तरफ हाथ उठाकर कहा, 'और मैं तुम्हारे अमृत के साथ-साथ संगीत की मिठास कैसे नहीं भूल सकेगा, चन्दा मामा ?'

शंख ने आश्चर्य की हँसी छोड़ते हुए कहा, 'इरा, तुम अपना टेप रिकार्ड लगा लो। मेरे संगीत की मिठास सागर में तो क्या आयगी, टेप रिकार्ड पर जरूर आ सकती है।'

शंख गाने लगा। लगता था, उसने सागर-संगीत की थाह पा ली। अपलक नयन इरा यह संगीत सुनती रही। यह संगीत निश्चय ही बम्बई वाले संगीत से भिन्न था। इसका जन्म आस्था से हुआ था। कला की स्वीकारोक्ति में दूध-गाछ झूम उठा। यह बम्बई वाले शंखधरन के संगीत

न मिला था उसी समय न जिसमें मूर्तिकार दामोदरन की मंदिर की दीवार की बनाई मूर्ति इन गानों का इसी भाव को व्यक्त करने वाली पत्थर बनी मूर्तियाँ थे भाव था।

इरा की बम्बई की स्मरण हो आया जहाँ लाल गजधरन की आँखों पर उभर आईं। उसकी ख्याति संसार-भर में फैली। तुल्य की भांति कथा वाली फिल्म पर ग्रन्थ-विश्व की कितनी ही संस्थाओं का भार व मन और प्रमाण-पत्र मिल चुके थे पर हो देश में जिसको का स्तर नीचा होने के कारण देश के सिनेमा घरों में वह उतनी लोकप्रिय नहीं हो पाई थी। यह हालत बदलेगी अम्लकर रहेगा। उन लोगों वह सब धवन को बम्बई चलने के लिए राजी कर लेगा।

संगीत बन्द हुआ तो प्रिंसिपल ने कहा "गाओ तुम बम्बई में ही रह गोत तो तुम्हारा संगीत इतना भी कहाँ ऊपर पहुँचता। क्यों इरा तुमने क्या ठीक बात नहीं कहा?"

इरा चुप थी।

शम्भुख ने कहा "समुद्र बम्बई में भी है पर वरकला के सागर की बात और ही है। और इसीसे वास्तविक संगीत साधा जा सकता है। हमारे प्राणाचार्य बम्बई नहीं जायेंगे यह आप निश्चय रखिए। वे आप धन की बात समझ गए हैं।"

जया सो गई थी। शरद् दूनों का चन्द्र मुस्करा रहा था। सागर हँस रहा था। सागर की लहरें मुस्कराती किलकारियों-सी धकाधक उभरी ऊपर उठ रही थीं।

सब चुप थे। इरा ने सबको भार देखा। धवन की आँखों में उस रात नींद नहीं आई न दी जो उसे यह आश्वासन दे सकता हो कि वह बम्बई चलने को राजी हो सकता है।

मन बाबा और गोविन्दन को भी छोड़कर वरकला में आना पड़ा। कब तक बम्बई उसे अकेले पुकारता रहेगा! नानू भी आयेंगे। कब तक नानू बम्बई की सर्दियों का कवकलि और भरतनाट्यम्

सिखाती रहेगी ? हमारी तरफ से शेना को समझाना इरा—वी ! दोनों मिलकर कोई रास्ता पा लें ! प्रिंसिपल बाबू कोई विरोध नहीं करेंगे ! क्यों प्रिंसिपल बाबू ?

सब चुप हो गए।

लहरों के जयघोष पर किसी जल पक्षी का स्वर गूंज उठा।

नैदामुल बोला लगता है इस जल चिड़िया ने भी कोई जागरी व्रत रखा है। वह भी जाग रही है लक्ष्मी की प्रतीक्षा में जो उसके पास आकर भी अपना प्रश्न दोहरायेगी—को जागरी ?

इरा का मन ये बातें सुनते-सुनते एकदम ऊब गया था। उसने धाल की ओर देखा। उसके मुख पर किसी प्रकार के समझौते का आभास नहीं हो पाया। उसने टेप रिकार्डर बन्द कर लिया था।

टेप रिकार्डर उठाये वह खड़ी हो गई।

जया सो रही थी।

तो मैं जाती हूं ! तुम्हारी जया को तुम्हारे पास छोड़े जा रही हूँ !

इरा फाउ—वन की ओर हो ली।

धलधरन पहले कुछ न बोला। जब इरा लम्बी डग भरने लगी तो उसने पीछे से हांक लगाई इरा तुम लौट आओ !

इरा ने दोबारा पीछे मुड़कर कहा यह लो वह चिट्ठी जो तुम्हारे मित्रों ने दी थी। इच्छा हो तो बम्बई आ जाना !

और वह चल दी। धल को जैसे काठ मार गया।



बीस

दुरा कादुम्बन से होती बरकला रेलवे स्टेशन की ओर जा रहा था। हाथ में था टेप रिकार्डर। कोजागरी की रात। शरद् पूनों का चन्दा सिर पर पीछे से डाक्टर-दम्पति का साथ।

स्वेच्छा मुक्ति होती है नारी की भी। कर्म-बंधन से छुटकारे का नाम तो मुक्ति नहीं। अनुचित कर्म-बंधन से छुटकारा मिल जाय। उचित कर्म में संलग्न हो जाय यही मुक्ति है। अब मैं मुक्त हूं। मैं हूं अभिनेत्री! व्यर्थ ही मैंने माँ बनने की चेष्टा की। मुझे उन कोटि-कोटि दर्शकों का ध्यान रखना होगा जो मेरी एक-एक अदा पर मन प्राण न्योछावर करने को उत्सुक रहते हैं। बम्बई से छुट्टी लेकर वरकला में भी बैठना तो कला का अपमान होता। मेरा अभिनय तो चलना ही चाहिए। जया का दायित्व उस पर जिसने उसे इस संसार में आने का बुलावा दिया। अब मैं जया की चिन्ता से मुक्त हूं। जैसी पहले थी जया के जन्म से पहले, वैसी ही हूं। न कर्म न ज्ञान। मैं अभिनेत्री हूं—वैभव विलासिनी बम्बई की अभिनेत्री, माँ की बेटी। माँ मुझे पाकर प्रसन्न होगी। मेरी कला खोजने न पाये माँ को इसकी चिन्ता रहती है।

'पत्ते के विन्यास बाद के विन्यासों के लिए जगह छोड़ने को बाध्य होते हैं।' किसी की यह सूक्ति इस समय उसके पैरों की बेड़ी नहीं बन सकती थी। इस विचार को वह अपने मन से उसी प्रकार हटा'

कर सकती थी उस टेप पर रिकार्ड किए हुए स्वर को 'इरेज' करते हुए उस पर दूसरा स्वर भरा जा सकता है। इस समय तो यह विचार उसके मन के टेप रिकार्डर पर 'रिकार्ड' हो रहा था कि कोई भी व्यक्ति संसार को ठीक उसी रूप में नहीं देखता जिस रूप में दूसरा व्यक्ति देखता है। जो सिद्धान्त सर्वमान्य है, उसके सम्बन्ध में भी तो विभिन्न प्रकृति के लोग विभिन्न निष्कर्षों पर पहुँचते आये हैं युग युग से ऐसा ही होता आया है ऐसा ही होता रहेगा।

चलते चलते चाँदनी रात में उसकी दृष्टि मानो अपनी छाया पर स्थिर टिक जाती। उसे ध्यान आया आज की रात तो को जागरी की रात है। लक्ष्मी घर घर द्वार द्वार आकर पूछेंगी—को जागर? जो अभागा सो रहा होगा उसके घर में लक्ष्मी का प्रवेश नहीं होगा। उस चौर के पताने का ध्यान आया। उसमें चन्द्र की किरणें बराबर अमृत घोल रही होंगी। लक्ष्मी-पूजन के बाद प्रीति भोज में वह देर तक नारियल का टुकड़ा चबाती रही थी फलाहार किया था। घी का दीप जला कर रखा था। गाय का घी डाला था दीप में।

को जागरी व्रत की कथा तो जैसे उसके मन के टेप रिकार्डर पर बार-बार इरेज हुई और बार बार रिकार्ड होती रही। साधारण-सी कथा थी। वलित ब्राह्मण की कर्कशा पत्नी। दुखी होकर ब्राह्मण का घर से चल पड़ना। यह प्रतिज्ञा—जब तक लक्ष्मी का दर्शन मुझे प्राप्त नहीं होगा अन्न-जल ग्रहण नहीं करूँगा। जंगल में आश्विन पूर्णिमा। एक नाग-कन्या का आगमन। लक्ष्मी पूजन के बाद नागकन्या द्वारा वलित को जूआ खेलने का निमन्त्रण। वलित का इन्कार। अन्त में वलित की स्वीकृति। जूए में वलित की हार। लक्ष्मीनारायण का लक्ष्मी से कहना—तुम्हारी प्रजा के कारण ही इस बेचारे ब्राह्मण की यह दशा हुई इस पर अपना वरद्हस्त उठाओ! लक्ष्मी के आशीर्वाद से वलित को कामदेव-सदृश सुन्दर रूप की उपलब्धि। नागकन्या का वलित पर मुग्ध हो जाना। नागकन्या का दोबारा जूआ खेलने का आमन्त्रण और

टूब-नाद ।

यह जान कि तुम जान ए ता नर पति ग जना में जीत जाऊँगा ता मा चाहूँगा तुम्हार साथ चलना । वनित का जात । नागकन्या म वनित ना न्दर विवाह । नागकन्या का अपार धन राशि लकर वनित क नाथ सुख पर पर आगमन । वनित का कन्या स्त्री का अनन्तता इन नन स्थिति म इगा पूछना चाहना थी—कच्चा पत्नी को क्या ग्रहण किया गया ?

सौतिया डाह वन नग ग्दा गया ?

पन्नु-नन्द जब टन्न रिकाड बज उठा—एक हा व्यक्ति उग एक न विचार पर जना नहा रह सकता । वह जना-जना पन उन मता । उनकी छाया उनक नाप-साथ चल रहा था । कच्चे क पत्तों पर गरद-पूना क चन्द्र की किरनें चमक बगरा रहा था । इहा पत्तों क पन्नू नन्द, दुबैत है उनन नाचा वहाँ बाबू डायरा म उतकर नमकीन बनाकर पराठ चल है बाहरा क सामन । फिर उठ न्य निन्तर बज उठा—एक भावना जो कुछ मांगना है और कहता है, उन सन्दक पठआ म उनाहा जाना ना होता उन कुछ भावक नहीं है—बात यह मदन भोर दूसरा क प्रति भा इमानदार रह ! यह विचार मन्द्र बनन-नगारा न का था । वह ना उस स्मरण था । न दा ना उस मन खिच रहा था ।

बनउ-नगर नाना यह उन व दूध रहा हा मन जिन—मैं क्या का याद घा था मैं दम्भ लिया न । और उन उठ बन मन प्रति इमानदार हो ता । मन प्रति इमानदार —तुम मन प्रति इमानदार हा । क्यों फिर क्यों डरत ? बाबा रहन क लिए हा ता मैं इन किया । क्यों विचार अर ? क्या करत हो ?

उन चरन घात बन न उन बात न पूछा था—अगर तुमन मन कहा कि तुम नना । मद रहा था उनक नन्द ठा तुम किनारा तुम न ? न बात था नन क नन पर बन बना का बार धन उन—नना का । यहा क्या मा उधर था । उन जा तुन तुना था । मैं न उन घर पर । लेकिन वो बिन दूँ रा—न म

मैंने तीन दिन पहले बहाना किया था अब तो जया वसी ढेर-को-ढेर मूर्तियों से खेलेगी—माँ-बेटे की मूर्ति। पर मुक्त न पाकर क्या जया माँ की मूर्ति से सन्तुष्ट हो पायगी?

पीछे से आते सागर सगीत की हलकी-सी थाप अब भी सुनाई दे रही थी।

चलते चलते उसने सोचा दूध गाछ तो केवल मैं ही नहीं हूँ। कलाकार भी दूध-गाछ है। पर वह तो पचपन में ही गुरुदेव की आत्मा का पूजन अर्चन करने में लगा है।

अब वह गगन चौक में पहुँच गई थी। रेस्तराँ अभी बन्द नहीं हुए थे। दुकानों को पीछे छोड़ वह स्टेशन की ओर बढ़ती गई।

टेप रिकार्डर उसके हाथ में था। वह लम्बे-लम्बे डग भर रही थी। मन के टेप रिकार्ड से आवाजें आने लगीं—ऊर्ध्वगामिनी इरा। बम्बई की प्रसिद्ध अभिनेत्री। वाकमधुर फिल्म स्टार। फिल्मों की रानी। रूप की अग्निशिखा। क्षिप्र चरणा। जाज्वल्यमान रूपसी। जगमग-जगमग कल्याणी। कान्ति। ब्यूटी स्टार। आलोकिनी। सुजाता। प्रियम्वदा। स्वनामधन्या। वही इरा अब बम्बई की रूप रस-गन्ध स्पर्श स्वर की मायाभूमि की ओर जा रही थी।



इक्कीस

प्रिय दोस्त

आपको यह सुनकर खुशी होगी कि हम लोगों ने मिलकर, सहकारिता के आदर्श को अपनाकर एक फ़िल्म बनाने का फ़ैसला किया है।

फ़िल्म का नाम होगा—मछली-जाल। इसमें वरसोवा के मछुओं का जीवन रहेगा। आज हमें यह सोचकर अफ़सोस होता है कि 'गुरुदेव' जैसी फ़िल्म का संगीत-निर्देशक बम्बई छोड़कर घर जा बैठा है।

यहां गुण बस फ़रिश्ते वाली बात है। हम कब तक पैसे वालों के हाथों में खेलते रहेंगे?

बम्बई के अनेक नव-युवक कलाकार हमारे साथ हैं। बहुत से टेक्नीशियन भी हमारे साथ मिल गए हैं। हम सब एक नाव में आ बैठे हैं। युग की यही पुकार है—दर आमद दुरुस्त आमद!

यह तो सभी मानते हैं कि सिनेमा आज की दुनिया में सबसे महत्त्वपूर्ण मनोरंजन है। स्त्री-पुरुष, बच्चे बूढ़े, जवान सभी फ़िल्म देखते हैं। फ़िल्मों के गीत आज के नये लोक-गीत बनते जा रहे हैं।

सिनेमा में संगीत, नाटक, कामेडी, नाच सभी शामिल रहते हैं। ये चीज़ें एक जगह इतने सस्ते दामों हमारे देश की निर्धन जनता को कहाँ और कहाँ नसीब होंगी? युवकों और युवतियों को प्रेम की ट्रेनिंग भी सिनेमा हाल में बैठे-बैठे मिल जाती है। इतने

भी आज कोई भला आदमी इन्कार नहीं कर सकता। वस्तु स्थिति तो यही है पर हम कब तक हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहेंगे ?

कला हमारी संस्कृति की माँ है। हम उन लोगों से सहमत हैं, जो यह कहते हैं कि हमारे देश में आज से बीस-बाईस वर्ष पहले अधिक अच्छी फिल्म बनती थी और दूसरा महायुद्ध शुरू हो जाने से सिनेमा की प्रगति ठण्डी पड़ गई इससे फिल्मों का स्तर गिरता चला गया और फिल्म बनाने वाले पैसा कमाने का ही अपना आदर्श बना बैठे।

मछली-जाल' का निर्माण हमारे अपने ही पैसे और मिल जुल परिश्रम से किया जायगा। इसके लिए हम किसी सेठ के आगे हाथ नहीं फैलायेंगे। हम स्वयं इस फिल्म के निर्माता निर्देशक और कलाकार होंगे। इसका नफा-नुकसान हमारा ही होगा।

हम 'देवदास' के सहगल की याद ताजा करेंगे। सीता में काम करने वाले पृथ्वीराज और दुर्गा खोटे के अभिनय का आदर्श अपनायेंगे। हम 'अमृत मन्थन' के चन्द्रमोहन की मिसाल कायम करेंगे। हम फिर से बड़ी दीदी के पहाड़ी सान्याल जैसा सफल अभिनय फिल्म के मंच पर जिन्दा कर दिखायेंगे। हम फिर से बरुआ जैसे अभिनेता लायेंगे।

हमारी फिल्म की कहानी इस युग की महान् कहानी होगी। पिटी हुई लकीर पर नहीं चलेगी हमारी कहानी। हम यह मानकर चलेंगे कि एक सफल फिल्म का निर्माण असम्भव है जब तक एक महान् और सफल कहानी हमारे हाथ नहीं लगती। नीलू ने लिखी है बरसोवा के मछुओं की कहानी। मछुआ सच्चा सागर पुत्र है। वह सागर के दिल और दिमाग की भाषा समझता है।

कहानी यों आरम्भ होती है कि एक बूढ़ा मछुआ जिसकी पत्नी बहुत वर्ष पहले मर चुकी है अपना पुराना जाल अपने बेटे को देकर कहता है बेटा मैं इतने वर्षों तक जाल बुनने के साथ-साथ तुम्हारी माँ भी बना रहा। अब मेरे हाथों में मछली-जाल पकड़ने की ताकत नहीं

रही। वह जल उनासा। तुम जाना तुम्हारा काम। मेरा तो न जान कब मन निकल जाय। माग व तुम नागर का ही मानी मो समन्ना उन ही मना बार समझना। मब वापर हो तुम्हारा गुह होगा।

कहानी का मगता हग है बम्बई का विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन। यहाँ एक वायस्टेशन पर खड़ा वाय ले रहा है वह बूढ़ा मछुआ। वहाँ एक युवक चाय लेन चला आता है। वह युवक बताता है कि वह पहला बार बम्बई आया है। वह पूछता है मछली की बू कहाँ से आ रही है वायस्टाल वाला हसकर कहता है यह तो कोई मछुआ हो सकता है। बूढ़ा मछुआ चुपचाप चाय पीता रहता है मगर कुछ नहीं कहता। चाय वाला हसकर कहता है बाबू तुम्हारा क्या यह खयाल है कि मछली की बू चाय की प्याली से आ रही है? कोई नाम जितना यहाँ का मिल-एकड़ का रूप-शृंगार और उनके नक्श का मान-सम्मान। सर साहिब। आप मछुए बन्दर मत है मगर नाकर बताता हूँ। यह है विक्टोरिया टर्मिनस का नया स्टेशन। और यहीं से बहुत दूर नहीं स्टेशन का मकान जहाँ उन्होंने टोकरिया ले मछलियाँ उतारी गई हैं। जानते हैं यह मछलियाँ कहाँ से आती हैं? बरसात में आता है। बरसात अन्दर जाता। वहाँ मछुए मिलते। मछुआ का अपना दुनिया है जो हमारी बम्बई का ही एक हिस्सा है। पर नगर तो कुछ जानते नहीं नागर होगा मछुए नहीं होगा मछलियों का धुआँ नहीं होगा। कों बाबू फिर वह बूढ़ा मछुआ बोल उठा है यह मेरा पसना ऐसा तो मर जाय बता। मैं तो अब जान गया उस समय। अपना बाप दिन घंटा मानाता। यह जान सका मान।

यह बाबू उन बड़ मछुए के साथ हो लेता है। यह बताता है कि कन्नौर से आ रहा है। मछार गाँव का नाम एक बस्ता है। पर वह कहानी तो बहुत लम्बी है। यह बूढ़ा तो इस गाँव राजा का कहाना है बम्बई है जिसके बारे में नगर में यह बात मशहूर है कि वह सो-

बन गया था और उसे यह शाप दिया गया था कि जब तक वह पूरी महाभारत न सुन ले वह साँप से दोबारा आदमी नहीं बन सकता। बूढ़ा मछुआ हँसकर कहता है तब तो हम भी किसी का शाप ही लगा हुआ है कि हम मछुए ही बने रहेंगे जब तक हम मछली खाना छोड़कर निरामिष नहीं बन जाते। अब तुम्हीं बताओ बाबू कि बूढ़ा होने के कारण मैं जाल नहीं फेंक सकता इसलिए मैंने अपना जाल अपने बेटे को संभाल दिया। मैं मछली खाना कैसे छोड़ सकता हूँ? सागर में तूफान का सामना करने की ताकत नहीं रही। अपनी जान किसे प्यारी नहीं लगती? अपनी जान तो मछली को भी प्यारी लगती होगी। पर छोड़ो बाबू! मछली के लिए हम कहाँ से दर्द लायेंगे? मछली का दर्द समझने लगेंगे जिस दिन उस दिन तो हम मछुआगिरी छोड़नी पड़ जायगी। उस दिन तो समझो हम सारी महाभारत सुन चुकेंगे और साँप की जून से राजा फिर आदमी की जून में आ जायगा।

क्या क्यों बूढ़ा मछुआ उस बाबू का बरसावा के समीप न जा रहा है मछली की बू तेज होती जाती है। बूढ़ा मछुआ यह नहीं समझ सकता कि मछली की बू इतनी ही बुरी होती है।

हमारा विचार है कि मछली-जाल की कहानी सफल रहेगी। इस में सागर का गुस्सा भी दिखाया जायगा। मछुओं का जीवन तो रहेगा ही। पर मछुओं का जिन लोगों से वास्ता रहता है उनके जीवन में कैसे बैलगाड़ी से मोटर आई और मोटर में रेलगाड़ी रेलगाड़ी से हवाई जहाज। कैसे वे लोग आज राकेट और एटमी राकेट की बातें करते हैं। कैसे ये लोग बातों-बातों में इस पर तान तोड़ते हैं कि आज जो आदमी ज़माने के साथ नहीं चलेगा वह पीछे रह जायगा और दुनिया उससे सौ मील आगे निकल जायगी। पर बरसोवा के मछुए तो आज भी उसी जाल से मछलियाँ मारते हैं जिसे उनके पुरखा उनके हाथों में थमा गए। इसमें युग-चेतना तो रहेगी ही। संगीत भी होगा और नृत्य भी। नृत्यों का निर्देश नीलू करेगी। संगीत आपका रहेगा। नीज आ जाइए। हम

आपका इन्तजार कर रहे हैं।

हम अपने जी में ठान चुके हैं कि फिल्म इण्डस्ट्री को आग स चलें। आप दूध-गाछ की बात कहा करते थे। वह बात आज हमारी चेतना को छू चुकी है। आज हम कला की सृजन शक्ति पर माँ की छाप लगाकर ही आगे बढ़ना चाहते हैं। हमारे कलाकार और टक्नीशियन भाइ हमारे भाग्य को अपनी कला के साँचे म ढालकर फिल्म जगत् क सामने एक नया स्वर स्थापित करने जा रहे हैं।

गीत लिखन के लिए राज राज अनुपम की सेवाएँ हम मिल चुकी हैं। उन्होंने यह शत रखी है कि सगीत आपका ही रह।

हम हैं आपके मित्र
गोबिन्दन नीलू, इरा जयन्त
राज राज अनुपम दामन मनोज मुक्तिबोध पूनम"

बन गया था और उसे यह शाप दिया गया था कि जब तक वह पूरी महाभारत न सुन ले वह साँप से दोबारा आदमी नहीं बन सकता। बूढ़ा मछुआ हँसकर कहता है तब तो हम भी किसी का शाप ही लगा हुआ है कि हम मछुए ही बने रहते जब तक हम मछली खाना छोड़कर निरामिष नहीं बन जाते। अब तुम्ही बताओ बाबू कि बूढ़ा होने के कारण मैं जाल नहीं फेंक सकता इसलिए मैंने अपना जाल अपने बेटे को संभाल दिया। मैं मछली खाना कैसे छोड़ सकता हूँ? सागर में तूफान का सामना करने की ताकत नहीं रही। अपनी जान किसे प्यारी नहीं लगती? अपनी जान तो मछली को भी प्यारी लगती होगी। पर छोड़ो बाबू! मछली के लिए हम कहाँ से छंद लायेंगे? मछली का छंद समझने लगेंगे जिस दिन उस दिन तो हम मछुआगिरी छोड़नी पड़ जायगी। उस दिन तो समझो हम सारी महाभारत सुन चुकेंगे और साँप की जून से राजा फिर आदमी की जून में आ जायगा।

ज्यों ज्यों बूढ़ा मछुआ उस बाबू को बरसोवा के समीप ले जा रहा है मछली की बू तेज होती जाती है। बूढ़ा मछुआ यह नहीं समझ सकता कि मछली की बू इतनी ही बुरी होती है।

हमारा विचार है कि मछली-जाल की कहानी सफल रहेगी। इस में सागर का गुस्सा भी दिखाया जायगा। मछुओं का जीवन तो रहेगा ही। पर मछुआ का जिन लोगों से वास्ता रहता है उनके जीवन में कैसे बैलगाड़ी से मोटर आई और मोटर से रेलगाड़ी रेलगाड़ी से हवाई जहाज। कैसे ये लोग आज राकेट और एटमी राकेट की बात करते हैं। कैसे ये लोग बातों-बातों में इस पर तान तोड़ते हैं कि आज जो आदमी जमाने के साथ नहीं चलेगा वह पीछे रह जायगा और दुनिया उससे सौ मील आगे निकल जायगी। पर बरसोवा के मछुए तो आज भी उसी जाल से मछलियाँ मारते हैं जिसे उनके पुरखा उनके हाथों में थमा गए। इसमें युग-चेतना तो रहेगी ही। संगीत भी होगा और नृत्य भी। नृत्यों का निर्देशन नीलू करेगी। संगीत आपका रहेगा। शीघ्र आ जाइए। हम

आपका इन्तजार कर रहे हैं।

हम अपने जी में ठान चुके हैं कि फ़िल्म इण्डस्ट्री को आगे ले चलें। आप दूध-गाछ की बात कहा करते थे। वह बात आज हमारी चेतना को छू चुकी है। आज हम कला की सृजन शक्ति पर मां की छाप लगाकर ही आगे बढ़ना चाहते हैं। हमारे कलाकार और टैक्नीशियन भाई हमारे आन्ध्र को अपनी कला के सांचे में ढालकर फ़िल्म-जगत् के सामने एक नया स्तर स्थापित करने जा रहे हैं।

गीत लिखने के लिए राज राज अनुपम की सेवाएं हम ले चुके हैं। उन्होंने यह शर्त रखी है कि संगीत आपका ही रहे।

हम हैं आपके मित्र
गोविन्द गौडू, हरा जयन्त,
राज राज अनुपम रमन मनोज पुखिवाय पूनम"

बाईस



जया ने जागते ही ममी के लिए रोना शुरू कर दिया। गेरुआ माटी
वाले बरकना के साथ मानो उसका कोई नाता न जुड़ सकता हो।
इडी ममा कहाँ है ? शख कसे बनाता कि ममी न झूठा सच नहा
सच्चा सच बालकर दिखा दिया। कस बताता कि इरा बम्बई चली गई।
कैसे बताता इरा कठोर दिन रखती है। एक हाथ मे जया के आँसू
पोछता एक हाथ म अपने आँसू पोछता वह सागर-तट पर बैठा रहा।
सागर के जल की तरह ही आँसू भी खारी थ। आँसू का खारीपन नहीं
बदल सकता था। सृष्टि का नियम ठहरा। आँसू को लकर कई गए
अनेक कवि-वचन उसकी स्मृति म घूम गए। जया रो रही थी। उसका
क्रन्दन सागर की लहरो के गजन म गुम नहा हो पा रहा था। उस
याद आया। शकन्व कहा करते थे— माँ ही नहीं कलाकार भी दूध
गाछ है। अनुभूति क लिए चिरन्तन सत्य की भी प्रसव वेदना तो सहनी
हा पडती है। पुरानी सूक्ति है हर समय हर जगह उपस्थित नहा
रह सकते थ भगवान् इसीलिए उन्होंने माताए बनाई। माँ हा महान्
है। शिशु हो चाहे कला कृति दोना को ही प्यार दुलार चाहिए। कला
कार को माँ बनना ही पडता है— इसी गुरुवाणी की प्रेरणा स
बरकना को शखधरन मिला पचानन मिला। पचानन इस परम्परा को
आगे चलायेगा इसका उन विश्वास था।
जया रो रही थी। उस कैसे चुप कराय शखधरन को यही समस्या

थी। 'मम्मी कहाँ है ?' वह तो यही रट लगाये जा रही थी।

जया को लेकर वह काजू-वन में घूमता रहा। फिर मुड़-मुड़कर गुल्मेव के पास बार-बार रहे—'वरकला का एक-न-एक बालक सागर तट पर रेत के घरौंदे बनाते समय सागर-संगीत की कुछ-न-कुछ थाह पाता आया है और बड़ा होकर संगीत मार्ग पर चल पड़ता है—' जया का जन्म तो बम्बई में हुआ।' उसने सोचा, 'जया तो वरकला की नहीं हो सकती।' उसने हाथ जोड़कर प्रणाम किया : 'प्रणाम अन्नपूर्णा! प्रणाम स्नेहमयी! प्रणाम स्वाद-मसला! प्रणाम वरकला की गन्धा धरती!'

लाल चौक के समीपवर्ती एक रेस्तराँ में उसने जया को चाय पिलाई। वह उसे मिठाई खिलाकर मम्मी की सुधि बिसारने की प्रेरणा देता रहा। वह उससे पूछता रहा कि अब तक उसने क्या पढ़ा है। वह उससे उसकी दादी अम्मा की बातें पूछता रहा। पर उसकी तो एक ही रट था : 'डैडी, मम्मी कहाँ चली गई?'

नारियल इतनी नौकाएं हुई और वह जया को लेकर स्टेशन पर चला आया।

जया के आँसू थम गए थे। उसका चेहरा उतर गया। वह बार-बार पूछ रही थी, "डैडी, बम्बई की गाड़ी कब आयेगी?"

अब कुछ नहीं बदी। वह मन बनाता, 'हम बम्बई पहुँचकर मम्मा में मिलेंगे।' मम्मा कभी लगी ... अच्छा बकवास नहीं है।'

उसे नानू की बात याद आई— 'एक बम्बई के भीतर कई बम्बइयाँ बसी हुई हैं। उनमें एक बम्बई फिल्मों वाली भी है; वह है मीना बाजार। सारा बम्बई तो मीना-बाजार नहीं है। और सच तो यह है कि मीना बाजार के भीतर भी मीना-बाजार ही मीना-बाजार नहीं है।'

उस दिन ... बड़ा साधना के दम रहा। ... आगे चान वरकला का यह ... एक नया ... के रूप में बम्बई जैसी परिस्थितियों में होने लगा। वरकला में ... की परम्परा

को आगे चलायेगा पचानन। मुझे भी कर्मभूमि पर उतरना है। जया का भविष्य मेरे साथ बंधा है, इरा के साथ बंधा है मेरा भविष्य। इरा हमें पाकर प्रसन्न होगी। बोलेगी भोर के भूले साँझ को घर लौटे। मेरा घर वही है जहाँ इरा है जहाँ मेरी जया की मम्मी है। मैं तो जया का डैडी ही बना रहा मम्मी' तो न बन सका।

डैडी गाड़ी कब आयेगी? जया ने उसका हाथ खींच लिया बम्बई में ट्राम चलती है डैडी! बम्बई में अच्छा अच्छा गाना होता है।

वह बिना बताये ही चला आया था। को जागरी की चाँदनी रात उसके लिए बरगामिनी नहीं बन सकी थी। उसकी इरा उसे छोड़कर चली गई थी मानो वह स्वयं लक्ष्मी की तरह केवल यही पूछने आई हो— को जागरी? [कौन जाग रहा है?] पर उसके लिए तो ये दस वर्ष भी को जागरी की रात की तरह बीत थे।

जैसे वह एक बहाना चाहता था। इरा आकर वह बहाना दे गई। बरकला में उसका जीवन शेष हो गया था। वह किसी का गुरुदेव नहीं बनना चाहता था। गुरुदेव की छाया के पीछे चलने में कोई रस नहीं रह गया था।

उसने कोई सामान नहीं उठाया था। जया ने फिर पूछा डैडी गाड़ी कब आयेगी?

अब गाड़ी में देर नहीं बेटी!

काम-काजी चहल-पहल तो बरकला में भी कम न थी। निर्जन और उजाड़ जगहों पर नये मकान बन गए। आत्मा की भूख से भी पहले है पेट की भूख। ऋतु-मंगल और त्योहार-उत्सव की बात तो कारोबार की पूर्ति के रूप में ही आती है। पहले पेट में कुछ पड़े फिर संगीत भी अच्छा लगता है। जया को बाँहों पर उठाकर वह बोला मैं भी तुम्हारी मम्मी हूँ बेटी!

तुम तो डैडी हो तुम मम्मी नहीं हो। जया हँस पड़ी।

साँझ ढल रही थी । हवा वस्त्र उड़ा रही थी । नारियल-गाछ डाल रहे थे । वरकला की गरमा माग्ने उड़ रही थी ।

प्रणाम लाल माटी वाले वरकला ! राजपरन ने मातृनिनार होकर कहा मैं बम्बई जा रहा हूँ ।

जया प्रसन्न थी । सवेरे की तरह भयभीत नहीं थी ।

'डैडी मम्मी कन्याकुमारी गई है । हम भी वहाँ जायेंगे । कन्याकुमारी बहुत अच्छी है डैडी ।"

नहीं जया ! वह बम्बई गई है । वरकला उन्हें अच्छा नहीं लगा । अब हम कभी वरकला नहीं आयेंगे ।

तुम पहले बम्बई क्यों नहीं आये थे डैडी ?

उसके हाथ में बम्बई के टिकट थे । तेज हवा इन टिकटों को छू-छू जाती थी ।

हमारे घर में तुम्हारी फोटो भी रखी है डैडी और मम्मी के डैडी की फोटो भी !

बच्चे की कल्पना मजा थी । बच्चे का निवास वरकला का गरमा पानी पर नहीं बम्बई के अंतर घर पर था जहाँ दो प्राण रहते थे ।

जया की मुस्कान दुनिया भर के बच्चों में नाता जोड़ रही थी ।

मम्मी से हम रूठ जायेंगे डैडी ! हम मम्मी का पिक्चर नहीं दिखायेंगे हम तुम्हें बम्बई में नहीं आने देंगे ।

हवा अब अधिक जोर से चल रही थी । सागर की ओर से आ रही थी । इसमें नमक का स्वाद था ।

हम बम्बई से कभी यहाँ नहीं आयेंगे डैडी ।

गुरु बाबा तुम्हें पसन्द नहीं

"नहीं डैडी ।

वह तुम्हें मछलियाँ दिखायेंगे ।

मछलियाँ हम बरसोवा में देख लेंगे डैडी ! मुझको मछलियाँ का बच्चू तो अच्छी नहीं लगती । वह हुश करती जब उनके मुँह से हरा

वोल रही हो।

तुम बड़ी शरारती हो जया!

हमारी ममी भी शरारती हैं।

जया प्लेटफार्म पर नटटू की तरह घूम रही थी। तेज हवा जैसे उसी के साथ ऐंचन आई हो।

दस वर्ष तक मैं जया के प्यार से वंचित रहा! वह मन ही मन पछता रहा था। मुझसे बड़ा मूर्ख दूसरा न होगा!

सिगनल हो चुका था। उसी समय कुछ जान-पहचान चेहरे नजर आए। ऐनामुल नम्बूतिरिप्पाड और मुत बावा वाँह उठा-उठाकर उसे रुक जाने का आदेश दे रहे थे। पंचानन ने पास आकर पूछा आप जा रहे हैं गुरुदेव? फिर कब आयेंगे?

फिर नहीं आयेंगे। जया बोल उठी।

तो हम भी क्यों नहीं बम्बई चले चलते? पंचानन आँसू पोछ रहा था।

शशधरन के अन्तर की करुणा पिघल रही थी। मुत बावा की आँखों में भी आँसू आ गए। उसने चिल्लाकर कहा जल्दी लौटना वेटा!

शशधरन कुछ न बोला। उसने हाथ जोड़ दिए। उसके अन्तर में को जागरी' का मादक थाप लगा रहा था।

जया प्रसन्न होकर ताली बजा रही थी।

पाछे पटपट से स्वर में जुहू का चाँदनी का गीत गाने लगा

जुहू की चाँदनी मछुए का जाल रे
मछुए की रागिनी उदासिनी।
बच-के चलो मछलियो!
मिल के चलो मछलियो!

मिल के फंसो मछलियो !
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

गीत की गली में आज किसका भाग्य सो गया ?
साज-सजी दुलहन का स्नेह-दीप सो गया !
जहू की लहरों की याद अभिलाषिनी
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

गीत की गली में आज आई नृत्य-कला
गीत का है अन्त कहाँ ?
नृत्य का है अन्त कहाँ ?
मछुए की रागिनी का अन्त कहाँ ?
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुए के जाल में रूप की कहानियाँ
मछुआ भी मछली, मछली भी मछुआ !
कौन कहे कौन सुने कौन रोए, कौन हँसे ?
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुए के पुन हुआ सिर पे धरे जाल रे !
रो रहीं मछलियाँ हाल-बेहाल रे—
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुआ हो चाहे अभिनेता चलचित्र का
चाहे बनजारा संगीत गीत चित्र का
अभिनय है अभिनय है !
रस-वेदना की बात और चाँदनी की रात
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

बोल रही हो ।

तुम बड़ी शरारती हो जया !

हमारी मम्मी' भी शरारती है ।

जया प्लेटफार्म पर लट्टू की तरह घूम रही थी । तेज हवा जैसे उसी के साथ खेलने आई हो ।

दस वर्ष तक मैं जया के प्यार से वंचित रहा ! वह मन ही-मन पढ़ता रहा था । मुझसे बड़ा मूर्ख दूसरा न होगा !

सिगनल हो चुका था । उसी समय कुछ जान-पहचान चेहरे नजर आये । देनमुन नम्बूतिरिप्पाड और मुत्तु बाबा बाँह उठा उठाकर उसे रुक जाने का आग्रह कर रहे थे । पंचानन ने पास आकर पूछा आप जा रहे हैं गुरुदेव ? फिर कब आयेंगे ?

फिर न्हीं आयेंगे । जया बोल उठी ।

तो हम भी क्या नहीं बम्बई ले चलते ? पंचानन आँसू पोंछ रहा था ।

शशधरन के अन्तर की करुणा पिघल रही थी । मुत्तु बाबा की आँखों में भी आँसू आ गए । उसने चिल्लाकर कहा जल्दी लौटना शश बेटा !

शशधरन कुछ न बोला । उसने हाथ जोड़ दिए । उसके अन्तर में को जागरी या वादक याप लगा रहा था ।

जया प्रसन्न होकर ताली बजा रही थी ।

शश झटपट-से स्वर में जुहू की चाँदनी का गीत गाने लगा

जुहू की चाँदनी मछुए का जाल रे
मछुए की रागिनी उदासिनी ।
थक-थक चलो, मछलियो !
मिल के चलो मछलियो !

मिल क फसो मछलियो !
मछुए की रागिनो उदासिनी ।

गीत की गली में आज किसका भाग्य खो गया ?
लाज-सजी दुलहन का स्नेह-दीप सो गया !
जल की लहरों की थाप अभिलाषिनी
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

गीत की गली में आज आई नृत्य-बेला
गीत का है अन्त कहाँ ?
नृत्य का है अन्त कहाँ ?
मछुए की रागिनी का अन्त कहाँ ?
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुए के जाल में भूख की कहानियाँ
मछुआ भी मछली, मछली भी मछुआ !
कौन कहे कौन सुने कौन रोये, कौन हँसे ?
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुए के पुत्र हुआ सिर पे धरे जाल रे !
रो रही मछलियाँ हाल-बेहाल रे—
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

मछुआ हो चाहे अभिनेता चलचित्र का
चाहे बनजारा संगीत गीत चित्र का
अभिनय है अभिनय है !
दर-बदर की बात चाँद चाँदनी की रात
मछुए की रागिनी उदासिनी ।

देशमुख और नम्पूतिरिप्पाड मन्त्रमुग्ध से खड़े थे। जया चाहती थी कि कुहू की चाँदनी वाला गीत बराबर चलता रहे।

देशमुख बोला "मछुआ भी मछली, मछली भी मछुआ! यह तो बहुत अच्छा भाव है।"

गाड़ी आई तो घस जया को लेकर एक डिब्बे में जा बैठा।

जया प्रसन्न थी।

घस की आँखें भीग गई। वह कुछ न बोला।

गाड़ी ने विसल दी और चल पड़ी। घस ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। उसका प्रणाम पीछे छूट गया। गाड़ी बढ़ चली। गाड़ी के पहियों की आवाज भी मानो कोजागरी की थाप लगा रही थी।

घस वह चिट्ठी निकालकर पढ़ने लगा जो इरा छोड़ गई थी। उसने मन-ही-मन कहा "इरा! आखिर तुमने मुझे हरा ही लिया! तुम आदि शक्ति हो इरा! तुम दूध-गाछ हो!" यही सोचकर उसने जया को अपनी छाती से लगा लिया।